

महाभारत भाषा

आश्रमवास, मुशल, महाप्रस्थान और स्वर्गारोहणपर्व

जिसमें

पांडवों का अशकुन देखना, यदुवंशियों का नाश और पांडवों का स्वर्गगमन वर्णित है।

अनुवादक

पण्डित कालीचरण गौड़

मुद्रक और प्रकाशक

श्रीकेसरीदास सेठ

नवलकिशोर-प्रेस,

लखनऊ

सन् १९३१ ई०

चौथी बार]

...ाश्रमवासपर्व ।





श्रीनिकुञ्जविहारिणे नमः।

महाभारत भाषा आश्रमवासपर्व

मंगलाचरणम्।

श्लोक ॥ नव्याम्भोधरवृन्दवन्दितरुचिं पीताम्बरालंकृतं प्रत्यग्रस्फुटपुण्डरीकनयनं सान्द्रप्रमोदास्पदम् ॥ गोपीचित्तचकोरशीतकिरणं पापाटवीपावकं स्वाराण्मस्तकमाल्यलालितपदं वन्दामहे केशवम् १ या भाति वीणामिव वादयन्ती महाकवीनां वदनारविन्दे ॥ सा शारदा शारदचन्द्रबिम्बा ध्येयप्रभा नः प्रतिभां व्यनक्तु २ पाण्डवानां यशो वर्ष्म सकृष्णमपि निर्मलम् ॥ व्यधायि भारतं येन तं वन्दे बादरायणम् ३ विद्याविदग्रेसरभूषणेन विभूष्यते भूतलमद्य येन ॥ तं शारदालब्धवरप्रसादं वन्दे गुरुं श्रीसरयूप्रसादम् ४ विप्राग्रणीगोकुलचन्द्रपुत्रः स विज्ञकालीचरणाभिधानः॥ कथानुगं आश्रमवासपर्व भाषानुवादं विदधाति सम्यक् ५ ॥

पहिला अध्याय।

श्रीगणेश, नारायण और सरस्वती को नमस्कारपूर्वक 'जय' इतिहास कहता हूं १ पूर्व में अङ्ग उपांगों समेत ब्रह्मविद्या को समाप्त किया। उसमें भोग के त्याग द्वारा वनवासियों को शम, दम आदिक की प्राप्ति होती है। उसे ही धृतराष्ट्र के आचार द्वारा दिखलाकर प्रकट करते और उससे प्राप्त होने योग्य जीव-ईश्वर का तत्त्व अपूर्व चमत्कारों से दिखलाते हुए कथा प्रारम्भ करते हैं। जनमेजय ने पूछा कि मेरे

पितामह महात्मा पाण्डवों ने राज्य पाकर महात्मा धृतराष्ट्र से किस प्रकार उपकारपूर्वक बर्ताव किया, जिसके कि पुत्र और मंत्री मारे गये? रक्षा का आश्रय न रखनेवाले ऐश्वर्य से रहित राजा धृतराष्ट्र और यशस्विनी गान्धारी की क्या दशा हुई २ मेरे पूर्व पितामह पाण्डव कब तक राज्य करते रहे? इसे आप मुझसे कहिये ३ वैशम्पायन बोले कि जिनके शत्रु मारे गये, उन महात्मा पाण्डवों ने राज्य पा धृतराष्ट्र को अग्रवर्ती करके सब पृथ्वी का पालन पोषण किया ४ हे कौरवोत्तम! वह सञ्जय, बुद्धिमान् युयुत्सु और दासीपुत्र विदुर धृतराष्ट्र की सेवा करने लगे ५ पाण्डवों ने पन्द्रह वर्ष तक राज्य के सब कार्य राजा धृतराष्ट्र से पूछे और आज्ञानुसार सब काम किये ६ धर्मराज की आज्ञा से उन वीरों ने सदैव उनके चरणों को दण्डवत् कर राजा को प्रतिदिन हाज़िरी दी ७ मस्तक सूँघे हुए उन पाण्डवों ने राज्य के सब कार्य किये और कुन्ती भी गान्धारी के पास रहकर आज्ञानुसारिणी रही। द्रौपदी, सुभद्रा आदि पाण्डवों की सब स्त्रियों ने विधिपूर्वक उन दोनों सास ससुर के साथ अच्छा बर्ताव किया ८। ९ युधिष्ठिर ने राजाओं के योग्य बहुमूल्य वस्त्र, भूषण, पलँग और नाना प्रकार के भक्ष्य भोज्य सब पदार्थ १० धृतराष्ट्र को भेट किये। उसी प्रकार कुन्ती ने भी गान्धारी के साथ गुरुवृत्ति का बर्ताव किया ११ हे कौरव! विदुर, सञ्जय और युयुत्सु ने उस वृद्ध राजा की उपासना की जिसके कि सब पुत्र मारे गये थे १२ द्रोणाचार्य के साले, ब्राह्मणों में बड़े उत्तम धनुर्धर कृपाचार्यजी राजा के साथ प्रीति करनेवाले हुए १३ देवता, ऋषि, पितृ और राक्षसों की कथा कहते पुराण ऋषि भगवान् व्यासजी भी सदैव राजा के समीप रहे १४ फिर धृतराष्ट्र की आज्ञा से विदुरजी ने वे कर्म कराये जो धर्म व्यवहार संयुक्त थे १५ विदुरजी की श्रेष्ठ नीति से धृतराष्ट्र के अनेक अभीष्ट कार्य थोड़े ही धन से सामन्तों द्वारा प्राप्त होते थे। राजा धृतराष्ट्र ने वन्दियों को मुक्त किया और मारने योग्य मनुष्यों

को छोड़ा, परंतु राजा युधिष्ठिर ने कभी कुछ नहीं किया १६ । १७
फिर महातेजस्वी कौरवराज युधिष्ठिर ने विहार यात्राओं में सब अभीष्ट पदार्थ राजा धृतराष्ट्र को भेट किये १८ आरालक (शाकादि बनानेवाले), सूपकार (रसोई बनानेवाले), रागखांडूक (सोंठ, शर्करा युक्त पूप बनानेवाले) प्रभृति राजा धृतराष्ट्र के पास पहले कीं भाँति ही नियत रहे १९ पाण्डवों ने प्रतिदिन बहुमूल्य वस्त्र और नितनयी विविध फूलमालाएँ न्याय के अनुसार धृतराष्ट्र को भेट कीं २० मैरेयनामक आसव, मांस, मत्स्य, खाने पीने की वस्तुएँ और अपूर्व भोजन प्रथम ही की भाँति राजा को निवेदन किये २१ जो राजा लोग यहां वहां से आये, वे सब पूर्व की नाईं कौरवेन्द्र धृतराष्ट्र के पास वर्तमान हुए २२ कुन्ती, द्रौपदी, यशस्विनी सुभद्रा, नागकन्या उलूपी देवी, चित्राङ्गदा २३ धृष्टकेतु की बहिन और जरासन्ध की पुत्री आदि के सिवाय अन्य बहुतसी स्त्रियां २४ सेवा में नियत होकर गान्धारी के पास वर्तमान हुईं । और ऐसी सेवा की जिसमें कि पुत्रों से रहित धृतराष्ट्र किसी प्रकार दुःख न पावें २५ युधिष्ठिर ने भी सदैव अपने भाइयों को यही आज्ञा दी । भीमसेन को छोड़ तीनों पाण्डवों ने इस प्रकार धर्मराज का सार्थक वचन सुनकर २६ अधिकता से उपयोग किया परन्तु उस वीर भीमसेन के हृदय से वह बात दूर नहीं होती थी जो कि धृतराष्ट्र की दुर्मति से द्यूत के द्वारा उत्पन्न हुई थी २७ ॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि प्रथमोऽध्यायः १ ॥

दूसरा अध्याय ।

वैशम्पायन बोले कि इस प्रकार पाण्डवों से पूजित, ऋषियों के साथ बैठे हुए राजा धृतराष्ट्र ने पहले की भाँति विहार किया १ उन्होंने ब्राह्मणों के देने योग्य देवपूजा आदिक दीं, राजा युधिष्ठिर ने सबको विधि के अनुसार किया । दयावान्, प्रीतिमान्, राजा धर्मराज ने भाइयों और मंत्रियों से कहा २।३ कि राजा धृतराष्ट्र मुझसे और आप लोगों से

पूजन करने योग्य है। जो मनुष्य धृतराष्ट्र की आज्ञा में नियत रहता है, वह मेरा प्यारा है; उसके विपरीत कर्म करनेवाला मनुष्य मेरा विरोधी होकर दंड के योग्य होगा। पुत्रों के श्राद्ध में ४। ५ और सब ज्ञाति बांधव या नातेदारों के श्राद्ध में जितने कर्म करने की इनकी इच्छा हो, सब इन्हें करने दो। इसके पश्चात् बड़े साहसी राजा धृतराष्ट्र ने ६ ब्राह्मणों को, उनकी योग्यता के अनुसार, बहुत सा धन दिया। धर्मराज, भीमसेन, अर्जुन और नकुल सहदेव ने भी ७ उनके प्रिय करने की इच्छा से उनकी सब प्रकार की आज्ञाओं का पालन किया। पुत्र पौत्रों के मरने से पीड़ावान् वह वृद्ध राजा ८ उन्होंने यह विचार-कर बड़ी सावधानी से रक्षा की कि किसी प्रकार से भी हमारे शरीरों से उत्पन्न शोक से इन्हें कष्ट न पहुँचे। पुत्रों की जीवितावस्था में उस कौरव वीर को जितना सुख था ९ उससे कहीं अधिक अन्यान्य भोग उसने प्राप्त किये। सभी पाण्डवों का यही निश्चय था। इसी से उस प्रकार स्नेह भाव रखनेवाले वे पाचों पाण्डव मिलकर १० अच्छी रीति से धृतराष्ट्र की आज्ञा में रहे। धृतराष्ट्र भी उन सबको नम्रतायुक्त, नियम में नियत ११ और शिष्यता की रीति से युक्त देखकर गुरु के समान बर्ताव करने लगे। गांधारी ने भी पुत्रों के अनेक प्रकार के श्राद्धों में १२ वेदपाठी ब्राह्मणों को अभीष्ट वस्तुएँ देकर अऋणता प्राप्त की। इस प्रकार धर्मधारियों में श्रेष्ठ बुद्धिमान् युधिष्ठिर ने भाइयों समेत उस राजा का पूजन किया १३ वैशम्पायन बोले कि इसके पीछे महातेजस्वी कौरवकुल के पोषण करनेवाले वृद्ध राजा धृतराष्ट्र ने पाण्डुनन्दन युधिष्ठिर में कोई अप्रिय बात नहीं देखी १४ महात्मा पाण्डवों के शुभ रीतिकर्मी होने पर अम्बिका के पुत्र राजा धृतराष्ट्र प्रसन्न हुए १५ और सौबल की पुत्री गान्धारी भी उस पुत्रशोक को दूर कर सदैव ऐसी प्रसन्न हुई जैसे कि अपने पुत्रों पर रहती थीं १६ कौरवों के पोषक, पराक्रमी राजा युधिष्ठिर ने राजा धृतराष्ट्र के सब अभीष्ट ही किये १७

महाराज जनमेजय ! राजा धृतराष्ट्र और तपस्विनी गान्धारी दोनों जो कुछ छोटा बड़ा कार्य कहते थे, शत्रुओं के नाशक पाण्डवों के धुरन्धर राजा युधिष्ठिर उनके वचनों का आदर कर उस कार्य को कर देते थे १८।१६ राजा उनके इस व्यवहार से अत्यन्त प्रसन्न हुआ और अपने निर्बुद्धि पुत्र दुर्योधन का स्मरण करके पश्चात्ताप किया करते । प्रातःकाल के समय उठकर, स्नान जपादिक से निवृत्त राजा धृतराष्ट्र सदैव पाण्डवों को आशीर्वाद दिया करते कि युद्धों में इनकी विजय हो २०।२१ राजा ने ब्राह्मणों से स्वस्तिवाचनपूर्वक अग्नि में हवन करके पाण्डवों की दीर्घायु चाही २२ उस समय राजा धृतराष्ट्र ने पाण्डवों से जैसी प्रसन्नता पाई वैसी कभी अपने पुत्रों से न पाई थी २३ और वह जैसे ब्राह्मण और क्षत्रियों के प्यारे थे वैसे ही वैश्य और शूद्रों के समूहों को भी प्रिय थे २४ उस समय धृतराष्ट्र के पुत्रों के पापों को हृदय से भूलकर राजा युधिष्ठिर धृतराष्ट्र के आज्ञाकारी हुए २५ राजा धृतराष्ट्र का अप्रिय करनेवाला मनुष्य बुद्धिमान् युधिष्ठिर की शत्रुता प्राप्त करता था २६ किसी भी मनुष्य ने युधिष्ठिर के भय से राजा धृतराष्ट्र और दुर्योधन के बुरे कर्मों का उल्लेख नहीं किया २७ हे शत्रु-ञ्जय ! गान्धारी और विदुर महाराज युधिष्ठिर के बाहरी-भीतरी धैर्य और पवित्रता से प्रसन्न हुए परन्तु भीमसेन के गुणों से अप्रसन्न रहे २८ निश्चय करनेवाले धर्मपुत्र भी राजा धृतराष्ट्र के इच्छानुसार कर्म करते और उन्हें देखकर सदैव चित्त से दुखी होते थे २६ शत्रुओं का विजय करनेवाला, हृदय से हारा हुआ धृतराष्ट्र उस अपने आज्ञाकारी धर्म-पुत्र राजा युधिष्ठिर के समान कर्म किया करता था ३० ॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि द्वितीयोऽध्यायः २ ॥

तीसरा अध्याय ।

वैशम्पायन बोले कि सम्पूर्ण राज्य में मनुष्यों ने राजा युधिष्ठिर और दुर्योधन के पिता की प्रीति में अन्तर नहीं देखा १ जब जब कौरव राजा

धृतराष्ट्र अपने दुर्बुद्धि पुत्र को याद करते तब तब हृदय से भीमसेन को गालियां दिया करते थे २ हे राजन्! उसी प्रकार भीमसेन ने भी सदैव विरुद्धचित्त से राजा धृतराष्ट्र को नहीं सहा ३ भीमसेन ने गुप्त रूप से इसके अप्रिय कर्म किये और राजसेवकों के द्वारा इसकी आज्ञाओं को भी विपरीत कराया ४ फिर उसके दुराचार और बुरे चलनों का स्मरण कर भीमसेन ने सुहृज्जनों के बीच भुजा का शब्द किया ५ क्रोधयुक्त, अशान्तचित्त भीमसेन ने अपने शत्रु दुर्योधन, कर्ण और दुश्शासन की याद कर धृतराष्ट्र और गान्धारी को सुनाते हुए ६ कहा कि परिघ के समान भुजा रखनेवाले मैंने अन्धे राजा के नाना प्रकार के शस्त्रों से लड़नेवाले सब पुत्रों को ७ परलोक में पहुँचाया। मेरी ये दोनों भुजाएँ परिघरूप महादुर्जय हैं ८ जिन दोनों भुजाओं के मध्य को पाकर धृतराष्ट्र के पुत्रों का नाश हुआ, और जिनके द्वारा पुत्र और बान्धवों समेत दुर्योधन नाश किया गया; वे पूजने के योग्य चन्दन से चर्चित हैं ९ हे राजन्! ऐसे ऐसे अनेक बाणरूप वचन उसने कहे १० भीमसेन के ये वचन सुनकर धृतराष्ट्र को वैराग्य हुआ। उस बुद्धिमती, समय की लौटपौट को जानने वाली ११ सर्वधर्मज्ञ गान्धारी ने उन अप्रिय वचनों को सुना और पन्द्रहवां वर्ष व्यतीत होने पर १२ भीमसेन के वचनरूपी बाणों से पीड़ित राजा धृतराष्ट्र को वैराग्य हुआ परन्तु कुन्ती के पुत्र राजा युधिष्ठिर ने यह कुछ भी नहीं जाना १३ अर्जुन, कुन्ती, यशस्विनी द्रौपदी और धर्मज्ञ नकुल सहदेव राजा के चित्त की इच्छा के समान कर्म करते थे १४ राजा के चित्त की रक्षा करते हुए उन लोगों ने कुछ अप्रिय कभी नहीं कहा। फिर धृतराष्ट्र ने अपने भाई बन्धु, नातेदार आदि का अच्छी रीति से पूजन किया १५ और नेत्रों में आँसू भर-कर शोकयुक्त हो उनसे कहा कि यह तो आपको विदित ही है कि जिस प्रकार से कौरवों का नाश हुआ १६ उस सब नाश को कौरवों

ने मेरे ही अपराध से जाना है जो मुझ निर्बुद्धि ने उस दुर्बुद्धि, बिरादरी के भय की वृद्धि करनेवाले दुर्योधन का कौरवीय राज्य पर अभिषेक कराया; जो मैंने वासुदेवजी के उन सार्थक वचनों को नहीं सहा कि "अच्छा हो यदि यह निर्बुद्धि पापी दुर्योधन मन्त्रियों समेत बन्धन में किया जाय" १७। १८ और विदुर, भीष्म, द्रोणाचार्य एवं कृपाचार्य प्रमुख ज्ञानियों ने भी पुत्र की प्रीति में फँसे हुए मुझसे अनेक हितकारी वचन कहे १९ और प्रत्येक स्थान में महात्मा व्यास, संजय तथा गान्धारी ने भी मुझे समझाया। वे ही बातें अब मुझे दुःखदायक होकर पश्चात्ताप कराती हैं २० यह बात मुझको दुःख देती है कि मैंने बाप दादों की यह प्रकाशमान् सम्पत्ति महात्मा पाण्डवों को नहीं दी २१ उस दुःखदायक सब राजाओं के होनेवाले विनाश को जानकर श्रीकृष्णजी ने इस राज्य के विभाग हो जाने को बहुत कल्याणरूप माना २२ मैं इन भूतकाल के शूलरूपी, अपने किये हुए हज़ारों दोषों को अपने हृदय में धारण करता हूं २३ अब पन्द्रहवें वर्ष में अधिकतर देखता हूं। इस हेतु मैं दुर्बुद्धि इस पाप की शुद्धि के लिये नियम करनेवाला हूं २४ चौथे दिन और कभी कभी आठवें दिन भी इतना ही भोजन करता हूं कि जिससे केवल क्षुधा-तृषा शान्त हो और शरीर बना रहे। गान्धारी मेरे उस व्रत को जानती है २५ सब भाई, बन्धु, नातेदार युधिष्ठिर के भय से यही जानते हैं कि यह सदैव भोजन करता है क्योंकि मेरा भूखा रहना सुनकर वह युधिष्ठिर अत्यन्त शोच करता है २६ मैं जप में प्रवृत्त हो नियम के बहाने पृथ्वी पर मृगचर्म के आसनों पर सोता हूं और यही हाल यशस्विनी गान्धारी का भी है २७ हम दोनों के युद्ध में मुख न मोड़नेवाले सौ पुत्र मारे गये। मैं उनका शोच नहीं करता हूं क्योंकि उसको क्षत्रियधर्म जाना है २८ यह कहकर कौरव धृतराष्ट्र ने धर्मराज से कहा कि हे कुन्ती के पुत्र! तुम्हारा कल्याण हो। तुम मेरे इस वचन को समझो २९

हे पुत्र ! तुमसे सेवा किया हुआ मैं सुख से ठहरा हुआ हूं और बारंबार बड़े बड़े दान और श्राद्ध भी मैंने किये ३० हे पुत्र ! मैंने बलि के समान बड़ा सुकृत प्राप्त किया है । यह गांधारी, जिसके सौ पुत्र मारे गये हैं, धैर्य से मेरी ओर देखती है ३१ द्रौपदी के अप्रिय करनेवाले और तुम्हारा ऐश्वर्य हरनेवाले वे सब निर्दयी समाप्त हुए, युद्ध में अपने धर्म से मारे गये ३२ हे कौरवनन्दन ! उन्हीं के विषय में प्रायश्चित्तादिक कर्म नहीं देखता हूं क्योंकि सम्मुख युद्ध करनेवाले वे सब शस्त्रों से विजय किये हुए लोकों को गये ३३ हे राजेन्द्र ! अब अपना और गांधारी का हित करनेवाला पवित्र कर्म करने के योग्य है । तुम आज्ञा देने योग्य हो ३४ तुम धर्मधारियों में श्रेष्ठ और सदैव धर्मवत्सल हो; प्राणियों के राजा और गुरु हो । इसीलिये मैं कहता हूँ ३५ हे वीर ! इस गान्धारी समेत मैं चीरवल्कलधारी होकर तुम्हारी आज्ञा से वनों में निवास करूंगा ३६ हे भरतर्षभ, तात, युधिष्ठिर ! मैं तुझको आशीर्वाद देता हुआ वनचारी होऊंगा । हमारे कुल में, वृद्धावस्था में ऐसा वनवास करना सभी को योग्य है ३७ कि अवस्था के अन्त समय अपने पुत्रों को ऐश्वर्य देकर वन को जायँ । हे राजन् ! वहां जाकर मैं वायुभक्षी अथवा निराहार होकर भी निवास करता हुआ ३८ अपनी पत्नीसमेत उत्तम तप करूंगा । हे वीर पुत्र ! तुम भी तपस्या का फल पाओगे, क्योंकि राजा हो और राजा लोग प्रजा के शुभाशुभ कर्म के फलभागी हैं ३९ युधिष्ठिर ने कहा हे राजन् ! आपके इस प्रकार दुःखी होने पर राज्य से मुझको आनन्द नहीं होता है । मुझ अत्यन्त दुर्बुद्धि अचेत और राज्य में प्रवृत्तचित्त को धिकार है ४० जो मैं भाइयोंसमेत इस दुःख से पीड़ित, व्रत करने से अत्यन्त दुर्बल, क्षुधा के जीतनेवाले और पृथ्वी पर सोनेवाले को नहीं जानता ४१ पश्चात्ताप है कि मैं अज्ञानी गंभीर बुद्धिवाले तुम से ठगा गया । प्रथम मुझे विश्वास देकर इस दुःख को भोगते हो ४२ हे राजन् ! मुझको राज्य, भोग,

यज्ञ और सुख से क्या प्रयोजन है ? आप सरीखे मेरे वृद्ध ने ये दुःख पाये ४३ हे राजन् ! तुम दुखिया के इन वचनों से सम्पूर्ण राज्यसमेत अपनी आत्मा को भी पीड़ित जानता हूं ४४ आप पिता हो, माता हो और हमारे परम गुरु हो । आपसे पृथक् होकर हम कहां रहेंगे ४५ हे राजाओं में बड़े साधु ! आपका औरस पुत्र युयुत्सु है, हे महाराज ! वह राजा हो, या आप जिसे चाहते हों, वह राजा किया जाय ४६ मैं वन को जाऊंगा, आप राज्य में राजशासन करो । अपकीर्ति से भस्म होनेवाले मुझको आप भस्म करने के योग्य नहीं हो ४७ मैं राजा नहीं हूं, राजा आप ही हैं। मैं आप से सनाथ हूं, मैं तुम धर्मज्ञ गुरु को आज्ञा देने का उत्साह कैसे कर सकता हूं ४८ हे निष्पाप ! हमारे हृदय में दुर्योधन की ओर से कुछ भी क्रोध नहीं है । वह वैसी ही होनी थी । हम और अन्य सभी लोग मोह में अचेत होगये ४९ हम आपके वैसे ही पुत्र हैं जैसे कि दुर्योधनादिक थे । मेरे मत से गांधारी और कुन्ती में किसी प्रकार का भी भेद नहीं है ५० हे राजेन्द्र ! जो आप मुझको छोड़कर जाओगे, तो शपथ से कहता हूं कि मैं आपके पीछे पीछे चलूंगा ५१ धन से पूर्ण, सागररूप मेखला रखनेवाली यह पृथ्वी आपसे जुदे होने पर मुझे प्रसन्नता न देगी ५२ हे राजेन्द्र ! यह सब आपका है, मैं आपको हृदय से प्रसन्न करता हूं । हम आपके आधीन हैं, आपके चित्त का सन्ताप दूर हो ५३ हे राजन् ! मैं मानता हूं कि तुमने होनहार को प्राप्त किया; मैं प्रारब्ध से आपकी सेवा कर चित्त के ताप को दूर करूंगा ५४ धृतराष्ट्र बोले कि हे कौरवनन्दन, प्रभु, युधिष्ठिर ! मेरा चित्त तप में प्रवृत्त है और वन में जाना हमारे कुल के योग्य है ५५ हे पुत्र ! मैंने बहुत काल तक निवास किया और तुमने भी मुद्दत तक खूब सेवा की । हे राजन् ! तुम मुझ वृद्ध को आज्ञा देने योग्य हो ५६ वैशम्पायन बोले कि उन कम्पायमान और आशीर्वाद देने के लिये अञ्जलि करनेवाले राजा धृतराष्ट्र ने धर्मराज से यह कह-

कर ५७ महा[illegible]थी कृपाचार्य और सञ्जय से भी यही कहा कि मैं आप दोनों के द्वार[illegible] राजा युधिष्ठिर को समझाया चाहता हूं ५८ बड़ी अवस्था और [illegible]लाप करने से मेरा चित्त म्लान होता है और मुख सूखता है ५९ [illegible]मान् धर्मात्मा वृद्ध राजा धृतराष्ट्र ने यह कहकर अकस्मात् नि[illegible] के समान हो गान्धारी का सहारा लिया ६० शत्रुओं के विजय करनेवाले राजा युधिष्ठिर ने राजा को अचेत देखकर बड़ा कठिन कष्ट पाया ६१ युधिष्ठिर बोले कि जिनका बल-पराक्रम साठ हज़ार हाथी के समान था, वही राजा स्त्री के सहारे शयन करते हैं ६२ जिन्होंने पूर्व समय में भीमसेन की खालिस लोहे की मूर्ति को चूर्ण कर डाला, वे अबला स्त्री के आश्रय में हैं ६३ मुझ धर्म से अज्ञान रहनेवाले को धिक्कार है। मेरी बुद्धि और ज्ञान को धिक्कार है जिसके कारण से राजा इस दशा में शयन करते हैं ६४ मैं भी इन्हीं के समान उपवास करूंगा जैसा कि ये मेरे गुरु करते हैं। राजा धृतराष्ट्र और यह यशस्विनी गान्धारी भोजन नहीं करती हैं तो मैं भी भोजन त्याग दूंगा ६५ वैशम्पायन बोले कि हे राजा जनमेजय! इसके अनन्तर धर्मज्ञ राजा युधिष्ठिर ने शीतल जल और हाथ से उनकी छाती और मुख को धीरे धीरे स्पर्श किया ६६ राजा युधिष्ठिर के रत्न, औषधियों से युक्त पवित्र और सुगन्धित हाथ के स्पर्श से राजा धृतराष्ट्र सचेत हुए ६७ धृतराष्ट्र बोले हे कमललोचन पाण्डव! तुम हाथ से मुझको फिर स्पर्श करके मिलो। मैं तुम्हारे अत्यन्त स्पर्श से सजीव होता हूं ६८ हे राजन्! मैं हाथों से तुमको स्पर्श करता हुआ तुम्हारे मस्तक को सूंघना चाहता हूं; इसमें मुझे बड़ा आनन्द है ६९ हे कौरवों में श्रेष्ठ! अब आहार त्यागे आठवाँ दिन है, जिससे मैं अधिक चेष्टा करने में समर्थ नहीं हूं ७० तुमसे प्रार्थना कर मैंने यह कठिन परिश्रम किया है। हे तात! इसी हेतु निर्बल चित्त होकर मैं अचेत सा होगया हूं ७१ हे कौरवकुल के उद्धार करनेवाले, समर्थ युधिष्ठिर! मैं मानता हूं कि अमृत

रस के समान तेरे इस हाथ के स्पर्श से मैं सजीव हो गया हूं ७२ वैशम्पायन बोले कि हे भरतवंशिन्! ताऊ की इन बातों को सुनकर युधिष्ठिर ने पिता की सी प्रीति से उनके सब अंगों को बड़े धीरे धीरे स्पर्श किया ७३ फिर राजा धृतराष्ट्र ने सावधान होकर युधिष्ठिर को भुजाओं से अपनी बगल में लेकर मस्तक सूंघा ७४ तब अत्यन्त दुःखी होकर विदुरादिक रोने लगे और बड़े दुःख से राजा युधिष्ठिर को कुछ नहीं कहा ७५ हे राजन्! चित्त में कठिन दुःख पानेवाली, धर्मज्ञ गान्धारी ने उन दुःखों को सहकर कहा कि इस प्रकार से दुःखी न होना चाहिए ७६ कुन्ती समेत दुःखी अन्यान्य स्त्रियां आंसुओं से नेत्र भरे उसको घेरकर चारों ओर नियत हुईं ७७ धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर से फिर कहा हे भरतवंशियों में श्रेष्ठ, राजा युधिष्ठिर! मुझे आज्ञा दो, मैं तप करूंगा ७८ हे तात! बारम्बार वार्तालाप करने से मेरा चित्त भयभीत होकर उचटता है। हे पुत्र! अब इसके पीछे तुम मुझे दुःख देने के योग्य नहीं हो ७९ युधिष्ठिर से उन कौरवेन्द्र के यह कहने पर सब जीवधारियों के बड़े दुःखकारी शब्द उत्पन्न हुए ८० धर्मपुत्र युधिष्ठिर ने इस दशा के अयोग्य, विपरीतरूप, दुर्बल, व्रत से अत्यन्त क्षीण केवल अस्थिचर्मयुक्त शरीर, महाप्रभु अपने ताऊ को देख शोक के आंसू गिराते हुए कहा ८१। ८२ हे परन्तप, नरोत्तम, राजा धृतराष्ट्र! मैं अपने जीवन और सम्पूर्ण पृथ्वी के राज्य को उतना नहीं चाहता हूं जितना कि आपका प्रिय करना चाहता हूं ८३ जो मैं पोषण के योग्य हूं और आपका प्यारा भी हूं तो भोजन कीजिये; इसके पीछे आपकी दूसरी बातों को जानूंगा और सुनूंगा ८४ तब महातेजस्वी धृतराष्ट्र ने कहा कि हे बेटा! मैं चाहता हूं कि तेरी आज्ञा से भोजन करूं ८५ महाराज धृतराष्ट्र के युधिष्ठिर से इस प्रकार कहने पर सत्यवती के पुत्र व्यासऋषि ने सम्मुख आकर यह कहा ८६॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि तृतीयोऽध्यायः ३॥

चौथा अध्याय।

व्यासजी बोले कि हे महाबाहु, कौरवनन्दन युधिष्ठिर! महातेजस्वी धृतराष्ट्र ने जो कहा है, उसमें किसी प्रकार का विचार न कर उसे करो १ यह राजा वृद्ध है, मुख्यकर इसके पुत्र मारे गये; मेरी समझ में यह ऐसे ऐसे दुःखों को नहीं सह सकेगा २ महाराज! यह ज्ञानवती, दयालुचित्त, भाग्यवती गान्धारी भी अपने पुत्रों के कठिन शोकों को बड़े धैर्य से सहती है ३ मैं भी तुमसे यही कहता हूं। तुम मेरी बात मानकर इसे आज्ञा दे दो नहीं तो यह यहीं व्यर्थ मर जायगा ४ यह राजा प्राचीन राजर्षियों की सी गति पावेगा। अवस्था के अन्त पर सब राजर्षियों को वनवास होता है ५ वैशम्पायन बोले, तब अपूर्वकर्मा व्यास से इस प्रकार शिक्षा पाकर महातेजस्वी धर्मराज ने महामुनि को उत्तर दिया ६ कि भगवन्! आप ही हमारे बड़े हैं, आप ही हमारे गुरु हैं और आप ही इस राज्य और कुल के रक्षाश्रय हैं ७ मैं आपका पुत्र हूं। भगवन्! आपही मेरे पिता, राजा और गुरु हैं। पिता की आज्ञा पर चलनेवाला मनुष्य ही धर्म से पुत्र होता है ८ वेदज्ञों में श्रेष्ठ, महातेजस्वी, महाकवि व्यासजी ने युधिष्ठिर से फिर कहा कि ९ हे महाबाहो! यह इसी प्रकार है जैसा कि तुम कहते हो परन्तु यह राजा वृद्ध है और उपनिषद् मत में नियत है १० सो मेरी और तुम्हारी—दोनों की आज्ञा से इसे अपने चित्त का अभीष्ट करने दो; तुम इसके विघ्नकर्ता मत बनो ११ हे युधिष्ठिर! राजर्षियों का परमधर्म यही है कि युद्ध में अथवा वन में विधि के अनुसार अपना शरीर त्यागें १२ हे राजेन्द्र! यह राजा धृतराष्ट्र तुम्हारे पिता राजा पाण्डु से पूजन किया जाता था और वे शिष्यता की रीति से धृतराष्ट्र को अपने गुरु के समान उपासना करते थे १३ तुम लोगों ने रत्नों के पहाड़ों से शोभायमान दक्षिणावाले यज्ञों से पूजन किया, पृथ्वी को भोगा और प्रजा का पालन किया १४ तुम्हारे वनवासी होने पर

धृतराष्ट्र ने पुत्र की स्वाधीनता में होकर इस बड़े राज्य को तेरह वर्ष तक भोगा और नाना प्रकार का धन दान किया १५ हे निष्पाप, नरोत्तम! भृत्यादिकों समेत तुमने गुरुसेवा से राजा धृतराष्ट्र और यशस्विनी गान्धारी की आराधना की १६ अब अपने ताऊ की आज्ञा मानो क्योंकि यह समय तप करने का है। इसकी कोई अल्पमृत्यु भी वर्तमान नहीं है १७ इतना कह, राजा को आशीर्वाद दे और राजा युधिष्ठिर से यह कहलाकर कि 'ऐसा ही होगा' व्यासजी वन को चले गये १८ भगवान् व्यासदेव के चले जाने पर झुके हुए राजा युधिष्ठिर ने वृद्ध ताऊ से कहा १९ कि व्यासजी ने जो कहा और जो आपके चित्त की इच्छा भी है और जिस प्रकार बड़े धनुर्धर कृपाचार्य, विदुर, युयुत्सु और सञ्जय ने भी कहा है; मैं शीघ्र ही उसे करूँगा। इस कुल की वृद्धि चाहनेवाले आप सब लोग मुझसे पूजन के योग्य हैं २०।२१ हे राजन्! शिर झुकाकर मैं आपसे यह प्रार्थना करता हूं कि जब तक आप आश्रम को न जायँ तबतक आहार पानादिक करते रहें २२ ॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि चतुर्थोऽध्यायः ४ ॥

पाँचवाँ अध्याय।

वैशम्पायन बोले कि राजा युधिष्ठिर से बिदा किये हुए प्रतापी राजा धृतराष्ट्र, जिनके पीछे गान्धारी थीं, अपने महल को गये १ वृद्ध गजराज की भांति शिथिलेन्द्रिय, बुद्धिमान् राजा धृतराष्ट्र बड़े कष्ट से पैर उठाते हुए चले २ ज्ञानी विदुर, सूतसञ्जय और बड़े धनुर्धर शारद्वत कृपाचार्य भी पीछे पीछे चले ३ हे राजन्! महल में प्रवेश कर दिन के प्रथम भाग की सन्ध्यादिक क्रियाएँ कर तथा उत्तम ब्राह्मणों को तृप्त करके उन्होंने भोजन किया ४ हे भरतवंशिन्! सेवकों की सेवा से पूजित, धर्मज्ञ सावधानचित्त गान्धारी ने भी कुन्ती और सब बन्धुओं समेत भोजन किया ५ भोजन करनेवाले उन सब विदुर आदिक पाण्डवों ने भी भोजन से निवृत्त हुए राजा धृतराष्ट्र को हाज़िरी

दी ६ इसके पीछे पास बैठे हुए युधिष्ठिर की पीठ पर हाथ फेरकर धृतराष्ट्र ने कहा कि ७ हे राजर्षभ कौरवनन्दन ! जिसमें धर्म मुख्यता से है उस आठ अङ्ग (स्वामी अमात्यादिक से) युक्त राज्य के मध्य में तुमको सब दशा में सावधानी करनी उचित है ८ हे युधिष्ठिर ! वह रक्षा राजधर्म से होनी सम्भव है । तुम बुद्धिमान् हो, उसको समझो ९ तुम सदैव उनकी उपासना करो जो विद्या से वृद्ध हैं । वे जो आज्ञा दें उसको सुनो और विना विचार किये उसका पालन करो १० प्रातःकाल उठकर बुद्धि के अनुसार उनका पूजनकर कर्म का समय होने पर अपना कार्य उनसे पूछो । तुम इच्छावान् सफल कर्मी से पूजित होकर वे करने के योग्य कर्म बतलावेंगे । हे भरतवंशिन् ! वह धर्म सब दशा में तुम्हारे अभीष्ट का दाता है ११ । १२ सब इन्द्रियों की घोड़े के समान रक्षा करो । वे तेरे मनोरथ सिद्ध करने के कर्म ऐसे करें जैसे कि बाप दादों से प्राप्त रक्षित धन १३ छलहीन, पवित्र जन्म, शिक्षा-युक्त, पवित्र मन्त्रियों को सब अधिकारों पर नियत करो १४ शत्रुओं से परोक्ष होकर अपने देशवासी सुपरीक्षित दूतों से समाचार मँगवाओ १५ तुम्हारा नगर सब दिशाओं में दृढ़ प्राकार, तोरण और नगर के बाहरी द्वार से युक्त अट्ट, अट्टालिकाओं से सम्बन्धित उत्तम स्थानों समेत श्रेष्ठ रीति से रक्षित हों १६ उसके सब बड़े बड़े द्वार सब दोषों से रहित सब ओर से शोभायमान रचना और उपायों से रक्षित हों ! कुल और स्वभाव में परीक्षा किये हुए मनुष्यों से तेरे राज्य के कार्य शोभा पावें । हे भरतवंशिन् ! भोजनादिक में सदैव अपना शरीर रक्षा के योग्य है १७ । १८ विश्वस्त वृद्ध पुरुषों के आधीन तुम्हारी स्त्रियां विहार, भोजन और पुष्प शय्या आदिकों पर निवास करने के समय भी भलीभाँति रक्षित हों १९ हे युधिष्ठिर ! सुन्दर स्वभाव के ज्ञानी और कुलीन ब्राह्मणों को मन्त्री बनाओ । जो ब्राह्मण पण्डित, विद्यावान्, शान्त-प्रकृति, कुलीन, धर्म, अर्थ में सावधान और सत्यवक्ता हों तुम उनके

साथ सलाह करो, बहुत से मनुष्यों से मत करो—किसी बहाने से सब मन्त्रियों समेत अच्छे सुरक्षित विचारालय में अथवा किसी स्थल में नियत होकर प्रत्येक के साथ सलाह करो २०। २२ वृक्षादिकों से रहित वन में सलाह करो परन्तु रात्रि के समय कभी सलाह मत करो। बन्दर, पक्षी और जो दूत मनुष्य अथवा विक्षिप्त और कुटिल मनवालों को सलाह करने के स्थान में न बुलाना चाहिए। राजाओं के मन्त्र भेद में जो दोष होते हैं, वे किसी प्रकार से भी दूर नहीं हो सकते, यह मेरा मत है। तुम मन्त्रियों के मण्डल में मन्त्र भेद के दोषों को वर्णन करो २३। २५ हे शत्रुविजेता, राजा युधिष्ठिर! मन्त्र भेद न होने के गुणों को बारम्बार वर्णन करो। पुरवासियों और देशवासियोंके शौचाशौच जैसे विदित हों उसी प्रकार व्यवहार करना चाहिये। हे कौरव! तुम्हारा व्यवहार सदैव विश्वस्त सेवकों की आधीनता में हो। हे युधिष्ठिर! तेरे कार्यकर्ता न्याय के अनुसार अपराध के परिमाण को जानकर अपराधियों पर दण्ड नियत करें २६। २७ आदानी (रिशवतख़ोर) दूसरे की स्त्री से कुकर्म करनेवाले २८ कठिन दण्ड को उत्तम जाननेवाले, अधिकारी न्याय विरोधी (क़ानून से विपरीत बातें करनेवाले) अपकीर्ति देनेवाले आदि लोभी, चोर, बे सोचे समझे काम करनेवाले २९ सभा और विहारस्थानों के बिगाड़नेवाले, वर्णों के बिगाड़नेवाले ये सब मनुष्य देश, काल के अनुसार हिरण्यदण्ड (जुर्माना) और मारने का दण्ड देने योग्य हैं ३० प्रातःकाल ही ख़ज़ाने के रक्षकों को देखो, फिर भोजन करो और पोशाक आदि से शरीर अलंकृत करो ३१ इसके पीछे सबको प्रसन्न करते हुए तुम सेना के लोगों को सदैव देखा करो। तेरे दूत और जासूसों के देखने का समय प्रदोष काल हो ३२ सदैव रात्रि के पिछले पहर में कार्यार्थ का निर्णय और मध्य रात्रि में विहार हो ३३ हे भरतर्षभ! करने के योग्य कर्मों के सब समय युक्ति और उपायों से प्राप्त हैं। इसी प्रकार राज्य की पोशाकों से अलंकृत होकर

समय पर अपने राज्यसिंहासन पर बैठो ३४ हे तात! राज्य के कार्यों का क्रम और अवकाश सदैव चक्र के समान दृष्टि पड़ता है। महाराज! तुम सदैव न्याय के अनुसार नाना प्रकार के खज़ाने इकट्ठे करने का उपाय करो ३५ और विपरीत कर्म त्यागो। जो मनुष्य राजाओं के छिद्र चाहनेवाले और शत्रु हैं दूतों के द्वारा उनका भेद लेकर ३६ विश्वस्त मनुष्यों के द्वारा दूर से ही उन्हें मरवा दो। हे कौरव! तुम कर्म देखकर सेवकों को नियत करो ३७ न्याय से कर्म करनेवाले अधिकारियों से राज्य के कार्य पूरे कराओ। तुम्हारी सेना का अधिपति दृढ़व्रत रखनेवाला ३८ शूर, दुःख सहनेवाला, शुभचिन्तक और भक्त मनुष्य हो। हे पाण्डव! सब देशवासी कारीगर आदिक तुम्हारे कर्मों को शीघ्रतापूर्वक अपने धन के अनुसार करें। अपने नौकर-चाकर और शत्रुओं में अपना और शत्रु का छिद्र ३९। ४० तुमको सदैव देखना योग्य है। अपने कर्मों के उद्योगी देशवासी शुभचिन्तक मनुष्यों की ४१ उचित उपायों से तुम चेंटी के समान रक्षा और कृपा किया करो। हे राजन्! ज्ञानी राजा को गुणग्राही मनुष्यों का गुण प्रकट करना उचित है। पर्वत के समान अपने कर्म पर उन लोगों का नियत करना तुमको उचित है ४२। ४३॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि पञ्चमोऽध्यायः ५॥

छठा अध्याय।

धृतराष्ट्र बोले कि हे भरतर्षभ! अपने और शत्रुओं के सब मण्डल (मित्र, मध्यस्थ और उदासीनों के मण्डलों) को जानो १ हे शत्रुओं को जीतनेवाले! अपने शत्रु की ओर के शत्रु मित्रादिक चार राजाओं को भी जानो। मित्र और उसका मित्र भी तुमको जानना योग्य है। उसी प्रकार मन्त्री, देश, नाना प्रकार के गढ़ और सेनाएँ भी जानने योग्य हैं क्योंकि उनका विरोधादिक इच्छा के समान होता है २। ३ हे कुन्ती के पुत्र! राजाओं के विषयरूपी विरोधादिक बारह हैं और मन्त्रिप्रधान

गुण बहत्तर हैं ४ नीति के पूर्ण ज्ञाताओं ने इसे मण्डल कहा है । उनमें राज्य की रक्षा के छः उपाय हैं । उसे समझना भी योग्य है ५ हे महाबाहो ! वृद्धि, क्षय और स्थान उन बहत्तर गुणों के द्वारा जानने के योग्य हैं । राज्य की रक्षा से उत्पन्न उपायों से छः गुण जानने योग्य हैं ६ जब अपना पक्ष प्रबल और शत्रु का निर्बल हो तब उससे विरोध कर राजा विजय पाने के योग्य है ७ जब शत्रु प्रबल और अपना पक्ष निर्बल हो तब बुद्धिमान् निर्बल राजा शत्रुओं से सन्धि करे । इसी प्रकार द्रव्यों का समूह सञ्चय करना योग्य है । हे भरतवंशिन् ! जब चढ़ाई के लिये समर्थ हो तब थोड़े ही समय में ८ । ९ सब कर्म पूरे करना योग्य है । राजा अपने निवास से ही उसे विचारे । शत्रु को वह पृथ्वी देनी चाहिये जिसमें कि बहुत सी पैदावारी हो । आप सन्धि में सावधान राजा शत्रु से सुवर्णादि बहुतसी धातुएँ और युद्ध में नष्ट हुए अपने मित्र, हाथी और घोड़ों का बदला ले १० । ११ हे भरतर्षभ ! सन्धि के विश्वास के लिये शत्रु के राजकुमार को अपने पास ठहरा ले । इसके विपरीत करना वृद्धिदायक नहीं—वह किसी आपत्ति में फँसाता है १२ उपाय समेत सलाह जाननेवाला राजा उस प्राप्त हुई आपत्ति को दूर करने का उपाय भी करे । हे राजेन्द्र ! प्रजा में जो अन्धे, बधिर, मूकादिक हों, उनका राजा पोषण करे १३ बड़ा बलवान् राजा क्रम क्रम से अथवा एकही समय में सब निश्चय करे और अपने राज्य के रक्षक राजा उपायपूर्वक शत्रुओं को पीड़ा दे, पकड़ ले और ख़ज़ाने की बरबादी करे । वृद्धि चाहनेवाले राजा के आश्रित होनेवाले शूरवीर मारने के योग्य नहीं हैं १४ । १५ हे कुन्ती के पुत्र ! जो राजा सम्पूर्ण पृथ्वी भर को विजय किया चाहता है, वह अपने शरणागतों को न मारे । तुम मंत्रियों समेत शत्रुओं के समूहों में परस्पर विरोध फैलाने के उपाय करो १६ इसी प्रकार उत्तम कर्मवालों के पोषण करने और अपराधियों को दण्ड देने का प्रबन्ध करो ।

बलवान् राजा की ओर से निर्बल शत्रु भी उपेक्षा के योग्य नहीं है १७ हे राजेन्द्र! तुम बेत वृक्ष की रीति पर निवास करो। अपने से अधिक बलवान् राजा के सम्मुख आने पर १८ क्रमशः सामादिक उपायों से उसे लौटाना चाहिये। सन्धि करने में असमर्थ राजा मन्त्री, खज़ाना, पुरवासी, सेना और अपने हितैषियों को साथ ले युद्ध के लिये प्रस्थान करे। उन सबके न होने पर केवल शरीर ही से युद्ध के लिये नियत हो। इस रीति से शरीर त्यागने पर देह की मुक्ति होती है १९। २० ॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि षष्ठोऽध्यायः ६ ॥

सातवाँ अध्याय।

धृतराष्ट्र बोले हे राजाओं में बड़े, साधु, युधिष्ठिर! इस स्थान पर सन्धि और विग्रह को बिचारो, जिसके उत्पत्तिस्थान दो हैं; शत्रु का बलवान् अथवा निर्बल होना जो नाना प्रकार के उपाय और रीतियों से संयुक्त हैं १ हे कौरव! तुम अपने बलाबल का विचार कर शत्रुओं से व्यवहार करो। जब शत्रु प्रसन्न और बल पराक्रमयुक्त सेनावाला हो, तब बुद्धिमान् राजा विजय के उपाय खोजे २ हे राजेन्द्र! शत्रु के समीप होते समय विपरीत कर्म किया जाता है। युद्ध के समय शत्रु से पृथक् हो जाय फिर शत्रुओं को दुःख और विरोध में अपनी ओर मिलाने की चेष्टा करे। भय दिखलावे और युद्ध में उसकी सेना का नाश करावे ३। ४ शास्त्र में कुशल चढ़ाई करनेवाला राजा अपने और शत्रु के तीन प्रकार के सामर्थ्य का विचार करे ५ हे भरतवंशिन्! उत्साह, प्रभुशक्ति और मन्त्रशक्ति से संयुक्त होकर राजा चढ़ाई करे। इनके विपरीत चढ़ाई न करे ६ वह राजा धनबल, मित्रबल, अटवीबल, भृतबल और श्रेणी बल को साथ में रक्खे ७ उन सबमें धनबल और मित्रबल विशेष है। श्रेणी बल और भृतबल मेरे मत में ये दोनों समान हैं८ दूतबल भी परस्पर समान हैं, नाना प्रकार का बल समयानुसार राजा को जानना योग्य है ९ बहुत रूप रखनेवाली आपत्ति जानने योग्य

है। हे कौरव्य ! राजाओं को जो आपत्तियां होती हैं, उनको सुनो। आपत्तियां कई प्रकार की हैं। राजा उनको सदैव सामादिक उपायों से विचारे १०।११ हे परन्तप ! वह राजा सेना, सत्पुरुष, देश, काल और अपने गुणों से युक्त होकर यात्रा करे १२ राज्य की वृद्धि में प्रवृत्त, बलवान्, प्रसन्न और पराक्रमी सेनावाला राजा शिशिर आदिक ऋतुओं में भी चढ़ाई करे १३ शत्रुओं का नाश करने के लिये राजा ऐसी नदी बहा दे, जिसमें तृण पाषाण हैं, हाथी और रथ प्रवाह हैं, ध्वजारूप वृक्षों से युक्त किनारे हैं, पदाती और हाथियों से बहुत कीच है १४ फिर समय के अनुसार शकट, पद्म और वज्र नाम व्यूहों से सेना को अलंकृत करे। जिस शास्त्र को शुक्रजी जानते हैं, उसमें यह सब कहा है १५ दूतों से शत्रु की सेना का भेद पाकर अपनी सेना को देख, अपनी पृथ्वी और शत्रु की पृथ्वी पर युद्ध करे १६ राजा अपनी सेना को प्रसन्न करे और बलवान् मनुष्यों को अधिकारी बनावे। वहां अपने मौक़ा को जानकर साम आदिक उपायों से कार्य का प्रारम्भ करे १७ महाराज ! यहां सब दशाओं में अपने शरीर की रक्षा करे और इस लोक तथा परलोक में अपना परम कल्याण करना उचित है १८ इस कर्म को अच्छी रीति से कर धर्म से प्रजापालन करता हुआ राजा शरीर त्यागने पर स्वर्ग पाता है १९ हे कौरवनन्दन ! तुमको दोनों लोकों की प्राप्ति के लिये सदैव प्रजा की वृद्धि करनेवाला कर्म करना उचित है २० हे भरतर्षभ ! भीष्म, श्रीकृष्ण और विदुर ने सब प्रकार से तुमको समझाया है। मुझे भी तेरी प्रीति से अवश्य कहना योग्य है २१ इसे न्याय के अनुसार करने से प्रजा के प्यारे होकर तुम स्वर्ग-सुख पाओगे २२ हज़ार अश्वमेध से पूजन कर धर्म से प्रजा का पालन न करने एवं धर्म से प्रजापालन कर अश्वमेध न करने का फल समान ही है २३॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि सप्तमोऽध्यायः ७॥

आठवाँ अध्याय।

युधिष्ठिर बोले कि हे राजन्! जैसा आपने मुझसे कहा है, मैं उसी प्रकार से करूंगा। हे राजाओं में श्रेष्ठ! मैं फिर भी आपकी शिक्षाएं सुना चाहता हूं। भीष्मजी के स्वर्गवासी होने और श्रीकृष्ण, विदुर एवं सञ्जय के यहां से चले जाने पर मुझे कौन शिक्षा देगा १। २ मेरी वृद्धि के लिये आप जो जो शिक्षाएं कहते हैं, मैं उनको करूंगा। आप निवृत्तिमार्ग में नियत हैं ३ वैशम्पायन बोले कि हे भरतर्षभ! बुद्धिमान् धर्मराज युधिष्ठिर के इस प्रकार कहने पर राजर्षि यह कहकर गान्धारी के भवन में चले गये ४ कि बेटा! तू कुछ काल शान्त हो, मेरी थकावट बढ़ गई है ५ समय की जाननेवाली धर्मज्ञ गान्धारी देवी ने उस आसन पर बैठे हुए प्रजापति के समान अपने पति से कहा ६ कि आपको महर्षि व्यास ने आकर आज्ञा दी है। अब युधिष्ठिर की सलाह से वन को कब जाओगे? धृतराष्ट्र ने कहा कि मुझको स्वयं महात्मा पिता ने आकर आज्ञा दी है। मैं थोड़े ही समय में युधिष्ठिर की सलाह से वन को जाऊंगा ७। ८ तब तक उन दुर्मति, द्यूत खेलनेवाले सब पुत्रों का मैं श्राद्धादिक करना चाहता हूं। अपने महल में सब नौकर-चाकर और प्रजा को बुलाकर ९ धृतराष्ट्र ने धर्मराज के पास दूत भेजा। उसने आज्ञानुसार सब सामान राजा के समीप ला दिया १० तब प्रसन्नचित्त कुरुजाङ्गलदेशी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इकट्ठे हुए ११ राजा ने अन्तःपुर से बाहर निकलकर उन सब मनुष्यों और राज्य के नौकर-चाकरों को देखा १२ हे राजन्! उन सबके साथ अपने इष्टमित्र, नातेदारों और अनेक देशों से आनेवाले ब्राह्मणों को देखकर बुद्धिमान् राजा धृतराष्ट्र ने कहा १३। १४ कि आप और कौरवलोग परस्पर शुभचिन्तक और परस्पर की वृद्धि में प्रवृत्त हो बहुत कालतक साथ रहे १५ अब मैं इस समय जो कुछ कहूं उसी प्रकार से आप लोगों को करना उचित है। मेरा वचन

विचार करने के योग्य नहीं १६ व्यासऋषि और राजा युधिष्ठिर की सलाह से मेरा विचार गान्धारी समेत वन जाने का है १७ आप भी मुझको विना विचारे वन जाने की आज्ञा दें। हमारी आपकी जैसी प्राचीन प्रीति है १८ वैसी प्रीति अन्यदेशों में किसी दूसरे राजा की नहीं है, यह मेरा सिद्धान्त है। मैं इस वृद्धावस्था से थक गया हूं और पुत्रों से भी रहित हूं १९ गान्धारी समेत व्रत करने से मेरा शरीर दुर्बल है। हे निष्पाप लोगो! मैंने युधिष्ठिर का राज्य होने पर बड़ा सुख पाया है २० हे साधुलोगो! मैं मानता हूं कि यह सुख दुर्योधन के भी ऐश्वर्य से अधिक है परन्तु मुझ अन्धे, वृद्ध और सन्तानहीन की वन जाने के सिवाय दूसरी गति नहीं है २१ हे भाग्यवानो! इससे आप भी मुझे आज्ञा देने के योग्य हो। हे भरतर्षभ! उन सब कुरुजाङ्गलदेशियों ने वह वचन सुनकर नेत्रों में आँसू भरे और फूट फूटकर रोना प्रारम्भ किया। तब महातेजस्वी धृतराष्ट्र ने उन कुछ कहने की इच्छा रखनेवाले शोकयुक्त सब मनुष्यों को समझाया २२। २३॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वण्यष्टमोऽध्यायः ८॥

नवाँ अध्याय।

धृतराष्ट्र बोले कि राजा शन्तनु ने इस पृथ्वी का यथाविधि पालन, पोषण और रक्षण किया; उसी प्रकार भीष्मजी से रक्षित राजा विचित्रवीर्य ने भी तुम्हारा पोषण किया १ यह बात भी निस्सन्देह सबको प्रकट है कि मेरा भाई पाण्डु तुम सब लोगों को कैसा प्यारा था २ उसने भी विधि के अनुसार रक्षण और पोषण किया सो तो जानते ही हो। हे निष्पापो! मैंने भी आपलोगों की अच्छी सेवा की हो ३ या न की हो; हे भाग्यवानो! तुम सावधान लोगों को वह क्षमा करना योग्य है। जब दुर्योधन ने इस निष्कण्टक राज्य को भोगा ४ तब उस दुर्बुद्धि, अभागे ने तुम्हारा कोई अपराध नहीं किया। उस

दुर्मति के अपराध, राजाओं के अपमान ५ और अपने किये हुए अन्याय से यह बड़ा भारी युद्ध हुआ। यही मैंने शुभ या अशुभ कर्म किया ६ तुम्हें उसको हृदय से भुला देना चाहिये। इसी लिये मैंने अञ्जली बाँधी है। मैं वृद्ध हूं, हतसन्तान हूं, दुःखी हूं ७ और राजाओं का पुत्र हूं। इससे मुझको वन जाने की आज्ञा दो। महादुःखी, नष्टसन्तान, वृद्धा, तपस्विनी ८ पुत्रों के शोक से पीड़ित गान्धारी भी मेरे साथ तुमसे प्रार्थना करती है कि हम दोनों को मारे गये पुत्र और वृद्ध जानकर ९ आज्ञा दो। तुम्हारा भला हो, हम तुम्हारे शरण हैं। यह कुन्ती का पुत्र, कौरव राजा युधिष्ठिर १० आनन्द और आपत्ति के समयों में तुम सबसे देखने योग्य है। यह कभी आपत्ति नहीं पावेगा ११ लोकपालों के समान बड़े तेजस्वी, सब धर्म अर्थ को देखनेवाले चारों भाई इसके मन्त्री हैं। यह महातेजस्वी युधिष्ठिर आपका उसी प्रकार पालन करेगा जैसे कि सब जीवों समेत जगत् के स्वामी भगवान् ब्रह्माजी पोषण करते हैं १२। १३ मुझको अवश्य कहना चाहिये, इसी से तुमसे कहता हूं कि मैंने यह धरोहररूप युधिष्ठिर आप सबको सौंपा है १४ मैंने आप लोगों को भी इस वीर के धरोहररूप किया है। मेरे उन पुत्रों से जो कुछ आप का अपराध बना है, अथवा मेरे अन्यान्य नातेदारों ने जो तुम्हारा अपराध किया है, उसको आप लोग क्षमा करें। आप लोगों ने पहिले कभी, किसी दशा में भी मुझपर क्रोध नहीं किया है। अत्यन्त गुरुभक्त आपलोगों से मेरी यह प्रार्थना है। मैं गान्धारी समेत उन बुद्धि से व्याकुल, लोभी, स्वेच्छाचारी पुत्रों के कारण तुम सबसे प्रार्थना करता हूं १५। १७ इस वचन को सुनकर नेत्रों में आँसू भरे उन पुरवासियों और देशवासियों ने कुछ न कहा, किन्तु एक दूसरे को देखने लगे १८॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि नवमोऽध्यायः ९॥

दशवाँ अध्याय।

वैशम्पायन बोले कि हे कौरव! वृद्ध राजा की बातों से वे पुरवासी और देशवासी अचेत से होगये १ मौन और अश्रुपात करनेवाले उन लोगों से राजा धृतराष्ट्र ने फिर कहा कि हे साधुलोगो! धर्मपत्नी समेत नानाप्रकार की करुणा और विलाप करनेवाले, नष्टसन्तान, मुझ वृद्ध को वन जाने की आज्ञा दो २। ३ हे धर्मज्ञलोगो! मुझे पिता व्यासजी और धर्मज्ञ राजा युधिष्ठिर ने वन में निवास करने के निमित्त आज्ञा दे दी है ४ मैं बारम्बार शिर झुकाता हूं;-गान्धारी समेत मुझे आज्ञा दो ५ वैशम्पायन बोले कि कुरुजांगलदेशी प्रजासमूह राजा धृतराष्ट्र के करुणापूर्ण वचन सुनते ही मुँह ढककर रोने लगा ६। ७ और धृतराष्ट्र के वियोगजनित दुःख के कारण अचेतसा होगया। फिर उस दुःख को सहकर धीरे धीरे उन्होंने अपनी राय दी ८। ९ हे राजन्! सबने परस्पर सलाहकर एक ब्राह्मण को मुखिया बना, उसी से राजा को उत्तर दिलाये १० सदाचरणी, वेदपाठी सबके अंगीकृत, कर्म में सावधान, ऋचाएँ जाननेवाले शंब नामक ब्राह्मण ने ११ सभा को पूजकर और प्रसन्नकर राजा से कहा १२ हे वीर, राजा धृतराष्ट्र! इन सब मनुष्यों का मैं प्रतिनिधि हूं। मैं जो निवेदन करूं, उसे सुनिये १३ हे राजेन्द्र! आपने जो कहा, वह सब निस्संदेह वैसा ही है; कोई बात मिथ्या नहीं है। हमारी मित्रता परस्पर है १४ इस वंश के राजाओं में कभी कोई ऐसा राजा नहीं हुआ जो प्रजा को दुःखदायक होकर अप्रिय हुआ हो १५ आप माता, पिता और भाई के समान हमारा पालन करते हैं। राजा दुर्योधन ने भी कोई अयोग्य कर्म नहीं किया १६ महाराज! सत्यवती के पुत्र धर्मात्मा व्यासमुनि जैसा कहते हैं, आप उसी प्रकार करें। हमारी बुद्धि से वही बड़ा कर्म है १७ आपके सैकड़ों गुणों से जुदे होकर हम लोग बहुत समय तक शोक पूर्ण रहेंगे १८ जैसे हम राजा शन्तनु, चित्रांगद और भीष्म के सामर्थ्य से रक्षित आपके

पिता विचित्रवीर्य से रक्षित रहे १६ एवं आपके स्मरण के साथ राजा पाण्डु से पोषण किये गये, वैसे ही राजा दुर्योधन से भी रक्षित होकर प्रतिपालित हुए २० हे राजन्! आपके पुत्र दुर्योधन ने थोड़ासा भी अप्रिय नहीं किया। हम लोगों ने उस पर वैसा ही विश्वास किया जैसा कि पिता में करते हैं २१ हम जिस प्रकार अच्छी रीति से रहते थे, सो आपको विदित ही है। धैर्यवान्, बुद्धिमान् राजा युधिष्ठिर से पोषित हम लोग हज़ारों वर्ष तक सुख पावेंगे। बड़ी दक्षिणा देनेवाले धर्मात्मा युधिष्ठिर अपने पूर्वज राजाओं की रीति पर चलते हैं। जैसे आपके वृद्ध, पवित्रकर्मी, प्राचीन राजर्षि कुरु, संवरण और भरतादिक बुद्धिमान् थे; उसी प्रकार २२।२४ इनमें भी कोई अयोग्य बात नहीं है। हे कौरवनन्दन! इस वंश का नाश जो दुर्योधन के विषय में कहा जाता है २५।२६ उसके विषय में भी आपको मैं समझाऊँगा। वह दुर्योधन का कर्म नहीं है और न वह आपकी ओर से किया गया है। न उसे कर्ण और शकुनि ने ही किया है। कौरवों के नाश को हम होनहार और ईश्वर की इच्छा जानते हैं। उसको रोकना असंभव था। क्योंकि उपायों से भावी नहीं रुकती २७।२८ महाराज! अठारह अक्षौहिणी सेनाएँ इकट्ठी हुईं और अठारह दिन में ही कौरवों के शूरवीर भीष्म, द्रोणाचार्य, कृपाचार्यादिक, महात्मा कर्ण, वीर सात्यकी, धृष्टद्युम्न २६।३० पाण्डव भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव के हाथ से मारी गईं। हे राजन्! होनहार की प्रबलता के सिवाय किसी दूसरे से यह विनाश नहीं हुआ ३१ क्षत्रिय को मुख्यकर युद्ध के समय अवश्य ही नाश करना योग्य और क्षत्रिय बांधवों को युद्ध में मरना ही योग्य है ३२ विद्या, पराक्रम और भुजबल संयुक्त पुरुषों के हाथ से इस सम्पूर्ण पृथ्वी के लोग, घोड़े और हाथियों समेत रथ नाश किये गये ३३ महात्मा राजाओं के मरने में न आपका पुत्र कारण है, न आप, न सेना के लोग, न शकुनि और न कर्ण ही ३४ श्रेष्ठ कौरव

और हज़ारों राजा लोग होनहार से ही मारे गये। इसमें कौन क्या कहने योग्य है ३५ आप इस सम्पूर्ण जगत् के प्रभु और गुरु हो; इसी हेतु हम आपके पुत्र को धर्मात्मा जानते हैं ३६ वह राजा अपने साथियों समेत वीर लोकों को पावे और ऋषियों से, आज्ञप्त होकर सुख से स्वर्ग में आनन्द करे ३७ आप धर्म में स्थित होकर सब धर्म और वेदों के पुण्य को प्राप्त करेंगे। आप अच्छी रीति से श्रेष्ठ व्रत करनेवाले हैं। आपकी ओर से हमको पाण्डवों पर दृष्टि रखना वृथा है क्योंकि जब वे स्वर्ग की भी रक्षा करने में समर्थ हैं तब इस पृथ्वी की रक्षा उनके लिये कौन बड़ी बात है ३८ । ३९ हे कौरवकुल में श्रेष्ठ, बुद्धिमान् धृतराष्ट्र ! सब प्रजा सुख दुःखों में पाण्डवों की साथी होगी क्योंकि ये सुन्दर स्वभाव, रूप और भूषणों से अलंकृत हैं ४० राजा युधिष्ठिर ब्राह्मणों के देने के योग्य देवपूजा आदिक और भरत आदिक पूर्वज राजाओं के नियत किये हुए दान बहिन बेटियों को देते हैं ४१ ये साहसी, दूरदर्शी राजा युधिष्ठिर मृदुल स्वभाव, इन्द्रियों के जीतनेवाले, सदैव कुबेर के समान और बड़े कुलीन बुद्धिमान् मन्त्री रखनेवाले हैं ४२ फिर ये भरतर्षभ, सबके मित्र, दयालु, पवित्र और बुद्धिमान् हैं, सीधी दृष्टि से देखते हैं और पुत्र के समान हमें पालते हैं ४३ हे राजर्षे ! उसी प्रकार भीम और अर्जुन आदिक भी धर्मपुत्र के सत्संग से हमारा अप्रिय नहीं करेंगे ४४ हे कौरव्य ! पुरवासियों की वृद्धि में प्रवृत्त, पराक्रमी, महात्मा पाण्डव मृदुस्वभाववालों में मृदु और तीक्ष्ण स्वभाववालों में विषधर सर्प के समान हैं ४५ और कुन्ती, द्रौपदी, उलूपी और सुभद्रा किसी दशा में भी अप्रिय नहीं करेंगी। आपने जो यह प्रीति की और युधिष्ठिर ने जो उसकी वृद्धि की; उसको पुरवासी और देशवासी कभी न भूलेंगे ४६ । ४७ महारथी कुन्ती के पुत्र धर्मात्मा होकर अधर्मियों का भी पालन करेंगे ४८ हे राजन् ! तुम युधिष्ठिर की ओर से चित्त का खेद दूर कर धर्मसंबंधी कर्म करो। हे पुरुषोत्तम ! तुमको नमस्कार

है ४९ वैशम्पायन बोले कि उन सब मनुष्यों ने धर्मरूप गुणों से राजा की बहुत प्रशंसा कर उनकी बात को स्वीकार किया ५० तब धृतराष्ट्र ने उनसे अच्छी रीति से पूजित हो, कल्याणरूप नेत्रों से देखते हुए हाथ जोड़े बारम्बार प्रशंसा कर धीरे धीरे उन सब सेवकों और प्रजा आदिकों की पूजा कर बिदा किया ५१। ५२ फिर गान्धारी समेत निजभवन में प्रवेश कर रात्रि बीतने पर उन्होंने जो किया, उसे आगे कहते हैं ५३॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि दशमोऽध्यायः १०॥

ग्यारहवाँ अध्याय।

वैशम्पायन बोले कि फिर रात्रि बीतने पर अम्बिका के पुत्र धृतराष्ट्र ने विदुरजी को युधिष्ठिर के यहां भेजा १ सब बुद्धिमानों में श्रेष्ठ महातेजस्वी विदुर ने धृतराष्ट्र की आज्ञा से, धर्म से अच्युत राजा युधिष्ठिर से कहा २ कि हे राजन्! वनवास के लिये दीक्षित महाराज धृतराष्ट्र इसी कार्त्तिकी पूर्णमासी को वन जायेंगे ३ हे कौरवकुलभूषण! उनका कुछ प्रयोजन है ४ महात्मा भीष्म, द्रोणाचार्य, सोमदत्त, बुद्धिमान् बाह्लीक सब पुत्र और जो अन्यान्य नाते रिश्तेदार मारे गये हैं, उनका वे श्राद्ध किया चाहते हैं और जो तुम अंगीकार करो तो राजा जयद्रथ का भी श्राद्ध करना चाहते हैं। विदुरजी की बात सुनकर प्रसन्न हो युधिष्ठिर ने ५। ६ और पाण्डव अर्जुन ने उस वचन की प्रशंसा की पर कठिन क्रोधयुक्त और दुर्योधन के कर्म का स्मरणकर महातेजस्वी भीमसेन ने विदुरजी की बात नहीं मानी। अर्जुन ने भीमसेन के उस विचार को ताड़कर ७। ८ और कुछ झुककर उस नरोत्तम से कहा कि हे भीमसेन! वनवास करने में दीक्षित हमारे वृद्ध ताऊ राजा धृतराष्ट्र ९ सब नाते-रिश्तेदारों का श्राद्ध किया चाहते हैं, और आपके पराक्रम से उपार्जित धन को भीष्मादि के श्राद्ध में देना चाहते हैं १० आपको उन्हें आज्ञा देनी योग्य है। हे वीर! अब राजा धृतराष्ट्र प्रारब्ध से प्रार्थना करते हैं ११ जिनकी

कि पहिले हम प्रार्थना किया करते थे । समय की विपरीतता देखो
कि अन्य लोगों के हाथ से, जिनके पुत्रादिक मारे गये, वे राजा धृत-
राष्ट्र सम्पूर्ण पृथ्वी के स्वामी होकर १२ वन को जाना चाहते हैं।
हे पुरुषोत्तम ! अब धन देने के सिवाय दूसरा विचार न करो १३
हे महाबाहो ! इसके विपरीत जो काम होगा, वह महाअधर्मरूप और
अपकीर्तिदाता होगा । अपने बड़े भाई राजा युधिष्ठिर से शिक्षा
लो १४ हे भरतर्षभ ! तुम देने के योग्य हो, लेने के योग्य नहीं । यह
कहनेवाले अर्जुन की धर्मराज ने भी प्रशंसा की १५ तब क्रोधयुक्त
भीमसेन ने कहा कि हे राजन् ! हम भीष्मजी का श्राद्ध करेंगे १६ राजा
सोमदत्त, भूरिश्रवा, राजर्षि बाह्लीक, महात्मा द्रोणाचार्य १७ एवं
अन्यान्य सब नातेदारों का श्राद्ध करेंगे। कुन्ती कर्ण का श्राद्ध करेगी।
हे पुरुषोत्तम ! यह मेरा मत है कि राजा धृतराष्ट्र श्राद्ध न करें १८ हमारे
शत्रु प्रसन्न न हों जिन कुलकलंकियों से इस पृथ्वी के लोगों का
नाश हुआ, उन दुर्योधनादिक सब भाइयों को कठिन दुःख प्राप्त हो।
तुम बारह वर्ष की शत्रुता १९। २० और द्रौपदी का शोक बढ़ानेवाले
महाकठिन गुप्तनिवास के दुःख भूलकर कैसे मौन हो ? तब राजा धृतराष्ट्र
की प्रीति कहां थी जब कि उसने हमारा तिरस्कार किया था २१ जब
काले मृगचर्म से शरीर ढके हुए भूषण-वस्त्रों से रहित, द्रौपदी सहित तुम
राजा के पास गये तब द्रोणाचार्य, भीष्म और सोमदत्त कहां थे ? जहां
तुमने तेरह वर्ष तक वन में रहकर जङ्गल के फल मूलों से ही अपना
निर्वाह किया २२। २३ तब ताऊ तुमको पितापन की प्रीति से नहीं
देखता था ? हे राजन् ! क्या आपने उन सब बातों को भुला दिया जो
इस कुलकलंकी २४ दुर्बुद्धि ने विदुरजी से पूछा था कि द्यूत में क्या
जीता ? भीमसेन के ये वचन सुनकर घुड़कते हुए कुन्ती के पुत्र राजा
युधिष्ठिर ने भीमसेन से कहा कि बस, अब मौन होना चाहिए २५ ॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वण्येकादशोऽध्यायः ११ ॥

बारहवाँ अध्याय।

अर्जुन बोले कि हे भीमसेन ! तुम मेरे बड़े भाई और गुरु हो। मैं दूसरी बात कहने का साहस नहीं कर सकता। राजर्षि धृतराष्ट्र सब दशाओं में हमको पूजनीय हैं १ मर्यादा पर चलनेवाले, साधु, श्रेष्ठ लोग पराये अपराधों को स्मरण नहीं करते किन्तु उनके उपकारों की याद करते हैं २ कुन्ती के पुत्र धर्मात्मा युधिष्ठिर ने महात्मा अर्जुन की बात सुनकर विदुरजी से कहा कि आप मेरी ओर से राजा धृतराष्ट्र से कहिये जितने धन से पुत्रों का श्राद्ध करना चाहो, मैं उतना ही देता हूं ३। ४ बड़भागी भीष्मादिक सब नातेरिश्तेदारों के श्राद्ध के लिये मेरे खज़ाने से धन दो। भीमसेन चित्त से दुःखी न हों ५ वैशम्पायन बोले कि यह कहकर धर्मराज ने अर्जुन की प्रशंसा की। तब भीमसेन ने तिरछी निगाह से अर्जुन की ओर देखा ६ बुद्धिमान् युधिष्ठिर ने विदुरजी से कहा कि राजा धृतराष्ट्र भीमसेन के ऊपर क्रोध करने योग्य नहीं हैं ७ यह बुद्धिमान् भीमसेन वर्षा, बर्फ़ और धूप आदिक अनेक प्रकार के दुःखों से वन में दुःखित हुआ था, सो तो आप जानते ही हैं ८ हे भरतर्षभ ! आप मेरी ओर से राजा धृतराष्ट्र से कहें कि उनकी जो इच्छा हो, सो वे मेरे खज़ाने से लें। आपको समझना योग्य है कि यह अत्यन्त दुःखी भीमसेन जो ईर्षा से क्रोध करता है, उसको दिल में कभी न शोचना ९। १० राजा को इस प्रकार समझाना योग्य है कि जो कुछ मेरा धन है और अर्जुन के घर में है, उसके स्वामी महाराज हैं। अब राजा वेदपाठी ब्राह्मणों को दान करें, इच्छानुसार खर्च करें और अपने पुत्र तथा बांधवों से अऋणता पावें ११। १२ हे राजन् ! यह मेरा शरीर और सब धन भी आपके आधीन है, इसे निस्सन्देह अपना ही जानें १३॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि द्वादशोऽध्यायः १२॥

तेरहवाँ अध्याय।

वैशम्पायन बोले कि राजा की इस प्रकार बातें सुन, बुद्धिमानों में श्रेष्ठ विदुरजी ने धृतराष्ट्र से कहा १ कि हे राजन् ! मैंने आपके वचन राजा युधिष्ठिर को सुनाए। उस बड़े तेजस्वी ने आपके वचनों की प्रशंसा की २ महातपस्वी अर्जुन घरों को और अपने घर के धन तथा शुद्ध प्राणों को भी आपकी भेट करता है ३ हे राजर्षे ! आपका पुत्र धर्मराज भी राज्य, प्राण, धन और अन्यान्य वस्तुएँ आपकी भेट करता है ४ पर बहुत दुःखों को स्मरण कर श्वास लेते हुए महाबाहु भीमसेन ने दुःख से अंगीकार किया ५ हे राजन् ! उस महाबाहु भीमसेन को धर्म के अभ्यासी राजा युधिष्ठिर और अर्जुन ने शिक्षा दी और आपकी आज्ञा पालने में भी उसे नियत किया। धर्मराज ने आपसे कहा है कि भीमसेन ने उस शत्रुता का स्मरण कर जो न्याय के विपरीत बातें की थीं, उन पर आपको क्रोध न करना चाहिए ६। ७ हे राजन् ! क्षत्रियों का यह धर्म ऐसा ही है। भीमसेन युद्ध और क्षत्रियधर्म में प्रवृत्त है। अर्जुन ने बारम्बार भीमसेन के विषय में कहा है कि हे राजन् ! मैं प्रार्थना करता हूं; आप प्रसन्न हूजिए। हमारे धन के आप स्वामी हैं ८। ६ हे भरतवंशिन्, राजा धृतराष्ट्र ! आप उस धन को जितना चाहें, उतना दान करें। आप इस राज्य और मेरे प्राणों के भी स्वामी हैं १० आप यहां से रत्न, गौ, दासी, दास, भेड़, बकरी आदि ब्राह्मणों के देने के योग्य देवपूजा आदि और पुत्रों के श्राद्धादि में ब्राह्मणों को दान करें। हे राजन् ! आप जहां तहां दीन, अन्धे और दुःखियों के लिये ११। १२ बहुत सी खाने पीने की वस्तुओं से भरे पूरे आतुरालय विदुरजी के द्वारा बनवावें। गौओं को जलप्रपा (प्याऊ) और नानाप्रकार के अन्य पुण्यार्थ कार्य भी करें १३ राजा युधिष्ठिर और पाण्डव अर्जुन ने मुझसे बारम्बार कहा है कि यहां जो कुछ करना योग्य है, उसको आप बहुत शीघ्रता से करें १४

हे जनमेजय ! विदुरजी के इस प्रकार कहने पर धृतराष्ट्र ने उन पाण्डवों को आशीर्वाद देकर कार्त्तिक महीने की पूर्णमासी के दिन महादान करने का चित्त से विचार किया १५ ॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि त्रयोदशोऽध्यायः १३ ॥

चौदहवाँ अध्याय।

वैशम्पायन ने कहा हे राजन् ! विदुर की बातें सुन राजा धृतराष्ट्र युधिष्ठिर और अर्जुन के कर्म पर प्रसन्न हुए १ इसके पीछे भीष्मपितामह और अपने सब पुत्र, इष्टमित्र, नातेदार आदिकों के निमित्त श्राद्ध के योग्य, ऋषियों में श्रेष्ठ हज़ारों ब्राह्मणों के लिये २ खाने पीने की वस्तुएँ तैयार करा, सवारी, पोशाक, सुवर्ण, मणि, रत्न, दासी, दास, भेड़, बकरी ३ पटवस्त्र, ऊर्णवस्त्रादिक, गांव, क्षेत्र, भूषणों से अलंकृत हाथी, घोड़े, कन्या और श्रेष्ठ स्त्रियां एकत्रित कीं ४ उस श्रेष्ठ राजा ने नाम ले लेकर सबके निमित्त श्राद्धदान दिया। द्रोणाचार्य, भीष्मपितामह, सोमदत्त, बाह्लीक ५ जयद्रथ आदिक सब नातेदार और राजा दुर्योधन आदिक सब पुत्रों का स्वतन्त्ररूप से नाम लेकर श्राद्ध किया। बहुत धन की दक्षिणा और अनेक धन, रत्नों के समूहों से सम्पूर्ण वह श्राद्ध यज्ञ युधिष्ठिर की सलाह से हुआ; जिसमें सांख्यक और लिखनेवालों ने युधिष्ठिर की आज्ञा से बारंबार उस राजा से पूछा ६ । ८ कि आप आज्ञा दें, इन ब्राह्मणों को क्या दान दिया जाय, यहां सब वस्तुएँ हैं । आज्ञा होने पर दान किया गया। बुद्धिमान् राजा युधिष्ठिर की आज्ञा से सौ रुपये के स्थान पर हज़ार और हज़ार के स्थान में दश हज़ार दान में दिये जाते थे ९।१० धन-रूप धाराओं से वर्षा करनेवाले राजरूपी बादल ने वेदपाठी ब्राह्मणों को ऐसे तृप्त किया जैसे कि बरसनेवाला बादल खेती को तृप्त करता है ११ हे राजा जनमेजय ! इसके पीछे उस श्राद्धयज्ञ में राजा धृतराष्ट्र ने सब वर्णों को भोज में खाने पीने की वस्तुओं और भरपूर रसों से तृप्त

किया १२ वस्त्र, धन और रत्नों की लहर रखनेवाले मृदंगों की गूंज से मुखरित गौ, घोड़ेरूप मगरों की लोटपेट से युक्त, रत्नों की खानि रखनेवाले १३ माफ़ी के गांवरूप द्वीपों समेत, मणि-सुवर्णरूपी जल से पूर्ण, धृतराष्ट्ररूप नौका से संयुक्त उस महासागर ने जगत् को व्याप्त किया १४ महाराज! इस प्रकार अपने पुत्र, पौत्र, पितर और गान्धारी समेत उन्होंने अपना भी श्राद्धादिक किया १५ जब वे बहुत दान देकर थक गये तब राजा ने दानयज्ञ समाप्त किया १६ इस प्रकार राजा धृतराष्ट्र ने बड़ा दानयज्ञ किया जो कि नटनर्तकों के गान, नृत्यों और बाजों से युक्त था और जो खाने पीने की बहुतसी वस्तुओं समेत दक्षिणा संयुक्त था १७ हे भरतर्षभ! इस प्रकार राजा धृतराष्ट्र दश दिन तक दान देकर पुत्र-पौत्रों से अनृण होगये १८॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि चतुर्दशोऽध्यायः १४॥

पन्द्रहवाँ अध्याय।

वैशम्पायन ने कहा; इसके अनन्तर प्रातःकाल वनवास का समय पानेवाले अम्बिका के पुत्र बुद्धिमान् धृतराष्ट्र ने वीर पाण्डवों को बुलाकर १ गान्धारी समेत विधिपूर्वक उन्हें आशीर्वाद दिया। कार्त्तिक की पूर्णमासी को ब्राह्मणों से इष्टीयज्ञ करा २ अग्निहोत्र को आगे कर बल्कल और मृगचर्म धारण कर बांधवों से घिरे हुए राजा धृतराष्ट्र महल से बाहर निकले ३ तब कौरव-पाण्डवों की स्त्रियों और कौरववंशीय अन्यान्य स्त्रियों के बड़े शब्द हुए ४ फिर राजा धृतराष्ट्र ने खील और विचित्र पुष्पों से उस घर को पूजा और सेवकों को पारितोषिक आदि से प्रसन्न कर उन्हें बिदा करके यात्रा की ५ इसके पीछे हाथ जोड़े हुए, अश्रुओं से युक्त, गद्गद कण्ठ राजा युधिष्ठिर उच्च स्वर से बड़ा शब्द कर साधुतापूर्वक बोले कि 'कहां जाते हो?' फिर वे शोक से पृथ्वी पर गिर पड़े ६ उसी प्रकार कठिन दुःख से संतप्त श्वासोच्छ्वास लेते हुए भरतर्षभ अर्जुन युधिष्ठिर से बोले कि 'ऐसा मत करो।' ऐसा कह और पकड़-

कर वे बड़े दुःखी और पीड़ित हुए ७ वीर भीमसेन, अर्जुन, नकुल, सहदेव, विदुर, संजय, युयुत्सु, कृपाचार्य, धौम्य और अश्रुओं से गद्गदकण्ठ अनेक अन्यान्य ब्राह्मण भी उनके पीछे चले ८ कुन्ती और कन्धे पर हाथ को सहती नेत्र बांधे हुए गान्धारी भी साथ चली। प्रसन्नचित्त धृतराष्ट्र गान्धारी के कन्धे पर हाथ रखकर चल दिये ९ कृष्णा, द्रौपदी, सुभद्रा, बालक रखनेवाली उत्तरा, उलूपी, चित्राङ्गदा प्रभृति अन्यान्य स्त्रियां भी अपने बन्धुजनों के साथ राजा धृतराष्ट्र के साथ चलीं १० हे राजन्! तब उन दुःख से रोनेवाली स्त्रियों के शब्द कुररी पक्षिणी के समान उच्च स्वर से हुए। पीछे से ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों की स्त्रियां चारों ओर से दौड़ीं ११ यात्रा होने पर हस्तिनापुर में पुरवासियों का समूह ऐसे दुःखी हुआ जैसे कि पूर्व समय में द्यूत के समय पाण्डवों के वन जाने पर कौरवीय सभा को दुःख उत्पन्न था १२ हे नरेन्द्र! उस नगर में जिन स्त्रियों ने कभी चन्द्रमा और सूर्य को भी नहीं देखा था, वे कौरवेन्द्र धृतराष्ट्र के वन जाने पर शोक से पीड़ित होकर राजमार्ग में आ पहुँचीं १३ ॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि पञ्चदशोऽध्यायः १५ ॥

सोलहवाँ अध्याय।

वैशम्पायन ने कहा; हे राजन्! इसके पीछे महलों की अटारियों और पृथ्वी पर स्त्री-पुरुषों के बहुत बड़े शब्द हुए १ हाथ जोड़े हुए, बुद्धिमान्, कँपते हुए राजा धृतराष्ट्र उन स्त्री-पुरुषों के जमघट्ट संयुत राजमार्ग से बड़ी कठिनतापूर्वक हस्तिनापुर के वर्द्धमान द्वार में होकर बाहर निकले। उन्होंने भीड़ को बारम्बार बिदा किया २। ३ विदुरजी और गोलगण के पुत्र प्रधान अमात्य सूत संजय ने राजा के साथ वन जाने का समय जाना ४ राजा धृतराष्ट्र ने महारथी कृपाचार्य और युयुत्सु को युधिष्ठिर के सिपुर्द कर लौटा दिया ५ भीड़ छँटने पर धृतराष्ट्र की आज्ञा से राजा युधिष्ठिर ने स्त्रियों समेत लौटना चाहा ६ और

वनको जानेवाली कुन्ती से कहा कि मैं राजा के साथ जाऊंगा आप लौटिये ७ हे मातः ! बन्धुओं समेत तुम नगर जाने को योग्य हो। तपस्वियों के व्रत में निश्चयकर धर्मात्मा राजा वन को जायँ ८ तब धर्मराज की बात सुन अश्रुओं से व्याकुल नेत्र, कुन्ती गान्धारी को पकड़ कर चली गई—उन्होंने लौटना अङ्गीकार नहीं किया ९ कुन्ती बोलीं, महाराज ! कहीं सहदेव के पोषण में भूल न करना। हे राजन् ! यह सदैव मुझसे और तुमसे प्रीति रखता है १० युद्धों में मुख न फेरनेवाले कर्ण को सदैव स्मरण करना। उस समय वह वीर युद्ध में दुर्बुद्धिता से मारा गया ११ निश्चय ही मुझ अभागिनी का हृदय कठोर है, जो सूर्य से उत्पन्न अपने पुत्र को न देखने पर मेरा यह हृदय सौ टुकड़े नहीं होता १२ हे शत्रुओं को जीतनेवाले ! ऐसी दशा में मुझसे क्या हो सकता है ? यह मेरा बड़ा अपराध है जो मैंने इस अपने सूर्यपुत्र को प्रकट नहीं किया १३ हे शत्रुओं के मारनेवाले, वीर युधिष्ठिर ! भाइयों समेत तुम उस सूर्यपुत्र के निमित्त उत्तम दान दो १४ हे शत्रुसंहारिन् ! तुमको सदैव द्रौपदी का प्रिय करने में प्रवृत्त होना योग्य है। हे कौरवों के उद्धार करनेवाले ! यह भीमसेन, अर्जुन, नकुल १५ तुमसे विश्वासयुक्त होकर पोषण करने के योग्य हैं। हे युधिष्ठिर ! अब तेरे ऊपर कुल का भार है और मैं धूलि, मिट्टी से लिप्त शरीर, तपस्विनी होकर अपने सास ससुर की भांति चरणों की सेवा करती हुई गान्धारी के साथ वन में रहूंगी १६ वैशम्पायन बोले कि इस प्रकार आज्ञा पानेवाले बुद्धिमान् राजा युधिष्ठिर ने भाइयों समेत व्याकुल होकर और कुछ नहीं किया। दुःखी, चिन्ता और शोक से युक्त धर्मराज युधिष्ठिर एक मुहूर्त ध्यान कर माता से बोले १७। १८ तुमने यह क्या निश्चय किया है ? तुमको ऐसा कहना योग्य नहीं है। मैं तुमको आज्ञा नहीं देता; क्योंकि तुम कृपा करने योग्य हो १९ हे प्रियदर्शने ! तुमने पहिले शत्रु की सम्मुखता में उत्सुक हम लोगों

को प्रतीकार के वचनों से उत्साहित किया था। अब हमारा त्याग न करो २० मैंने नरोत्तम वासुदेवजी से आपके विचार सुनकर और राजाओं को मारकर यह राज्य पाया है २१ आपकी वह बुद्धि कहाँ है, जो अब आपकी यह बुद्धि मैं सुनता हूं। क्षत्रिय धर्म में नियत होने का उपदेश देकर अब उससे पृथक् किया चाहती हो २२ हे यशस्विनि! तुम इन पुत्रवधुओं को और हम समेत सब राज्य छोड़कर इस दुर्गम्य वन में किस प्रकार निवास करोगी? अब मुझ पर प्रसन्न होजाओ २३ नेत्रों के जल से मधुर और अज्ञात प्रयोजनवाले युधिष्ठिर के वचनों को सुनती हुई अश्रुओं से पूर्ण कुन्ती चल दी; तब भीमसेन ने कहा कि २४ हे कुन्ती! जब पुत्र से विजय किया हुआ यह राज्य भोगने के योग्य है और राजधर्म पाने के योग्य है तब तुमको ऐसी बुद्धि कहां से उपजी है २५ पूर्वसमय में हम लोगों को तुमने संसार विनाश का साधन क्यों किया और अब किस हेतु हमको त्यागकर वन को जाना चाहती हो २६ आप हम बालकों को और शोक, दुःख से पूर्ण माद्री के दोनों पुत्रों को वन से नगर में क्यों ले आईं २७ हे मातः! प्रसन्न हूजिये। अब तुम वन को मत जाओ। कुछ कालतक पराक्रम से इकट्ठे किये हुए युधिष्ठिर के शुद्ध धन को भोगो। पर वन में निवास करने के लिये निश्चय करनेवाली प्रीतियुक्त कुन्ती शीघ्रता से चली और विविध विलाप करनेवाले पुत्रों के वचनों को स्वीकार नहीं किया २८।२९ तब विपरीतरूप, रोती हुई द्रौपदी सुभद्रा समेत स्त्रियाँ वनवास के लिये जानेवाली कुन्ती के पीछे पीछे चलीं ३० बुद्धिमती कुन्ती अपने सब पुत्रों को बारम्बार देखती और रोती हुई चली। जब पाण्डव अपनी स्त्रियों और सेवकों समेत उसके पीछे चले तब उसने आंसुओं को रोक-कर पुत्रों से कहा ३१।३२॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि षोडशोऽध्यायः १६॥

सत्रहवाँ अध्याय।

कुन्ती ने कहा कि हे वीर, पाण्डवो ! जैसा तुम कहते हो वैसाही है। हे राजाओ ! मैंने पहले तुम पीड़ितों के साहस की वृद्धि की थी १ द्यूत में राज्य हार जानेवाले, सुखसे रहित और बिरादरीवालों से पराजित तुम लोगों को साहस दिया २ हे पुरुषोत्तमो ! मैंने यह सोचकर कि पाण्डु की सन्तान किसी प्रकार से नष्ट न हो और तुम्हारी शुभ कीर्ति का क्षय न हो—तुमको क्षत्रियधर्म पर प्रवृत्त किया ३ तुम सब इन्द्र के समान और देवताओं के तुल्य पराक्रमी हो। दूसरों का मुँह जोहनेवाली बनने से बचने के लिये मैंने वह कर्म किया था ४ यह विचारकर तुम सबको साहस दिलवाया कि धर्मधारियों में श्रेष्ठ इन्द्र के समान तुम राजा लोग किसी प्रकार से दुखी न रहो ५ यह सोचकर मैंने सदैव उत्साह दिलाया कि दश हज़ार हाथी के समान विख्यात पराक्रमी यह भीमसेन नष्ट न हो जावे, इन्द्र के समान पराक्रमी अर्जुन नाश को न पावे और ये दोनों गुरुभक्त नकुल एवं सहदेव किसी प्रकार क्षुधा से पीड़ित न हों ६। ८ यह बड़ी श्यामा, दीर्घ नेत्रवाली द्रौपदी सभा में निरर्थक दुःखित न हो यह सोचकर मैंने वह कर्म किया ९ हे भीमसेन ! जब दुश्शासन ने अज्ञानता से तुम्हारे ही आगे इस द्यूत में हारी हुई, अपवित्र, केले के समान कम्पायमान, रजस्वला द्रौपदी को १० दासी के समान खींचा, तभी मुझको विदित होगया था कि यह घराना नाश होनेवाला है ११ जब नाथ को चाहनेवाली द्रौपदी ने, कुररी के समान विलाप किया, तब मेरे ससुर आदिक कौरव लोग व्याकुल हुए १२ हे राजन् ! जब इस द्रौपदी की चोटी को पापी दुश्शासन ने पकड़ा था तभी अचेत होगई थी १३ इसी से मैंने तुम्हारा तेज बढ़ाने के लिये बदले के वचनों से तुमको उत्साह दिलाया। हे पुत्र ! मैंने इसी लिये तुम्हें उत्साहित किया कि १४ पाण्डु का यह राज्य और वंश मेरे पुत्रों को प्राप्त होकर किसी प्रकार

से नाश न हो १५ हे कौरवो! जिन राजाओं के कारण से कुल का नाश होता है, वे राजा अपने पुत्र पौत्रों समेत शुभलोक नहीं पाते हैं १६ हे पुत्रो! मैंने पूर्व समय में अपने पति के बड़े बड़े राजफल भोगे हैं; बड़े दान दिये और विधिपूर्वक अमृत पान किया है १७ मैंने अपने फल के बदले के लिये वासुदेवजी को नहीं उसकाया। वह काम मैंने केवल वंश की रक्षा के लिये किया था १८ हे पुत्रो! मैं पुत्रों से विजय किये हुए लोक नहीं चाहती हूँ १९ हे धर्मराज! मैं अपने तप के द्वारा अपने पति के शुभ लोकों को चाहती हूँ। हे युधिष्ठिर! मैं इन वनवासी की सास ससुर की भांति सेवाकर तप से अपने शरीर को शुष्क करूँगी २० हे कौरवोत्तम! तुम भीमसेनादिकों समेत लौटो। तुम्हारी बुद्धि धर्म में नियत हो और तुम्हारा चित्त उत्साहयुक्त हो २१॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि सप्तदशोऽध्यायः १७॥

अठारहवाँ अध्याय

वैशम्पायन ने कहा कि हे राजाओं में श्रेष्ठ, निष्पाप! लज्जायुक्त पाण्डव कुन्ती के वचन सुनकर द्रौपदी समेत लौटे १ इसके अनन्तर जानेवाली कुन्ती को देखकर रुदन करनेवाली स्त्रियों के बड़े शब्द हुए २ पाण्डव लोग राजा की परिक्रमा और दण्डवत् करके कुन्ती को भी न लौटा कर आप लौट आए ३ फिर महातपस्वी अम्बिका के पुत्र धृतराष्ट्र ने गान्धारी और विदुर को सम्मुख खड़े कर कहा ४ कि अच्छा हो, यदि युधिष्ठिर की माता देवी लौट जाय क्योंकि जैसा युधिष्ठिर ने कहा है सो सब सत्य है। कौन सी स्त्री पुत्रों के इस बड़े फलयुक्त महा ऐश्वर्य को त्यागकर, अज्ञानियों के समान पुत्रों को छोड़ दुर्गम्य वन को जाती है ५। ६ अब इस राज्य में रहकर कुन्ती बड़ी तपस्या और बड़े दान व्रतादिक कर सकती है ७ हे धर्मज्ञ गान्धारी मेरी बात सुनो। मैं इस वधू की सेवा से बहुत प्रसन्न हूं इसलिये तुम

इसे आज्ञा दे दो ८ राजा के वचन सुनकर गान्धारी ने राजा की कही हुई बातें और मुख्यतायुक्त अपना वचन कुन्ती से कहा ९ परन्तु धर्म में प्रवृत्तचित्त, पतिव्रता और वनवास के निमित्त दृढ़ निश्चय कर लेनेवाली कुन्ती को लौटाने में गान्धारी समर्थ नहीं हुई १० तब कौरवीय स्त्रियां उस निश्चय और दृढ़ बुद्धि को जान एवं लौटे हुए पाण्डवों को देखकर रोने लगीं ११ बड़े बुद्धिमान् राजा धृतराष्ट्र पाण्डवों समेत सब वधुओं और स्त्रियों के लौट जाने पर वन को गये १२ उस समय अत्यन्त दुःखी, दुःख और शोक से पूर्ण सब पाण्डव स्त्रियों समेत सवारियों पर चढ़कर अपने नगर में आये १३ वह हस्तिनापुर नगर बालक, वृद्ध और स्त्रियों समेत अप्रसन्न और उत्साह से रहित सा होगया १४ कुन्ती से रहित सब पाण्डव निरुत्साह, क्रोधरहित और बड़े दुःख से ऐसे पीड़ित हुए जैसे कि माताओं से पृथक् बछड़े दुःखी और हिरासा होते हैं १५ प्रभु धृतराष्ट्र ने उस दिन बहुत चलकर गंगाजी के तट पर निवास किया १६ उस तपोवन में जहां तहां वेदपारग ऋषियों से न्याय के अनुसार प्रकट होनेवाली अग्नियां शोभायमान हुईं १७ तब वृद्धराज ने भी अग्नि को प्रकट किया। हे भरतवंशिन्! वहां जाकर राजा ने अग्नियों की उपासना की; विधिपूर्वक हवन कर सन्ध्या की और सूर्य का उपस्थान किया। विदुर और संजय ने कौरव वीर राजा की शय्या कुशाओं से तैयार की और पास ही गान्धारी की भी शय्या बनाई। साधुव्रत में नियत युधिष्ठिर की माता कुन्ती गान्धारी के पास ही सुखपूर्वक कुशासन पर बैठ गई और विदुर आदिक सब उनके पास बैठ गये १८। २१ साथ के याचक और ब्राह्मण भी अपने अपने योग्य स्थानों में बैठ गये। उनकी वह प्रीतिकर रात्रि ब्राह्मी नाम हुई, जिसमें उत्तम ब्राह्मण पढ़ते थे और अग्नियां प्रकाशित थीं। रात्रि व्यतीत होने पर वे दिन के पूर्वाह्ण की क्रिया-सन्ध्यादिक से निवृत्त हो २२। २३ यथाविधि अग्नि में

हवनकर, व्रती हो उत्तर की ओर देखते हुए क्रमपूर्वक चले २४ पुरवासियों और देशवासियों से शोचित उन शोचनेवालों का निवास प्रथम दिन में बड़ा दुःखरूप हुआ २५ ॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि अष्टादशोऽध्यायः १८ ॥

उन्नीसवाँ अध्याय।

वैशम्पायन ने कहा कि फिर विदुरजी के मत में नियत राजा धृतराष्ट्र ने श्रीगंगाजी के तट पर पवित्र लोगों के योग्य महापवित्र स्थान पर निवास किया १ हे भरतर्षभ! वहाँ वनवासी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों के समूह इनके पास आये। उन्हीं से व्याप्त राजा ने कथाओं से उनको प्रसन्नकर और यथाविधि पूजाकर उनको शिष्यों समेत विदा किया २। ३ राजा ने सायंकाल के समय श्रीगंगाजी पर जाकर यशस्विनी गान्धारी समेत विधिपूर्वक शौच करके स्नानादिक किये ४ विदुर आदिक अन्यान्य लोगों ने पृथक् पृथक् तीर्थों पर स्नानकर जपादिक क्रियाएँ कीं ५ हे राजन्! फिर कुन्ती स्नान किये हुए वृद्ध धृतराष्ट्र और गान्धारी को गंगा के किनारे पर ले आई ६ वहां राजा के याचकों ने वेदी तैयार की तब सत्यसंकल्प राजा ने उस वेदी पर अग्नि में हवन किया ७ फिर नियमवान्, जितेन्द्रिय वृद्ध राजा धृतराष्ट्र अपने साथियों समेत गंगा किनारे से कुरुक्षेत्र को गये ८ बुद्धिमान् राजा को वहां आश्रम में पहुँचने पर शतयूप नामक राजर्षि मिले ९ हे शत्रुओं के जीतनेवाले! वे राजर्षि केकय देशों के बड़े राजा थे, जो अपने पुत्र को राज्य देकर वनवासी हुए थे। राजा धृतराष्ट्र उनके साथ व्यासाश्रम में गये वहां राजर्षि शतयूप ने धृतराष्ट्र को विधि के अनुसार उपदेश किया १०। ११ तब कौरवनन्दन राजा धृतराष्ट्र ने वहां दीक्षा पाकर शतयूप के आश्रम में निवास किया १२ बड़े बुद्धिमान् राजर्षि ने व्यासजी की सलाह से वनवास सम्बन्धी सब विधियां राजा को बतलाईं १३ और बड़े साहसी राजा धृतराष्ट्र ने

साथियों समेत तप किया। महाराज ! वल्कल और मृगचर्म धारण करनेवाली देवी गान्धारी कुन्ती समेत राजा के समान ही व्रत करने लगीं। हे राजन् ! दोनों कर्म, मन, चक्षु और वाणी के द्वारा इन्द्रियों को रोककर उत्तम तप में नियत हुईं १५। १६ जिसके शरीर में केवल अस्थि और चर्म शेष रह गया, मांस सूख गया; उस जटा-मृगचर्मधारी, वल्कल से गुप्त शरीर, मोह से रहित राजा ने वहां महर्षि के समान कठिन तपस्या आरम्भ की १७ धर्म-अर्थ के ज्ञाता, बुद्धि के स्वामी, श्रेष्ठ घोर तपस्वी, बाह्याभ्यन्तर से जितेन्द्रिय, दुर्बल, वल्कल-चीरधारी विदुरजी सञ्जय समेत राजा और गान्धारी की सेवा करने लगे १८ ॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि एकोनविंशतितमोऽध्यायः १९ ॥

बीसवाँ अध्याय।

वैशम्पायन ने कहा कि फिर राजा को देखने के निमित्त मुनियों में श्रेष्ठ, महातपस्वी नारद, पर्वत, देवल १ शिष्यों समेत व्यासजी, अन्य अनेक ज्ञानी, सिद्ध, वृद्ध और बड़े धर्मात्मा राजर्षि शतयूप आये २ महाराज ! कुन्ती ने विधि के अनुसार उनका पूजन किया। तपस्वी भी उस सेवा से प्रसन्न हुए ३ हे तात ! वहां महात्मा राजा धृतराष्ट्र को प्रसन्नचित्त करते हुए उन महर्षियों ने धर्मरूप कथाएँ सुनाईं ४ फिर सब वृत्तान्तों के प्रत्यक्ष देखनेवाले देवर्षि नारदजी ने किसी कथा के मध्य में इस कथा को वर्णन किया ५ नारदजी बोले कि शतयूप के पितामह श्रीमान् सहस्रचित्य केकय देशियों के राजा थे जो सब ओर से निर्भय थे ६ धर्मात्मा राजा सहस्रचित्य ने अपने बड़े पुत्र धर्मात्मा को राज्य सौंपकर वनयात्रा की ७ उस महातेजस्वी राजा ने प्रकाशवान् तप का फल पाकर इन्द्रलोक पाया ८ हे राजन् ! प्रथम महेन्द्र के भवन में जाते हुए मैंने उस राजा को कई बार देखा; जिसके पाप तप के द्वारा भस्म हो गये थे ९ इसी प्रकार भगदत्त के पितामह

राजा शैलालय तप के ही बल से महेन्द्रभवन में पहुँचे १० राजा प्रसध वज्रधारी के समान थे; वे भी तप द्वारा यहां से स्वर्ग को गये ११ इसी वनमें मान्धाता के पुत्र राजा पुरकुत्स ने भी बड़ी सिद्धि पाई १२ नदियों में श्रेष्ठ नर्मदा नदी, जिनकी भार्या हुई, वे राजा भी इसी वन में तपकर स्वर्ग को गये १३ राजा शशलोमा बड़े धर्मात्मा थे उन्होंने भी इस वन में अच्छी प्रकार तपस्या करके स्वर्ग पाया १४ हे राजन्! तुम भी व्यासजी की कृपा से इस दुष्प्राप्य तपोवन को पाकर उत्तम गति पाओगे १५ और तपस्या के अन्त में लक्ष्मी से संयुक्त होकर गान्धारी समेत उन महात्माओं की गति पाओगे १६ महाराज! इन्द्र के सम्मुख वर्तमान राजा पाण्डु सदैव तुम्हारा स्मरण करता है। वह सदैव तुमको कल्याण से युक्त करेगा १७ यह तुम्हारी वधू यशस्विनी कुन्ती भी तुम्हारी और गान्धारी की सेवा से पति की सालोक्यता को पावेगी १८ जो कि युधिष्ठिर की माता है और युधिष्ठिर सनातन धर्म है। हे राजन्! हम दिव्य नेत्रों से देखते हैं १९ कि विदुर इस महात्मा युधिष्ठिर के रूप में प्रवेश करेगा और संजय उसके ध्यान से स्वर्ग को जायगा २० वैशम्पायन बोले कि महात्मा धृतराष्ट्र अपनी पत्नी समेत इसे सुनकर प्रसन्न हुए। फिर उन्होंने नारदजी के वचनों की प्रशंसाकर उनकी बड़ी पूजा की २१ हे राजन्! फिर सब ब्राह्मणों ने नारदजी का अत्यन्त पूजन किया। नारदजी राजा धृतराष्ट्र की प्रीति से बारम्बार प्रसन्न हुए २२ बड़े साधु ब्राह्मणों ने नारदजी के वचनों की स्तुति की। राजर्षि शतयूप ने नारदजी से कहा कि २३ हे महातेजस्विन्! बड़ी कृपा हुई, जो भगवान् की ओर से कौरवराज धृतराष्ट्र समेत इनके सब मनुष्यों की और मेरी श्रद्धा बढ़ाई गई २४ हे लोकपूजित, देवर्षे! राजा धृतराष्ट्र की ओर से मैं कुछ प्रार्थना करना चाहता हूँ, कृपया सुन लीजिये २५ आप दिव्य दृष्टि से सब मूल वृत्तान्तों के ज्ञाता हैं।

हे ब्रह्मर्षे ! योग से संयुक्त होकर आप मनुष्यों की नाना प्रकार की गतियों को देखते हैं २६ हे महामुने ! आपने राजाओं की गति, महेन्द्र की सालोक्यता वर्णन की परन्तु इस राजा के लोक वर्णन नहीं किये २७ हे प्रभो ! मैं इस राजा का स्थान भी सुना चाहता हूँ कि वह कैसा है और आपने उसे कब देखा है । उसको मूल समेत मुझसे कहिये २८ इस प्रकार से पूछे जाने पर दिव्यदर्शी महातपस्वी नारदजी ने सभा में बैठकर सबका चित्तविनोदक वचन कहा २९ नारदजी ने कहा कि हे राजर्षे ! मैंने दैवइच्छा से इन्द्रलोक में जाकर, वहाँ शचीपति इन्द्र और राजा पाण्डु को देखा ३० हे राजन् ! वहाँ पर इसकी उस कठिन तपस्या का प्रसंग निकला जिसको कि यह तपता है ३१ वहाँ मैंने इन्द्र के मुख से सुना कि इस राजा की अवस्था के तीन वर्ष बाक़ी हैं ३२ यह राजा धृतराष्ट्र गान्धारी समेत कुबेर के लोक को जायगा । राजाओं के राजा कुबेरजी से सत्कार पाकर ३३ तप से भस्मीभूत पाप हो प्रारब्धवान्, दिव्य भूषणों से अलंकृत यह ऋषिपुत्र धर्मात्मा उस स्वेच्छाचारी विमान की सवारी से ३४ अपनी प्रीति और अनुराग के साथ देवता, गन्धर्व और राक्षसों के लोकों में घूमेगा । आपने मुझ से पूछा है ३५ इसी से मैंने इस देवताओं की गुप्तवार्ता को अत्यन्त प्रीति-पूर्वक तुमसे वर्णन किया । आप लोग शास्त्ररूप धन रखनेवाले और तप से पापों के सुखानेवाले हैं ३६ वैशम्पायन बोले कि राजा धृतराष्ट्र और सब ब्राह्मण लोग देवर्षि के मधुर और प्रिय वचन सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुए ३७ सिद्धगति में प्राप्त नारदजी इस प्रकार कथाओं से धृतराष्ट्र को विश्वास दिलाकर अपनी इच्छा के अनुसार चले गये ३८ ॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि विंशतितमोऽध्यायः २० ॥

इक्कीसवाँ अध्याय ।

वैशम्पायन ने कहा कि हे राजन् ! राजा धृतराष्ट्र के वन जाने पर दुःख, शोक से संयुक्त पाण्डव माता के शोक से व्याप्त हुए १ राजा

धृतराष्ट्र के विषय में वार्तालाप करते हुए ब्राह्मण और सब पुरवासी उस राजा का शोच किया करते थे २ कि वृद्ध राजा निर्जन वन में किस प्रकार से रहते हैं; सौभाग्यवती गान्धारी और कुन्ती कैसे निवास करती हैं ३ वे सुख के योग्य महादुःखी, मृतक पुत्रवाले अन्धे राजर्षि उस महावन में किस दशा में होंगे ४ पुत्रों को न देखती हुई कुन्ती ने बड़ा कठिन कर्म किया। उसने राजलक्ष्मी को त्यागकर वनवास अंगीकार किया ५ भाई की सेवा करनेवाला, ज्ञानी विदुर किस दशा में है और स्वामी का शुभचिन्तक बुद्धिमान् संजय किस प्रकार है ६ वे पुरवासी बाल बच्चों समेत इन सबके शोकों से दुःखित हुए और परस्पर मिलकर जहाँ तहाँ बातें करने लगे ७ अत्यन्त शोकयुक्त पांडव लोग वृद्ध माता को शोचते हुए बहुत थोड़े समय तक पुर में रहे ८ इस प्रकार मृतक पुत्रवाले वृद्ध ताऊ राजा धृतराष्ट्र, सौभाग्यवती गान्धारी और बुद्धिमान् विदुरजी का भी उन्होंने शोच किया ९ उन्हीं के शोच में पाण्डवों की प्रीति उस राज्य, वेदपाठ और स्त्रियों पर नहीं हुई १० बिरादरीवालों के उस घोर नाश को बारम्बार स्मरण करते और राजा को शोचते हुए पाण्डवों को बड़ा वैराग्य हुआ ११ सेनामुख पर बालक अभिमन्यु का नाश, युद्ध में न भागनेवाले वीर कर्ण का मरना १२ द्रौपदी के पुत्र और अन्य नातेदारों की मृत्यु को स्मरण करते हुए वे वीर शोकयुक्त हुए १३ हे भरतवंशिन्, वीर! नर-रत्नों से रहित पृथ्वी को सदैव शोचते हुए उन पाण्डवों ने शान्ति नहीं पाई १४ तब पुत्रों से रहित द्रौपदी और सुभद्रा अधिक प्रसन्न नहीं हुईं १५ आपके उन पूर्व पितामहाओं ने उत्तरा के पुत्र (आपके पिता) परीक्षित को देखकर प्राण धारण किये १६ ॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि एकविंशतितमोऽध्यायः २१ ॥

बाईसवाँ अध्याय।

वैशम्पायन बोले कि माता को प्रसन्न करनेवाले वीर पुरुषोत्तम

पाण्डव इस प्रकार माता का स्मरणकर अत्यन्त दुखी हुए १ पहले वे राज्य के कार्यों में सदैव प्रवृत्त थे, परन्तु उन्होंने फिर राजधानी में बैठकर राज काज भली भाँति नहीं किया २ शोक से युक्त उन लोगों ने किसी वस्तु को भी स्वीकार नहीं किया और न उन्होंने साम्हने आये हुए किसी के वार्तालाप को ही स्वीकार किया ३ शोक के कारण विज्ञान से रहित और गम्भीरता में सागर के समान अजेय वीर पाण्डव अचेत से होगये ४ उन्होंने माता की चिन्ता की कि वह अत्यन्त दुर्बल शरीरवाली कुन्ती किस प्रकार राजा धृतराष्ट्र और गान्धारी की सेवा करती होगी ५ मृतक पुत्रवाले और आश्रयस्थान न रखनेवाले वे अकेले राजा अपनी पत्नी समेत हिंस्र, श्वापद जीवों के निवासस्थान वन में कैसे निवास करते होंगे ६ भाग्यवती मृतक बान्धववाली देवी गान्धारी निर्जन वन में किस प्रकार अपने अन्धे पति के पास रहती होगी ७ इस प्रकार कहनेवाले पाण्डवों को शोच हुआ और धृतराष्ट्र को देखने की इच्छा से उन्होंने वन जाने का विचार किया; तब सहदेव ने राजा को दण्डवत् कर कहा कि बड़ी प्रसन्नता का स्थान है जो मैंने वन जाने के विषय में आपका हृदय देखा ८ । ६ हे राजेन्द्र ! मैं आपकी वृद्धता से, शीघ्र वन जाने के विषय में आपसे कहने का साहस नहीं कर सका; वही बात अब प्रत्यक्ष हुई १० मैं प्रारब्ध से तपस्विनी, तापसी, जटाओं से युक्त, वृद्धा, काश-कुशाओं से घायल शरीर और धृतराष्ट्र एवं गान्धारी की सेवा में प्रवृत्त कुन्ती को देखूंगा ११ महलों की अटारियों में बड़ी होनेवाली, अत्यन्त सुखी माता को वन में अत्यन्त दुखी और थकी हुई कब देखूंगा १२ हे भरतर्षभ ! निश्चय ही मनुष्यों के कर्मादिजनित फल विनाशवान् हैं क्योंकि राजपुत्री कुन्ती वन में महादुखी होकर निवास करती हैं १३ स्त्रियों में श्रेष्ठ द्रौपदी ने सहदेव का वचन सुनकर राजा को नमस्कार और पूजन कर कहा कि १४ हे राजन् ! मैं

उन देवी को कब देखूंगी। जो वे कुन्ती जीती होंगी तो निश्चय ही वे मुझपर प्रीति करेंगी १५ हे राजेन्द्र! सदैव आपका भी विचार हो और आपका चित्त धर्म में प्रवृत्त हो; जो अब आप हमको कल्याण से संयुक्त करोगे १६ महाराज! आप कुन्ती, गान्धारी और ससुर के दर्शन की इच्छा रखनेवाली इन बधुओं को हमसे आगे नियत जानो। हे भरतर्षभ! देवी द्रौपदी के वचनों को सुनकर राजा ने सब सेना के प्रधान लोगों को बुलाकर आज्ञा दी कि १७। १८ बहुत रथ, हाथी रखनेवाली मेरी सेना को सन्नद्ध करो। मैं वन में निवास करनेवाले राजा धृतराष्ट्र को देखूंगा १९ फिर राजा ने महलों के सेवकों को आज्ञा दी कि मेरी नाना प्रकार की सब सवारियों और हजारों पालकियों को तैयार करो २० छकड़े, दूकानें, खज़ाने, कारीगर और खज़ाने के नौकर-चाकर कुरुक्षेत्र के आश्रम को चलें २१ जो कोई पुरवासी राजा को देखना चाहता हो, वह भी अच्छे प्रकार सावधान होकर चले २२ रसोइये और रसोईखाने के प्रबन्धक सब रसोईखाने और नाना प्रकार के मेरे भक्ष्य भोज्यों को छकड़ों पर लादकर ले चलें। प्रातःकाल के समय हमारी यात्रा करने की बात नगर में प्रसिद्ध करो, विलम्ब मत करो। अब मार्ग में भी नाना प्रकार के निवासस्थान बनाओ २३। २४ राजा युधिष्ठिर ने इस प्रकार आज्ञा देकर प्रातःकाल भाइयों समेत यात्रा की। उनके अग्रभाग में स्त्री और वृद्ध मनुष्य थे २५ राजा नगर से बाहर पांच दिनतक मनुष्यों के समूहों की प्रतीक्षा में ठहरे रहे; तब वन को गये २६॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि द्वाविंशोऽध्यायः २२॥

तेईसवाँ अध्याय।

वैशम्पायन ने कहा, कि इसके अनन्तर भरतवंशियों में बड़े साधु युधिष्ठिर ने लोकपालों के समान अर्जुन आदिक वीरों से रक्षित सब प्रजाओं को यह आज्ञा दी १ कि सब लोग घोड़ों को जोड़ जोड़कर

तैयार हों। हे भरतर्षभ! इस आज्ञा को सुनते ही घोड़ों के तैयार करने और सवारों की तैयारी करने के बड़े शब्द हुए २ कोई तो रथ की सवारी से चले और कोई प्रकाशित अग्नि के समान सुवर्ण के रथों की सवारी से चले ३ हे राजन्! इसी प्रकार बहुत से लोग गजेन्द्रों की सवारी से चले; कोई ऊंटों की सवारी से चले और इसी प्रकार नखर तथा प्रास से युद्ध करनेवाले बहुत से मनुष्य पैदल ही चले ४ धृतराष्ट्र के दर्शन की अभिलाषा से पुरवासी और देशवासी कई प्रकार की सवारियों पर सवार होकर युधिष्ठिर के पीछे-पीछे चले। सेनाध्यक्ष गौतम कृपाचार्य भी राजा की आज्ञानुसार सब सेना को साथ लेकर आश्रम को चले ५। ६ इसके पीछे ब्राह्मणों से युक्त, बहुत से सूत, मागध और वन्दियों से स्तुतिमान ७ मस्तक पर श्वेत छत्र से शोभित कौरवराज युधिष्ठिर रथों की बड़ी सेना समेत चले ८ भयकारी कर्मवाला वायु का पुत्र भीमसेन सजे हुए, यन्त्र और धनुष आदिक से युक्त पर्वताकार हाथियों से व्याप्त होकर चला ९ उसी प्रकार अच्छी पोशाक आदि से अलंकृत, सजी हुई ध्वजा और कवच रखनेवाले तीव्रगामी घोड़ों पर सवार नकुल और सहदेव भी चले १० जितेन्द्रिय, महातेजस्वी अर्जुन रथ की सवारी से राजा के पीछे पीछे चला। वह रथ दिव्य श्वेत घोड़ों से युक्त और सूर्य के समान तेजस्वी था ११ अन्तःपुर के सेवकों से रक्षित, पालकी में सवार द्रौपदी आदिक स्त्रियां भी असंख्य धन दान करती हुई चलीं १२ हे भरतर्षभ! उस समय वह पाण्डवी सेना रथ, हाथी और घोड़ों से वृद्धियुक्त, बांसुरी और बीणाओं से शब्दायमान होकर महाशोभायमान हुई १३ हे राजन्! वे श्रेष्ठ कौरवलोग क्रीड़ा के योग्य नदी और सरोवरों के तटों पर निवास करते हुए क्रमपूर्वक चले १४ महातेजस्वी युयुत्सु और धौम्य पुरोहित ने युधिष्ठिर की आज्ञा से नगर की रक्षा की १५ फिर राजा युधिष्ठिर कुरुक्षेत्र में पहुँचे। वहां महापवित्र यमुना नदी को वे क्रम से उतरे १६

राजा ने दूर से ही बुद्धिमान् राजर्षि शतयूप और धृतराष्ट्र के आश्रम को देखा १७ हे भरतर्षभ! इसके पीछे उन सब मनुष्यों ने अत्यन्त प्रसन्न-चित्त, बड़े शब्दों से शब्दायमान उस वन में प्रवेश किया १८॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि त्रयोविंशतितमोऽध्यायः २३॥

चौबीसवाँ अध्याय।

वैशम्पायन बोले, कि फिर वह नम्रतायुक्त पाण्डव दूर से उतरकर पैदल ही राजा के आश्रम में गये १ सब सेना के लोग, देशवासी और उत्तम कौरवों की स्त्रियां भी पैदल ही उनके पीछे चलीं २ वहां जाकर उन पाण्डवों ने मनुष्यों से रहित, मृगसमूहों से व्याप्त और केलों के वनों से शोभित धृतराष्ट्र के आश्रम को देखा ३ फिर व्रत में सावधान प्रथम के तपस्वी लोग, आये हुए पाण्डवों को देखने वहां आये ४ तब आंखों में आंसू भरकर राजा युधिष्ठिर ने उनसे पूछा कि कौरववंश का पोषण करनेवाला हमारा ताऊ कहां गया ५ हे राजन्! उन मुनियों ने कहा कि यमुनाजी में स्नान करने और पुष्प तथा जलघट लाने गया है ६ तब वह पाण्डव पैदल उनके बताये हुए मार्ग से वहां को शीघ्र चले और उन सबको थोड़ी ही दूर पर देखा ७ फिर ताऊ के दर्शनाभिलाषी वे पाण्डव बड़ी शीघ्रता से चले और सहदेव कुन्ती की ओर तीव्रता से दौड़ा ८ वह बुद्धिमान् माता के चरणों का स्पर्श कर बड़े ज़ोर से रोने लगा। अश्रुयुक्तमुखवाली कुन्ती ने भी अपने प्रिय पुत्र सहदेव को ९ भुजाओं से मिलकर और उठाकर गान्धारी से कहा १० इसके पीछे कुन्ती राजा युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्जुन और नकुल को देखकर बड़ी शीघ्रता से सम्मुख गई ११ कुन्ती उन दोनों को खींचती हुई; उन दोनों के आगे चलती थी। वे पाण्डव उसको देखकर पृथ्वी पर गिर पड़े १२ बुद्धिमान् प्रभु, राजा धृतराष्ट्र ने उनको शब्द और स्पर्श से जानकर अच्छे प्रकार विश्वास दिया १३ फिर महात्मा पाण्डवों ने आंसू बहाकर राजा धृतराष्ट्र, गान्धारी और

माता कुन्ती को यथाविधि दण्डवत् की १४ तब सचेत होकर माता से विश्वासयुक्त उन पाण्डवों ने सबके जलकलश आप ले लिये १५ उसी प्रकार उन नरोत्तमों की पत्नियों और अन्य राजाओं की स्त्रियों तथा पुरवासी, देशवासी आदिक स्त्री पुरुषों ने भी उस राजा को देखा १६ राजा युधिष्ठिर ने उन सब मनुष्यों को नाम और गोत्र से, राजा धृतराष्ट्र को पहिचनवाया और उसने उनका सत्कार किया १७ उनसे घिरेहुए और आनन्दाश्रुओं से युक्त राजा धृतराष्ट्र ने अपने को घर में ही सा माना जैसे कि पहले हस्तिनापुर में थे १८ द्रौपदी आदिक वधुओं से डण्वत् किये हुए बुद्धिमान् धृतराष्ट्र गान्धारी और कुन्ती समेत प्रसन्न हुए १९ फिर आश्रम में चलेगये जो सिद्ध, चारणों से सेवित और दर्शक मनुष्यों से तारागणों से पूर्ण आकाश की नाईं भरा हुआ था २० ॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि चतुर्विंशोऽध्यायः २४ ॥

पचीसवाँ अध्याय।

वैशम्पायन बोले कि हे भरतर्षभ! तब राजा धृतराष्ट्र ने कमललोचन, नरोत्तम पाँचों भाइयों समेत आश्रम में निवास किया १ कौरवपति के पुत्र, बड़े वक्षस्थलवाले पाण्डवों के देखने को अनेक देशों से आनेवाले महाभाग तपस्वियों के साथ आसनों पर बैठे २ और बोले; हम जानना चाहते हैं कि इनमें युधिष्ठिर कौन से हैं; भीमसेन, अर्जुन और नकुल, सहदेव कौन से हैं और यशस्विनी द्रौपदी कौन सी है ३ तब सूत सञ्जय ने उन पाण्डवों का—और द्रौपदी प्रभृति कौरवों की सब स्त्रियों का, उन तपस्वियों के सम्मुख वर्णन किया ४ सञ्जय ने कहा कि यह शुद्ध जाम्बूनद सुवर्ण के समान गोरे, महासिंह के समान उच्च शरीर, सुन्दर नासिका और बड़े आयत रक्तनेत्रवाले कौरवराज युधिष्ठिर हैं ५ मतवाले गजेन्द्र के समान चलनेवाले, तप्त शुद्ध सुवर्ण के समान गोरे, बड़े लम्बस्कन्ध और भुजाओंवाले भीमसेन हैं ६

इनके समीप में बड़े धनुषधारी, श्यामवर्ण, तरुण गजेन्द्र के समान शोभायमान, सिंह के समान ऊंचे कन्धे, गज खेल के समान गति और कमल के समान बड़े दिव्य नेत्रवाले ये वीर अर्जुन हैं ७ कुन्ती के सम्मुख विष्णु और महेन्द्र के समान ये पुरुषोत्तम नकुल और सहदेव हैं। स्वरूप, बल और सुन्दर स्वभाव में, इस नरलोक में अनुपम ८ कमल के समान दीर्घ नेत्र, कुछ मध्य दशा को स्पर्श करनेवाली, नीले कमल के समान तेजस्विनी, सुरदेवी के तुल्य द्रौपदी, साक्षात् मूर्तिमती लक्ष्मी के समान नियत हैं ९ हे ब्राह्मणो! इनके समीप में उत्तम सुवर्ण के समान तेजस्विनी, चन्द्रमा की किरणों के समान रूपवाली, मध्य में वे अनुपम चक्रधारी श्रीकृष्णजी की बहिन हैं १० जाम्बूनद नाम के शुद्ध सुवर्ण के समान गोरी सर्पराज की कन्या उलूपी, अर्जुन की भार्या हैं। उत्तम मधुपुष्प के समान शरीरवाली यह राजकन्या चित्राङ्गदा भी अर्जुन की भार्या है ११ बड़े नीले कमलदल के समान वर्णवाली यह उस राजा चमूपति की बहिन है जिसने सदैव श्रीकृष्णजी से ईर्षा की; यह भीमसेन की उत्तम पटरानी है १२ चम्पे के पत्र और पुष्प के समान गोरी और जरासन्ध नाम से विख्यात मगधदेश की यह राजकुमारी माद्री के छोटे पुत्र सहदेव की भार्या है १३ जिसका कमल के समान श्याम वर्ण है और जिसके समान पहले कोई पृथ्वी पर नहीं हुई ऐसी यह कमल के से बड़े नेत्रोंवाली स्त्री माद्री के बड़े पुत्र नकुल की भार्या है १४ तपाये हुए सुवर्ण के समान गोरी यह राजा विराट् की पुत्री अपने पुत्र के साथ है। यह उस अभिमन्यु की भार्या है, जो युद्ध में रथ से विहीन होकर रथसवार द्रोणाचार्यादिकों के हाथ से मारा गया १५ ये श्वेत ओढ़नीवालीं, वृद्ध राजा धृतराष्ट्र और गान्धारी की सौ से अधिक पुत्र-वधुएँ हैं। इनके पुत्र और पति वीरों के हाथों से मारे गये १६ ब्राह्मण भाव से, सत्य बुद्धि, शुद्ध सतोगुणयुक्त सब राजपत्नियाँ मैंने मुख्यतापूर्वक

आपको बतलाईं १७ वैशम्पायन बोले कि वृद्ध कौरवों में श्रेष्ठ राजा धृतराष्ट्र इस प्रकार उन राजकुमारों से मिला और तपस्वियों के चले जाने पर उनसे कुशलक्षेम पूछा १८ सवारियों को छोड़कर, आश्रम-मण्डल से पृथक् सेना के मनुष्यों के नियत होने और स्त्री, बालक एवं वृद्धों के अच्छी प्रकार से बैठ जाने पर योग्यतानुसार सबसे कुशलक्षेम पूछा १६ ॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि पञ्चविंशोऽध्यायः २५ ॥

छब्बीसवाँ अध्याय।

धृतराष्ट्र बोले कि हे महाबाहु युधिष्ठिर! तुम सब भाई, पुरवासी और देशवासियों समेत कुशलपूर्वक हो १ हे राजन्! तुम्हारे आश्रय से जीविका पानेवाले मंत्री, नौकर-चाकर और तुम्हारे गुरु नीरोग हैं २ प्रजा के लोग तुम्हारे देश में नीरोगतापूर्वक निर्भय होकर निवास करते हैं? क्या तुम राजर्षियों से किये हुए शुभ फलदाता प्राचीन व्यवहारों पर चलते हो? क्या न्यायपूर्वक तुम्हारे खज़ाने पूर्ण होते हैं? शत्रु, मित्र और उदासीन राजाओं में उचित कर्म और व्यवहारों को वर्तते हो ३।४ हे भरतर्षभ! क्या तुम अग्रहार नामक दानों समेत ब्राह्मणों का दर्शन करते हो और वे तुम्हारे सुन्दर स्वभाव से प्रसन्न होते हैं ५ शत्रु भी तुम्हारे उत्तम स्वभाव से प्रसन्न हैं, फिर पुरवासी और राज्य के सेवक प्रभृति तथा नाते रिश्तेदार क्यों न प्रसन्न होंगे? हे राजेन्द्र! श्रद्धालु तुम क्या देवता पितरों को पूजते हो ६ हे भरत-वंशिन्! क्या तुम खाने पीने की वस्तुओं से अतिथियों को पूजते हो? क्या तुम्हारे वेदपाठी ब्राह्मण नीतिमार्ग और अपने कर्मों में प्रवृत्त हैं ७ बाल बच्चेवाले क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र भी अपनी रीतियों पर नियत हैं? क्या तुम्हारे बालक, स्त्री और वृद्ध शोकहीन होकर प्रार्थना करते हैं ८ हे नरोत्तम! क्या तुम्हारे घर में बहिन, बेटी और वधू आदि पूजित हैं? महाराज! क्या यह राजर्षिवंश तुम्हें राजा पाकर

उचित रीति पर नियत हैं ९ और तुम्हारी अपकीर्ति तो नहीं होती है ? वैशम्पायन बोले, कि न्यायपूर्वक वार्तालाप में कुशल, ज्ञानी राजा युधिष्ठिर ने इस प्रकार पूछे जाने पर राजा धृतराष्ट्र से कुशल-क्षेम-पूर्वक कहा कि १० हे राजन् ! क्या आपका तप वृद्धि पा रहा है और आपको बाह्याभ्यन्तर से जितेन्द्रियता प्राप्त है और सेवा करनेवाली यह मेरी माता थकावट से रहित है ११ हे राजन् ! इसका वनवास सफल होगा। यह मेरी ताई शीत वायु और मार्ग चलने से दुर्बल १२ घोर तप से युक्त देवी गान्धारी अपने बड़े पराक्रमी और क्षत्रिय धर्म में नियत उन मृत पुत्रों को तो नहीं शोचती है १३ यह सदैव हम पापियों को शाप तो नहीं देती है ? हे राजन् ! विदुरजी कहाँ हैं, हम उनको देखेंगे। वह सञ्जय कुशलतापूर्वक तप में नियत है १४ वैशम्पायन बोले कि इस प्रकार के युधिष्ठिर के वचन सुनकर धृतराष्ट्र ने राजा युधिष्ठिर को उत्तर दिया कि हे पुत्र ! विदुर अच्छी तरह है और घोर तप में नियत है १५ वह वायुभक्षी, निराहार, दुर्बल, शरीर हड्डियों से तना हुआ कभी-कभी इस निर्जन वन में किसी ब्राह्मण को दिखाई पड़ता है १६ ये बातें हो ही रही थीं कि जटाधारी, बैठा मुख, दुर्बल, नंगा, वन की धूलि से लिपटा, मैला १७ विदुर दूर से ही दिखाई पड़ा। तब राजा से सबने कहा कि हे राजन् ! वह विदुर आश्रम की ओर दृष्टि किये अकस्मात् लौटा है १८ अकेले राजा युधिष्ठिर, घोर वन में प्रवेश करनेवाले विदुर के पीछे दौड़े। विदुर कहीं दिखाई देता था और कहीं दृष्टि से गुप्त हो जाता था १९ वहां जाकर राजा ने कहा कि हे विदुरजी ! मैं आपका प्यारा राजा युधिष्ठिर हूं। इस प्रकार कहते हुए राजा युधिष्ठिर उपायपूर्वक उसके पीछे दौड़े २० फिर वन के मध्य में बुद्धिमानों में श्रेष्ठ विदुरजी वहां एकान्त स्थान में किसी वृक्ष का आश्रय लेकर नियत हुए २१ बड़े बुद्धिमान् राजा युधिष्ठिर ने अत्यन्त दुर्बल और केवल स्वरूप से ही विदित होनेवाले बुद्धिमान्

विदुरजी को पहिचाना २२ और कहा कि मैं युधिष्ठिर हूं । विदुरजी के कान में यह वचन कहकर राजा आगे हुए और उनको प्रणाम किया २३ फिर उसने नेत्र फैलाकर राजा को देखा । दृष्टि में कुशल बुद्धिमान् विदुरजी ने उसमें दृष्टि लगाकर २४ अंगों से अंगों में प्रवेशकर, प्राणों को प्राणों में और इन्द्रियों को इन्द्रियों में पहुँचाया २५ तेज से अग्निरूप विदुरजीने योगबल से धर्मराज राजा युधिष्ठिर के शरीर में प्रवेश किया । धर्मराज युधिष्ठिर ने विदुरजी के शरीर को उसी प्रकार नेत्र खुले हुए और वृक्ष के आश्रय से टिके हुए निश्चेष्ट देखा २६।२७ तब महातेजस्वी, धर्मराज ने अपने को कई गुना बलवान् माना । हे राजन् ! फिर महातेजस्वी विद्यावान् पाण्डव ने अपने उन सब प्राणयोग और धर्मों का स्मरण किया जैसा कि व्यासजी ने कहा था २८। २९ धर्मराज इसके संस्कार और दाह करने के अभिलाषी हुए, तब आकाशवाणी हुई कि हे राजन् ! यह विदुर नाम तुमको दाह न करना चाहिये । यहां इसी प्रकार इसको छोड़ो; यही सनातन धर्म है ३० । ३१ हे भरतवंशिन् ! इसके लोक सन्तानक नाम होंगे । इसने संन्यास धर्म पाया है । हे शत्रुओं के जीतनेवाले ! यह विदुर शोचने के योग्य नहीं है ३२ इस प्रकार से कहे गये धर्मराज ने लौटकर सब वृत्तान्त राजा धृतराष्ट्र के सम्मुख वर्णन किया ३३ तब तेजस्वी राजा धृतराष्ट्र और भीमसेनादिक पाण्डवों समेत सब मनुष्यों को अत्यन्त अचरज हुआ ३४ राजा ने प्रसन्न होकर धर्मपुत्र से कहा कि मेरे जल, फल और मूल को लीजिये ३५ हे राजन् ! मनुष्य जिस खाने पीने की वस्तु को अपने पास रखता है, उसका अतिथि भी वही सामान पाता है ३६ यह सुन धर्मराज ने राजा से कहा, कि यथार्थ है ३७ और सब छोटे भाइयों समेत राजा के दिये हुए फलमूलोंको भोजन किया । फिर वृक्षोंके मूलोंपर निवास करनेवाले और फल, मूल, जल भोजन करनेवाले वे सब उस रात्रि को वहीं रहे ३८ ॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि षड्विंशोऽध्यायः २६ ॥

सत्ताईसवाँ अध्याय।

वैशम्पायन बोले कि हे राजन्! इसके पीछे पवित्रकर्मी पाण्डवों की वह कल्याणरूप, नक्षत्रों से युक्त रात्रि उसी आश्रम में व्यतीत हुई १ फिर वहां पर धर्म, अर्थ का लक्षण रखनेवाले विचित्र पदों से युक्त और नाना प्रकार की श्रुतियों से संयुक्त कथाएँ हुईं २ हे राजन्! पाण्डवों ने बहुमूल्य शयन त्यागकर माता के चारों ओर पृथ्वी पर ही शयन किया ३ बड़े साहसी राजा धृतराष्ट्र ने जो आहार किया था, वही आहार कर उन नरवीरों ने रात बिताई। रात्रि व्यतीत होने पर पूर्वाह्ण काल के जपादिक से निवृत्त होकर राजा युधिष्ठिर ने भाइयों समेत आश्रममण्डल देखा ४।५ रानी आदिक स्त्रियों और दास-दासी, पुरोहित समेत राजा युधिष्ठिर ने राजा धृतराष्ट्र की आज्ञा से सुखपूर्वक इच्छानुसार विहार किया ६ वहां अग्नि से अच्छे प्रकार प्रकाशित बेदियों को देखा। उन अग्नियों के पास अभिषेक और होम करनेवाले मुनि नियत थे ७ मुनियों की वे वेदियां वनैले फूलों के ढेर और घृत के ऊंचे उठे हुए धुएँ से बाहरी शरीरयुक्त थीं ८ हे प्रभो! जहां तहां निर्भय मृगों के यूथ, शरोद गानेवाले निर्भय नीलकंठादिक पक्षियों के केका शब्द, दात्यूह नाम पक्षियों के शब्द, कर्ण और चित्त को सुखद कोकिलाओं की कूक से युक्त ९।१० वेदपाठी, फल-मूलाहारी महर्षियों के शब्द से भी वह आश्रम कहीं कहीं अलंकृत और शोभायमान था ११ हे राजन्! वहां राजा ने उन तपस्वियों के निमित्त भेटें दीं। सुवर्ण के कलश तांबे के घट १२ मृगचर्म, छत्र, कंबल, स्रक्, स्तम्भ, कमण्डलु, स्थाली, पिठर १३ लोहे के पात्र और नाना प्रकारके पात्र और अन्य प्रकार के पात्र जो साधु जितने चाहता था, उसे उतने ही दिये १४ इस प्रकार सम्पूर्ण पृथ्वी के स्वामी धर्मात्मा राजा युधिष्ठिर आश्रममण्डल में घूमकर और उस धन को बांटकर लौट आये १५ तब जपादिक से निवृत्त, सावधान महाराज धृतराष्ट्र को गान्धारी समेत बैठे हुए देखा १६ धर्मात्मा

युधिष्ठिर ने शिष्य के समान झुकी हुई, समीप में नियत सुकर्मियों के आचरणों से युक्त अपनी माता कुन्ती को देखा १७ वे उन राजा की प्रतिष्ठा कर अपना नाम सुना, बैठने की आज्ञा पाकर कुशासन पर बैठ गये १८ हे भरतर्षभ ! भीमसेनादिक पाण्डव भी दण्डवत् कर चरण छूकर राजा की आज्ञा से बैठ गये १९ उन पाण्डवों के मध्य में राजा धृतराष्ट्र ऐसे शोभित हुए जैसे कि ब्राह्मणों की लक्ष्मी को धारण करते हुए बृहस्पतिजी देवताओं में शोभित होते हैं २० इस प्रकार उनके बैठ जाने पर शतयूप आदिक कुरुक्षेत्र निवासी राजर्षि और महर्षिलोग वहां आये २१ देवर्षियों से सेवित, शिष्यों समेत महातेजस्वी भगवान् व्यास ऋषि ने भी आकर राजा को दर्शन दिया; तब राजा धृतराष्ट्र, पराक्रमी युधिष्ठिर और भीमसेन आदिक ने उठकर ऋषियों को दण्डवत् की २२ । २३ फिर शतयूप आदिक से व्याप्त व्यासजी ने राजा धृतराष्ट्र से कहा कि बैठो २४ व्यासजी उस उत्तम कुशासन पर, जो कि मृगचर्म से युक्त और उनके निमित्त विचारा गया था, बैठ गये २५ व्यासजी की आज्ञा से बड़े तेजस्वी वे सब श्रेष्ठ ब्राह्मण चारों ओर बिस्तरों पर बैठ गये २६ ॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि सप्तविंशोऽध्यायः २७ ॥

अट्ठाईसवाँ अध्याय ।

वैशम्पायन बोले कि महात्मा पाण्डवों के बैठ जाने पर सत्यवती के पुत्र व्यासजी ने कहा १ कि हे वीर, राजा धृतराष्ट्र ! क्या तुम्हारा तप होता है और तुम्हारा मन वनवास में प्रसन्न होता है २ हे निष्पाप राजा धृतराष्ट्र ! पुत्रनाश का शोक तो तुम्हारे हृदय में नहीं है और तुम्हारे सब ज्ञान शुद्ध हैं ३ क्या तुम दृढ़ बुद्धि से वनवास की रीति पर प्रसन्न होते हो और गान्धारी वधू तो शोक से पूर्ण नहीं होती ४ यह बड़ी ज्ञानवती, बुद्धिमती, धर्म, अर्थ, उत्पत्ति और नाश की मुख्यता को जाननेवाली शोच तो नहीं करती है ? हे राजन् ! अहं-

कार से रहित यह कुन्ती तुम्हारी सेवा करती है, जो पुत्रों को छोड़ गुरु की सेवा में तत्पर है ५। ६ क्या यह बड़े मन और बुद्धि का रखनेवाला धर्मपुत्र राजा युधिष्ठिर तथा भीमसेन, अर्जुन, नकुल और सहदेव भी विश्वासयुक्त धैर्यवाले हैं ७ क्या तुम इनको देखकर प्रसन्न होते हो ? क्या तुम्हारा चित्त निर्मल है ? हे राजन् ! क्या तुम ज्ञानी और शुद्ध चित्त हो ८ हे राजन् ! शत्रुता न करना, सत्यता और क्रोध न करना—ये तीन बातें सब जीवों में श्रेष्ठ हैं ९ हे भरतर्षभ ! क्या वनवास से तुम्हें मोह नहीं है और मूल, फलादि भोजन की वस्तुएँ तुम्हारे आधीन हैं ? क्या व्रत भी होता है १० हे राजेन्द्र ! बड़े महात्मा और बुद्धिमान्, धर्मावतार विदुर का इस विधि से लय होना भी तुमको विदित है ११ बड़े बुद्धिमान्, महायोगी, महात्मा, मन के जीतनेवाले धर्म ने माण्डव्यऋषि के शाप से विदुर का शरीर पाया था १२ देवताओं में बृहस्पति और असुरों में शुक्र भी वैसे बुद्धिमान् नहीं हैं जैसे कि विदुर बुद्धिमान् थे १३ बहुत काल के सञ्चित सनातन धर्म और तपोबल को व्यय कर वे माण्डव्य ऋषि के शाप से मुक्त हुए १४ पूर्व समय में ब्रह्माजी की आज्ञा से वे बुद्धिमान् निजबल से राजा विचित्रवीर्य के क्षेत्र में मुझसे उत्पन्न हुए १५ महाराज ! वे देवताओं के भी देवता, सनातन तुम्हारे भाई थे। पण्डितों ने मन से ध्यानकर जिस को धर्म जाना १६ जो तप से युक्त, सनातन धर्म, सत्यता और बाह्याभ्यन्तर से इन्द्रियजित होकर दान और अहिंसा के द्वारा अच्छी वृद्धि देता है; जिस ज्ञानी बड़े बुद्धिमान् के योगबल से कौरवराज युधिष्ठिर उत्पन्न हुआ; वह यह साक्षात् धर्म ही है १७। १८ जैसे कि अग्नि और वायु सर्वत्र है और जल, पृथ्वी तथा आकाश सब स्थानों पर हैं; उसी प्रकार धर्म भी इस लोक और परलोक में नियत है १९ हे राजेन्द्र ! सब स्थावर-जंगम जगत् को व्याप्तकर सर्वत्र वर्तमान धर्म उनको दिखाई देता है जो देवताओं के भी देवता और

सब पापों से रहित होकर सिद्ध हैं २० जो धर्म है, वह विदुर है; जो विदुर है, वह युधिष्ठिर है। हे राजन्! वह धर्म का अवतार पाण्डव तुम्हारे आगे सेवक के समान मौजूद है २१ वह बुद्धिमानों में श्रेष्ठ, महात्मा, तुम्हारा भाई इस महात्मा युधिष्ठिर को देखकर; बड़े योग से युक्त हो इसी में प्रवेश कर गया २२ हे भरतर्षभ! तुमको भी थोड़े ही समय में कल्याण युक्त करूंगा। हे पुत्र! सन्देह निवृत्त करने के लिये मुझको आया ही जाना करो २३ पूर्व समय में जो तपरूप फल संयुक्त अपूर्व कर्म लोक में कहीं किसी ऋषि और महर्षियों से नहीं किया गया; वह तुमको दिखलाता हूं २४ हे निष्पाप, राजा धृतराष्ट्र! तुम मुझसे कौनसा अभीष्ट देखना, सुनना और प्राप्त करना या पूछना चाहते हो; मैं उसको अवश्य करूंगा २५॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वण्यष्टाविंशोऽध्यायः २८॥

उन्तीसवाँ अध्याय।

जनमेजय ने पूछा कि कुन्ती वधू और भार्या समेत नरोत्तम राजा धृतराष्ट्र के वनवासी होने १ विदुरजी के सिद्ध और धर्मराज में प्रवेश करने तथा आश्रम मण्डल में सब पाण्डवों के नियत होने पर २ बड़े तेजस्वी व्यास महर्षि ने जो यह कहा कि मैं अपूर्व कर्म करूंगा; उसे मुझसे कहिए ३ धर्म से अच्युत कौरवराज युधिष्ठिर कब तक अपने साथियों समेत वहां ठहरे रहे ४ हे निष्पाप! बतलाइये कि वहां महात्मा पाण्डव सेना और स्त्रियों समेत क्या आहार करते थे ५ वैशम्पायन ने कहा कि हे राजन्! राजा धृतराष्ट्र की आज्ञा से पाण्डव लोग विश्रामकर नाना प्रकार की खानेपीने की वस्तुएँ भोजन करते थे ६ हे निष्पाप! उन लोगों ने सेना और स्त्रियों समेत एक महीना वन में विहार किया। फिर वहां व्यासजी आये; उनका वृत्तान्त मैं तुमसे कह चुका हूं ७ हे राजन्! कथाओं के द्वारा, राजा के सम्मुख व्यासजी के पास उन सबके नियत होने पर, महातपस्वी

देवल, पर्वत, नारद, विश्वावसु, तुम्बुरु और चित्रसेन प्रभृति अन्यान्य मुनि लोग भी वहां आये ८। ९ तब धृतराष्ट्र से आज्ञा पा महातपस्वी कौरवराज युधिष्ठिर ने न्यायानुसार उनका पूजन किया १० फिर वे सब युधिष्ठिर से पूजा पाकर पवित्र, श्रेष्ठ और मोर पंखों से शोभित आसनों पर बैठ गये ११ हे कौरव! उनके बैठ जाने पर बुद्धिमान् राजा धृतराष्ट्र पाण्डवों के बीच में बैठ गये १२ फिर गान्धारी, कुन्ती, द्रौपदी, सुभद्रा और अन्यान्य स्त्रियां मिलकर बैठ गईं १३ हे राजन्! वहां दिव्य और धर्म से सम्बन्धयुक्त, प्राचीन ऋषियों की कथा देवता और असुरों के वृत्तान्त से मिश्रित हुई १४ सब वेदज्ञों में उत्तम, वक्ताओं में श्रेष्ठ, महाप्रीतिमान् व्यासजी ने कथा के अन्त में बुद्धिरूप नेत्र रखनेवाले राजा धृतराष्ट्र से कहा १५ कि हे राजेन्द्र! मुझको विदित है कि पुत्रशोक से तुम्हारे जलते हुए हृदय में जो कहने की इच्छा है १६ और गान्धारी के हृदय में जो दुःख सदैव नियत है १७ और कुन्ती तथा द्रौपदी के हृदय में जो खेद है एवं श्रीकृष्णजी की बहिन सुभद्रा पुत्रनाश के जिस कठिन दुःख को रखती है उसे मैं जानता हूं १८ हे कौरवनन्दन, धृतराष्ट्र! इसी से मैं तुम सबके इस संयोग को सुनकर १९ सन्देह दूर करने यहां आया हूं। अब ये देवता, गन्धर्व और सब महर्षि २० लोग बहुत समय के सञ्चित मेरे तपोबल को देखें। महाराज! अब तुम जो कुछ कहो उस तुम्हारी प्रार्थना को पूरी करूं २१ मैं वर देने में समर्थ हूं; मेरे तप के फल को देखो। बड़े तपस्वी व्यासजी के इन वचनों को सुनकर उन राजेन्द्र ने २२ एक मुहूर्त विचारकर कहा कि मैं धन्य हूं, कृतकृत्य हूं; जो आपने मेरे ऊपर कृपा की। मेरा जीवन सफल है, जो अब यहां मेरा संयोग आप सरीखे साधुओं के साथ हुआ है। अब मैं आप महात्मा की कृपा से अभीष्ट गति को भी प्राप्त करूंगा २३। २४ हे तपोधन, ऋषियो! मैं आप सरीखे ब्रह्मरूपों से मिलकर, आपके दर्शनों से ही निस्सन्देह पवित्र हुआ २५

हे निष्पाप ऋषियो! परलोक से भी मुझको भय नहीं है। परन्तु मुझ लोभी और पुत्रों के स्मरण करनेवाले का मन उस दुर्बुद्धि अभागे दुर्योधन के अन्यायों से सदैव दुःख पाता है जिसकी पाप बुद्धि से ये पाण्डव छले गये २६। २७ और जिसके कारण ये सब संसार के लोग घोड़े हाथियों समेत नाश हुए। नाना देशों के स्वामी, राजा लोग २८ मेरे पुत्र के निमित्त आकर काल के आधीन हुए। ये सब शूर अपने वृद्धों, स्त्रियों और मन से प्यारे प्राणों को २९ त्यागकर यमलोक को गये। हे ब्राह्मण! जो युद्ध में मित्र के लिये मारे गये हैं उनकी कौन गति है ३० इसी प्रकार मेरे उन पुत्र पौत्रों की कौन गति होगी जो युद्ध में मारे गये? शन्तनु के पुत्र बड़े पराक्रमी भीष्मजी को ३१ और ब्राह्मणों में बड़े साधु द्रोणाचार्य को मरवाकर मेरा चित्त अत्यन्त दुःख पाता है ३२ पृथ्वी का राज्य चाहनेवाले, मित्रों के शत्रु मेरे अज्ञानी पुत्र से, यह प्रकाशित वंश विनाश किया गया। इस सबका स्मरणकर मैं अहर्निश जलता ३३ दुःख और शोक से घायल होकर शान्ति नहीं पाता हूं ३४ वैशम्पायन बोले कि हे जनमेजय! राजर्षि के बहुविध विलाप को सुनकर गान्धारी का शोक फिर नवीन हो गया ३५ कुन्ती, द्रौपदी, सुभद्रा और धृतराष्ट्र की सब वधुएँ आदि स्त्री पुरुषों का शोक फिर नवीन हो आया ३६ पुत्र शोक से व्याकुल, गान्धारी ने हाथ जोड़, खड़ी होकर ससुर से कहा ३७ कि हे मुनियों में श्रेष्ठ, प्रभु, व्यासजी! मृतक पुत्रों के शोच में राजा के सोलह वर्ष व्यतीत हुए परन्तु शान्ति नहीं होती है ३८ हे महामुने! पुत्रशोक से पूर्ण बारम्बार श्वास लेते हुए राजा धृतराष्ट्र रात्रियों में कभी नहीं सोते हैं ३९ तुम तप के बल से दूसरे लोक उत्पन्न करने में भी समर्थ हो; फिर परलोक गत राजा के पुत्रों को दिखाने में क्यों न समर्थ होगे ४० सब पुत्र वधुओं में बड़ी प्यारी इस कृष्णा द्रौपदी के पुत्र और भाई आदिक मारे गये हैं, यह अत्यन्त

शोच करती है ४१ इसी प्रकार कल्याण वचन कहनेवाली, श्रीकृष्ण की बहिन, प्रीतिमती सुभद्रा अभिमन्यु के मरने से अत्यन्त शोच करती है ४२ भूरिश्रवा की अङ्गीकृत यह प्रीतिमती भार्या पति के शोक से अत्यन्त पीड़ित होकर अधिकता से शोच करती है ४३ इसका ससुर, बुद्धिमान् कौरव बाह्लीक बड़े युद्ध में मारा गया और पिता समेत सोमदत्त भी मारा गया ४४ आपके इन बड़े बुद्धिमान् धृतराष्ट्र के, युद्ध में मुख न मोड़नेवाले सौ पुत्र युद्धभूमि में मारे गये ४५ उनकी ये सौ भार्याएँ दुःख और शोक से व्यथित बारम्बार मेरे और राजा के शोक को बढ़ाती हैं ४६ हे महामुने! ये सब बड़े शोक के शब्दों समेत मेरे पास रहती हैं। जो शूर, महात्मा, महारथी मेरे ससुर ४७ सोमदत्त आदिक हैं, हे प्रभो! उनकी कौन गति है? हे ब्राह्मणोत्तम! ये राजा आपकी कृपा से शोक से निवृत्त हों ४८ और इसी प्रकार मैं तथा आपकी यह कुन्ती वधू शोकरहित हों। गान्धारी के कहने पर व्रत से रूपान्तरित कुन्ती ने ४९ उस गुप्त जन्म लेनेवाले, सूर्य के समान तेजस्वी, पुत्र कर्ण का स्मरण किया। दूर की बातें सुनने और देखनेवाले, वरदाता व्यास ऋषि ने ५० उस अर्जुन की माता देवी को महा दुःखी देखा; तब उन्होंने उससे कहा कि तुम्हें जो बात पूछनी है ५१ और जो तुम्हारे मन में है; हे महाभागे! तुम वह सब पूछो। तब प्राचीन वृत्तान्त को प्रकट करती हुई लज्जायुक्त कुन्तीने शिर से प्रणामकर ससुर से कहा ५२। ५३॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वण्येकोनत्रिंशोऽध्यायः २९॥

तीसवाँ अध्याय।

कुन्ती बोली कि हे भगवन्! आप मेरे ससुर और देवताओं के भी देवता हो। हे मेरे बड़े देवता! तुम मेरी सत्य बात सुनो १ तपस्वी, क्रोधी दुर्वासा ब्राह्मण मेरे पिता के यहा भिक्षा मांगने के लिये आये २ निरपराधिनी मैंने अपने चित्त की भीतरी, बाहरी पवित्रता से और अवगुणों

के त्याग से उनको प्रसन्न किया। कभी क्रोध के स्थान में क्रोधित नहीं हुई ३ वे अच्छे प्रकार पूजित, अत्यन्त प्रसन्नचित्त मुनि मुझे वर देनेवाले हुए। उन्होंने मुझसे कहा कि तुझको अवश्य वर लेना चाहिये ४ तब मैंने शाप के भय से उनसे कहा कि जैसा आप चाहते हैं, वैसाही हो। तब उन्होंने फिर मुझसे कहा ५ हे शुभमुखि, कल्याणि! तू धर्म की माता होगी और जिन जिन देवताओं को बुलावेगी, वे सब देवता तेरे आधीन होंगे ६ यह कहकर वे अन्तर्धान होगये। मैं आश्चर्ययुक्त हुई; सत्य दशाओं में स्मरण शक्ति का नाश नहीं होता है ७ फिर महल की अटारी पर चढ़कर उदय हुए सूर्य को देख मैंने ऋषि के उस वचन का स्मरण कर इच्छा की ८ लड़कपन से मैं उस दोष को न जानती थी। इसके पीछे सहस्रांशु सूर्य देवता अपने शरीर के दो भागकर एक शरीर से आकाश में, और दूसरे शरीर से पृथ्वी पर मेरे सम्मुख आगये। उन्होंने एक शरीर से तो लोकों को प्रकाशित किया और दूसरे शरीर से मेरे पास आये ९। १० मेरे पास आकर कम्पायमान मुझसे कहा कि वर मांगो। मैंने उनको शिर से प्रणाम कर कहा कि जाइये ११ इस पर तीक्ष्णांशु सूर्य ने कहा कि मेरा निरर्थक बुलाना योग्य नहीं है। मैं तुझे और उस ब्राह्मण को भस्म करूंगा जिसने तुझे वर दिया है १२ फिर उस अभीष्ट करनेवाले ब्राह्मण को शाप से बचाने के लिये मैंने सूर्य देवता से कहा कि हे देवता! मेरा पुत्र तुम्हारे समान हो १३ तब सूर्य ने तेज से मुझमें प्रवेश किया और मुझको मोहित कर 'तेरे पुत्र होगा' यह कहकर स्वर्ग को चले गये १४ फिर महलों के भीतर, पिता से गुप्त वृत्तान्तकर मैंने गुप्त जन्म लेने-वाले अपने बालक कर्ण को जल में छुड़वा दिया १५ उस देवता की कृपा से मैं कन्या ही बनी रही। हे वेदपाठिन्! जैसा कि उस ऋषि ने मुझसे कहा था १६ मुझ अज्ञान स्त्री से जना हुआ वह पुत्र भी त्यागा गया; यह बात मुझको जलाती है। यह पाप हो या न हो परन्तु मैंने उसको

प्रकट कर दिया। हे भगवन्! आप उसको दिखलाने की अभिलाषा पूर्ण करें १७। १८ हे निष्पाप, श्रेष्ठ मुने! राजा के हृदय की इच्छा आपको विदित ही है। राजा की वह अभिलाषा अभी पूर्ण हो १९ इस प्रकार के कुन्ती के वचन सुनकर वेदज्ञों में श्रेष्ठ व्यासजी ने उत्तर दिया कि अच्छा; यह सब प्राप्त होने योग्य है और यह इसी प्रकार है जैसा कि तुमने कहा है २० तुम्हारा अपराध नहीं हुआ; क्योंकि तुम कन्याभाव में थीं। ऐश्वर्यवान् देवता शरीरों में प्रवेश करते हैं २१ देवताओं के समूह संकल्प, दृष्टि, स्पर्श, वाणी और भोग पांच प्रकार से संतान उत्पन्न करते हैं २२ हे कुन्ती! तुमको मनुष्यधर्म में नियत होकर मोह करना उचित नहीं है। तुम्हारे मनका सन्ताप दूर हो २३ क्योंकि बलवानों के सब कर्म शुभ फलदायक हैं; बलवानों का सब पवित्र है; सामर्थ्यवानों का ही सब धर्म है, पराक्रमियों का ही सब निजधन है २४॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि त्रिंशोऽध्यायः ३० ॥

इकतीसवाँ अध्याय।

व्यासजी बोले कि हे कल्याणि, गान्धारी! तू पुत्र, भाई और बान्धवों को पिताओं समेत ऐसे देखेगी जैसे कि रात्रि बीतने से सोकर उठनेवालों को देखते हैं १ कुन्ती कर्ण को; सुभद्रा अभिमन्यु को; द्रौपदी पांचों पुत्र, पिता आदि अपने सब भाइयों को देखेगी २ तभी मेरे हृदय में यह निश्चय हुआ था जब मुझसे राजा धृतराष्ट्र, कुन्ती और तुमने कहा था ३ वे सब नरोत्तम क्षत्रियधर्म में नियत महात्मा तुम्हारे शोचने के योग्य नहीं हैं क्योंकि गुणों से युक्त होकर उन सबने मरण पाया। हे निर्दोष! वह देवकार्य उसी प्रकार से अवश्य होनहार था; इसी हेतु से देवताओं के सब अंशों ने पृथ्वीतल पर अवतार लिया था ४। ५ उन गन्धर्व, अप्सरा, पिशाच, गुह्यक, राक्षस पवित्र मनुष्य ६ देवता, दानव और निर्मल देवर्षियों ने अवतार लिया। उन्होंने ही कुरुक्षेत्र की युद्धभूमि में मरण पाया ७ धृतराष्ट्र

नाम से प्रसिद्ध जो बुद्धिमान् गन्धर्वराज है, वही धृतराष्ट्र नरलोक में तुम्हारा पति है ८ पाण्डु को मरुद्गण से जानो, जो कि श्रेष्ठतम होकर धर्म से कभी च्युत नहीं होता था। विदुर और राजा युधिष्ठिर धर्म के अंश से उत्पन्न हुए जानो ९ भीम को वायुगण से जानो। हे शुभदर्शन! तुम दुर्योधन को कलियुग जानो; शकुनी को द्वापर और दुश्शासनादिकों को राक्षस जानो; तथा इस पाण्डव अर्जुन को नर-रूप ऋषि जानो १०। ११ श्रीकृष्ण को नारायण; नकुल-सहदेव को अश्विनीकुमार जानो और हे सुन्दरि! अपने दो शरीरों से संसार को प्रकाशित करनेवाले कर्ण को सूर्यरूप जानो १२ पाण्डव अर्जुन का प्रसन्नता उत्पन्न करनेवाला, जो पुत्र अभिमन्यु छः महारथियों के हाथ से मारा गया; वह चन्द्रमा था। अपने योग से ही वह दो रूपोंवाला होगया था १३। १४ जो धृष्टद्युम्न द्रौपदी के साथ अग्नि से उत्पन्न हुआ; उसको अग्नि का शुभभाग जानो और शिखण्डी को राक्षस जानो १५ द्रोणाचार्य को बृहस्पति का अंश और अश्वत्थामा को रुद्र से उत्पन्न जानो। गंगाजी के पुत्र भीष्म को मनुष्यशरीर प्राप्त करने-वाले वसु देवता जानो १६ हे ज्ञानवति, सुन्दरि! इस प्रकार ये देवता मनुष्यशरीर पा कार्य समाप्त होने पर स्वर्ग को गये १७ परलोक के भय से जो सबके हृदय में दुःख बहुत काल से है; अब मैं उसको निवृत्त करूंगा १८ आप सब मिलकर गंगाजी के तट पर चलो। वहां तुम युद्धभूमि में मरे हुए सब लोगों को देखोगे १९ वैशम्पायन बोले कि सब लोग व्यासजी का वचन सुनकर सिंहनाद करते हुए श्रीगंगाजी के सम्मुख चले २० धृतराष्ट्र ने अपने मन्त्री, पांचों पाण्डव, श्रेष्ठ मुनि और आये हुए गन्धर्वों समेत यात्रा की २१ सब मनुष्यों का समूह क्रम से श्री गंगाजी पर पहुँचा। सबने प्रीति और सुखपूर्वक वहां निवास किया २२ बुद्धिमान् राजा धृतराष्ट्र ने जिसके आगे स्त्री और वृद्ध लोग थे, पाण्डव आदि साथियों समेत अभीष्ट स्थान पर निवास

किया २३ मृतक राजाओं को देखने के अभिलाषी, रात्रि की बाट देखते हुए उन लोगों को वह दिन सौ वर्ष के समान बीता २४ जब सूर्य देवता, पर्वतों में श्रेष्ठ पवित्र अस्ताचल को गये तब उन अभिषेक करनेवालों ने सन्ध्या आदिक कर्म किये २५॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वण्येकत्रिंशोऽध्यायः ३१॥

बत्तीसवाँ अध्याय।

वैशम्पायन बोले कि फिर सायंकाल की सन्ध्या कर वे सब लोग रात्रि के प्रारम्भ में व्यासजी के पास गये १ धर्मात्मा, पवित्रात्मा राजा धृतराष्ट्र--पाण्डव और ऋषियों समेत व्यासजी के पास बैठ गये २ गान्धारी समेत स्त्रियां भी बैठ गईं; पुरवासी और देशवासी सब मनुष्य भी अवस्था के क्रम से यथायोग्य स्थानों पर बैठ गए ३ तब महा-तेजस्वी, महामुनि व्यासजी ने श्रीगंगाजी के पवित्र जल में प्रवेश कर सब लोगों का आह्वान किया ४ पाण्डव और कौरवों के जो जो शूरवीर युद्ध करनेवाले थे, वे सब और अनेक देशों के महाभाग राजाओं का ५ ऐसा कठिन शब्द जल के पास हुआ जैसा कि प्रथम कौरवीय और पाण्डवीय सेनाओं में हुआ था ६ इसके पीछे वे सब राजा लोग जिनके अग्रगामी भीष्म और द्रोणाचार्य थे, सेना समेत जल से बाहर निकले ७ अपने पुत्र और सेना समेत दोनों राजा विराट और द्रुपद बाहर निकले। द्रौपदी के पुत्र, अभिमन्यु, घटोत्कच राक्षस ८ कर्ण, दुर्योधन, महारथी शकुनी, दुश्शासन, आदिक धृतराष्ट्र के महाबली पुत्र, जरासन्ध के पुत्र, भगदत्त, पराक्रमी जलसिन्धु, भूरिश्रवा, शल, शल्य, अपने छोटे भाइयों समेत वृषसेन ९। १० राजपौत्र लक्ष्मण, धृष्टद्युम्न का पुत्र, शिखण्डी के सब पुत्र, छोटे भाइयों समेत धृष्टकेतु ११ अचल, वृषक, अलायुध राक्षस। सोमदत्त, बाह्लीक, राजा चेकितान १२ यह सब और अन्यान्य (जिनका अधिकता से वर्णन नहीं किया गया) बहुत से राजा लोग सब तेजोमय शरीर धारण किये हुए जल से बाहर निकले १३

जिस वीर की जो पोशाक, ध्वजा और सवारी थी; उन सब अपने चिह्नों समेत वे राजा लोग दिखाई पड़े १४ वे सब दिव्य पोशाक और प्रकाशमान कुण्डलों से अलंकृत थे और शत्रुता, अहंकार, क्रोध तथा ईर्षा से रहित थे। उनके आगे गन्धर्व गान करते थे, वन्दीजन स्तुति करते और दिव्य माला एवं पोशाकों से अलंकृत अप्सराओं से युक्त थे १५।१६ हे राजन्! तब प्रसन्नचित्त व्यास मुनि ने अपने तपोबल से धृतराष्ट्र को दिव्य नेत्र दिये १७ दिव्य ज्ञान और बल से युक्त यशस्विनी गान्धारी ने उन सब पुत्रों को और युद्ध में मारे गये अन्यान्य लोगों को भी देखा १८ आँखें बन्द न कर आश्चर्ययुक्त हो उन मनुष्यों ने अपूर्व ध्यान से रोमांच खड़े करनेवाले उस अद्भुत दृश्य को देखा १९ स्त्री पुरुषों से पूर्ण बड़े उत्सवरूप अद्भुत चमत्कार को ऐसे देखा जैसे कि कपड़े पर खिंचे हुए चित्र को देखते हैं २० हे भरतर्षभ! मुनि की कृपा से धृतराष्ट्र उन सबको अपने दिव्य नेत्रों से देखकर बहुत प्रसन्न हुए २१॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि द्वात्रिंशोऽध्यायः ३२॥

तेंतीसवाँ अध्याय।

वैशम्पायन बोले कि इसके अनन्तर क्रोध, ईर्षा और पापों से रहित वे सब पुरुषोत्तम परस्पर में मिले। ब्रह्मर्षि व्यासजी से नियत शुभ और उत्तम विधि में नियत होकर सब स्त्री पुरुष ऐसे प्रसन्नचित्त थे जैसे कि देवलोक में देवता प्रसन्न होते हैं १।२ हे राजन्! पिता पुत्रसे; स्त्रियाँ पतियों से; भाई भाइयों से; मित्र मित्रों से स्नेहपूर्वक मिले ३ पाण्डव बड़ी प्रसन्नता समेत बड़े धनुषधारी कर्ण, अभिमन्यु और द्रौपदी के सब पुत्रों से भलीभाँति मिले ४ हे राजन्! फिर प्रेमी पाण्डव कर्ण से मिलकर भायपने की प्रीति में नियत हुए ५ हे भरतर्षभ! व्यास मुनि की कृपा से वे शूरवीर और अहङ्कार से रहित क्षत्रिय इस प्रकार परस्पर मिलकर ६ शत्रुता त्याग मित्रता में नियत हुए। हे राजन्! इस प्रकार

अच्छी रीति से सब पुरुषोत्तम कौरव और अन्यान्य राजा लोग बांधवों के समूह और पुत्रों से मिले। इस रीति से उन प्रसन्नचित्त राजाओं ने उस रात्रि में विहार कर ७।८ पूर्ण आनन्द और विश्वास से उस स्थान को स्वर्गभवन के समान जाना। हे भरतवंशियों में श्रेष्ठ! यहाँ परस्पर मिलनेवाले उन शूरवीरों को शोक, भय, व्याकुलता, अप्रीति और अपकीर्ति—यह कुछ नहीं हुआ ६ पिता, भाई, पति और पुत्रों से मिलनेवाली उन स्त्रियों ने १० बड़ा आनन्द पाकर दुःख को त्यागा। वे वीर और स्त्रियाँ एक रात्रि विहारकर ११ परस्पर मिलकर और एक एक को पूछकर जैसे आये थे वैसे ही चले गये। इसके पीछे श्रेष्ठमुनि व्यासजी ने उन सब लोगों को बिदा किया १२ फिर वे सब महात्मा पवित्र नदी गंगाजी में प्रवेश कर सबके देखते हुए एक क्षण में ही अन्तर्द्धान हो गये १३ रथ, ध्वजाओं समेत अपने अपने लोकों को चले गये। कोई देवलोक को; कोई ब्रह्मलोक को चले गये १४ कोई वरुणलोक को और कोई कुबेरलोक गये। कितने ही राजाओं ने यमलोक पाया १५ कोई राक्षस और पिशाचों के लोक को; कितने ही उत्तर कौरव देशों को गये। कितने ही विचित्र गतिवाले महात्मा राजा लोग देवताओं समेत जिन लोकों को पाकर १६ सवारी और साथियों समेत आये थे, वे भी चले गये। उन सबके चले जानेपर जल में नियत १७ धर्म के अभ्यासी महातेजस्वी कौरवों के हितकारी महामुनि ने जिनके कि स्वामी मारे गये थे, उन सब क्षत्रियाओं से कहा १८ कि जो जो उत्तम स्त्रियाँ अपने पतियों के लोकों को चाहती हैं, वे सावधान होकर शीघ्र ही गंगाजल में प्रवेश करें १६ इसे सुनकर श्रद्धालु उत्तम स्त्रियाँ ससुर से पूछकर गंगाजल में घुसीं २० हे राजन्! तब मनुष्यशरीर त्यागकर वे पतिव्रताएँ अपने अपने पतियों से जा मिलीं २१ इस क्रम से मनुष्य शरीर को त्याग उन पतिव्रता क्षत्रियाओं ने गंगाजल में प्रवेश कर पतियों की सालोक्यता पाई २२ वे इस प्रकार दिव्यरूप और दिव्य

भूषणों से अलंकृत, दिव्य माला और वैसी ही पोशाक धारण करनेवाली हुईं जैसे कि उनके पति थे २३ सुन्दर स्वभावों से युक्त, थकावट से रहित, सब गुणों से संयुक्त, विमानों में नियत उन स्त्रियों ने अपने अपने स्थान पाये २४ उस समय जिसकी जो इच्छा हुई; उसे वरदाता धर्मवत्सल व्यासजी ने पूर्ण कर दिया २५ नाना देशों के मनुष्य भी उन राजाओं के फिर आने का वृत्तान्त सुनकर प्रसन्न हुए २६ जो मनुष्य प्रिय लोगों समेत इनके मिलाप को अच्छे प्रकार सुनता है; वह इस लोक और परलोक में सदैव अभीष्टों को पाता है २७ धर्म के ज्ञाताओं में श्रेष्ठ जो ज्ञानी पुरुष इस कथा को सुनाता है २८ वह इस लोक में शुभ कीर्ति पाकर परलोक में भी शुभगति पाता है। हे भरतवंशिन्! वेदपाठी अथवा जप में प्रवृत्त, तप से युक्त २९ साधुओं के आचार और इन्द्रियजित, दान के द्वारा पापों से मुक्त, सत्यवक्ता, पवित्र, शान्त, हिंसा और मिथ्या से पृथक् ३०। ३१ ईश्वर और परलोक को माननेवाले श्रद्धालु, धैर्यवान् लोग इस अद्भुत वृत्तान्त को सुनकर परमगति पावेंगे ३२॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ३३॥

चौंतीसवाँ अध्याय।

सूतपुत्र ने कहा, कि तब बुद्धिमान् राजा जनमेजय सब पितामहाओं के इस आवागमन को सुनकर प्रसन्न हुए १ और उन्होंने राजाओं के दुबारा आने के विषय में प्रश्न किया, कि शरीर त्यागनेवाले पुरुषों का दर्शन दूसरी बार उसी रूप से कैसे होता है २ इसे सुनकर वक्ताओं में श्रेष्ठ, ब्राह्मण, व्यास के शिष्य प्रतापी वैशम्पायन ने राजा जनमेजय को उत्तर दिया, कि ३ हे राजन्! विना भोगे सब देव-मनुष्यादिक जीवों के कर्मों का नाश नहीं है। सब शरीर और रूप उन कर्मों से ही उत्पन्न हैं ४ प्राणियों के स्वामी ईश्वर के शरण से हार्दाकाश में नियत पुत्र-पित्रादिक अविनाशी होते हैं। उन अवि-

नाशी शरीरों का संग विनाशवान् शरीरों के साथ सांसारिक दशा में होता है। जब अविनाशी शरीर विनाशवान् शरीर से जुदे होते हैं, तब उनका नाश नहीं होता ५ निवृत्तिनाम कर्म सत्य और श्रेष्ठ ऊपर लिखे हुए फल पाता है और प्रवृत्ति कर्मों से मिलकर आत्मा सुख दुःखादि भोगता है ६ इस प्रकार अपने स्वरूप में नियत क्षेत्रज्ञ, आत्म-भाव कर्म से निश्चय ही नाश के योग्य नहीं है जैसे कि हमारे शरीरों का आत्मा नाम प्रतिबिम्ब जीवात्मा दर्पण की काई आदिक दशा को नहीं प्राप्त करता है अर्थात् उसके नाश से नष्ट नहीं होता है; उसी प्रकार क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ का आत्मभाव भी जानना योग्य है ७ जब तक शरीर का उपजानेवाला कर्म भोग से समाप्त नहीं होता है तब तक उसमें आत्मा का अध्यास है। जो मनुष्यलोक में कर्मों से क्षीण होता है, वह आत्मारूप होता है ८ अनात्मारूप इन्द्रिय आदिक बहुत प्रकार इस शरीर को पाकर शरीररूप हुए हैं। जो योगी इन्द्रियादिकों को शरीर से पृथक् जानते हैं उनकी बुद्धि से वे सब आत्मारूप होने से अविनाशी होते हैं ९ अश्वमेध यज्ञ में घोड़ा मारने के विषय में श्रुति है, कि उस घोड़े के नेत्र सूर्य में और प्राण हवा में लय होते हैं; इसी प्रकार शरीरधारियों के प्राण दूसरे लोक में भी निश्चय ही अवि-नाशी होते हैं १० हे राजन्! जो तुम्हारा इसमें अभीष्ट है, तो मैं इस सुखदायी को कहूंगा। तुमने यज्ञरचना में देवयान मार्ग सुने हैं—ज्ञान में तुम्हारा अधिकार नहीं है, इससे तुम उपासना के साथ कर्म को प्राप्त करके देवयान मार्ग में आश्रय लो; यह तुम्हारे योग्य है ११ जिस समय तुमने यज्ञ किया था, उस समय देवता लोग तुम्हारे मित्र हो गये थे। जब देवता संयुक्त हुए तब जीवों की लोक प्राप्ति में ईश्वर हैं १२ इसी हेतु से अविनाशी जीवात्मा यज्ञ करके अभीष्ट जीवन्मुक्ति पाते हैं। यज्ञ न करनेवाले अन्य जीव उस गति को नहीं पाते। अब ज्ञान-निष्ठा वर्णन करते हैं; जो पुरुष इस पञ्चभूतात्मक देववर्ग और

आत्मा के अविनाशी होने पर १३ इस जीवात्मा के बहुत से रूपान्तरों को देखता है, वह निरर्थक बुद्धिवाला है और पुत्रादि के शरीर नाश होने में जो शोच करता है, वह अज्ञान है; यह मेरा आशय है १४ जो मनुष्य स्त्री आदि के वियोग में दोष देखनेवाला है, वह उनके संयोग को त्यागे क्योंकि असंग आत्मा में अनात्मा का योग नहीं है और विना योग के वियोग क्या होगा ? पृथ्वी पर प्यारे के वियोग से ही दुःख होता है १५ जिसने ज्ञाननिष्ठा को प्राप्त नहीं किया और जो केवल जीव ईश्वर की भिन्नता का जानकार होकर शरीर के अभिमान से उपासना द्वारा पृथक् है; वह योगी सगुण ब्रह्म होकर और बुद्धि से निर्विशेष ज्ञान पाकर मोह अर्थात् मिथ्या ज्ञान से मुक्त होता है १६ अब उस मुक्ति का लक्षण कहते हैं जो दृष्टि से गुप्त, शुद्ध, चैतन्य ब्रह्म है । उससे प्रकट हुआ और फिर उसी में लय हुआ; इसी हेतु से मैं उसको नहीं जानता हूं क्योंकि वह बुद्धि, इन्द्रिय और मन से भी परे है और यह मुझको नहीं जानता है क्योंकि वह कारणरूप नहीं है । फिर कहो कि तुम उस प्रकार के क्यों नहीं होते हो; इसका यह उत्तर है कि मुझको वैराग्य नहीं है अर्थात् वैराग्य ही मोक्ष का साधन है १७ यह अस्वतन्त्र जीवात्मा जिस जिस शरीर से जो जो कर्म करता है, उस उस शरीर से अवश्य उसी कर्म का फल भोगता है । मन के पाप मन ही से पाता है और शरीर के पाप शरीर ही से पाता है । तात्पर्य यह है, कि शरीर वाणी और चित्त की चंचलता को त्याग करके प्राणों का निरोध करे १८ ॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ३४ ॥

पैंतीसवाँ अध्याय ।

वैशम्पायन बोले कि हे राजा, जनमेजय ! राजा धृतराष्ट्र ने पुत्रों को पहले आँखें न रहने से न देखा था और अब व्यासजी की कृपा से दिव्यचक्षुओं के द्वारा सुन्दर रूपवाले पुत्रों का दर्शन पाया १ उस

नरोत्तम राजा ने राजधर्म, ब्रह्मउपनिषद् और निश्चयात्मक बुद्धि प्राप्त की २ महाज्ञानी विदुर ने तप के बल से सिद्धि पाई और फिर धृतराष्ट्र ने तपस्वी व्यासजी को पाकर सिद्धि प्राप्त की ३ जनमेजय ने प्रश्न किया कि जो वरदाता व्यासजी मेरे पिता का भी वैसा ही दर्शन करावें जैसा कि उनका रूप, पोशाक और दशा थी; वही अब भी हो तो मैं आपके सब वर्णन पर श्रद्धा करूं ४ मेरा अभीष्ट सिद्ध हो और निश्चयकर मैं अपने मनोरथ को पाऊं। उन उत्तम ऋषि की कृपा से मेरा अभीष्ट मनोरथ प्राप्त हो ५ तब सूतपुत्र ने कहा कि राजा के यह कहचुकने पर बुद्धिमान्, प्रतापी व्यासजी ने कृपा की और परीक्षित को बुलाया ६ फिर राजा जनमेजय ने उसी रूप और अपनी पूर्व दशा समेत, स्वर्ग से आनेवाले अपने पिता श्रीमान् परीक्षित को देखा ७ महात्मा शमीक ऋषि, उनके पुत्र शृङ्गी ऋषि और राजा के सब मन्त्री लोगों को देखा राजा जनमेजय ने यज्ञ के अवभृथ स्नान के समय अपने पिता को देखा तो बहुत प्रसन्न होकर स्नान किया। उस समय राजा ने स्नान करके आस्तीक ब्राह्मण से कहा कि हे आस्तीक! यह मेरा यज्ञ नाना प्रकार की वस्तुओं से युक्त है ८।१० क्योंकि मेरे शोक के मूलरूप पिताजी यहाँ आये हैं। आस्तीक ने कहा कि हे कौरवोत्तम! जिस यज्ञ में तप के भण्डाररूप प्राचीन ऋषि व्यासजी हैं, उस यज्ञ करनेवाले की दोनों लोकों में विजय है ११ हे पाण्डव-नन्दन! तुमने विचित्र कथा सुनी; सर्प भस्म किये और पिता की पदवी प्राप्त करली १२ हे राजन्! तुम्हारी सत्यता से किसी प्रकार तक्षक सर्प बचा; सब ऋषि पूजित हुए और पिता का भी दर्शन होगया १३ इस पापनाशक इतिहास को सुनकर बहुत बड़ा धर्म पाया और बड़े लोगों के दर्शन से हृदय की गांठ खुल गई १४ जो धर्म में पक्ष नियत करनेवाले हैं, श्रेष्ठ चलन में प्रीति करनेवाले हैं और जिनको देखकर पाप दूर होता है, उनके अर्थ नमस्कार करना

चाहिये १५ सूतपुत्र ने कहा कि राजा जनमेजय ने उस उत्तम ब्राह्मण से यह सब सुनकर बारम्बार सत्कारपूर्वक उस ऋषि का पूजन किया १६ उस धर्मज्ञ राजा ने वनवास की बची हुई कथा कभी धर्म से च्युत न होनेवाले वैशम्पायन ऋषि से पूछी १७ ॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ३५ ॥

छत्तीसवाँ अध्याय।

जनमेजय ने पूछा कि राजा धृतराष्ट्र और राजा युधिष्ठिर ने पुत्र पौत्रों को साथियों समेत देखकर क्या किया १ वैशम्पायन बोले कि राजर्षि धृतराष्ट्र पुत्रों का अपूर्व दर्शनकर शोक से निवृत्त हो फिर आश्रम में आये २ और अन्य सब लोग राजर्षि धृतराष्ट्र से पूछकर इच्छानुसार चले गये ३ फिर महात्मा पाण्डव—जिनके साथ में बहुत थोड़े सेना के मनुष्य थे—स्त्रियों समेत महात्मा राजा के पास गये ४ लोकपूजित, बुद्धिमान् ब्रह्मर्षि व्यासजी ने उस आश्रम में वर्तमान धृतराष्ट्र से कहा कि ५ हे महाबाहु, कौरवनन्दन धृतराष्ट्र! तुमने उन ज्ञान में वृद्ध, पवित्रकर्मी, महावृद्ध, कुल के प्राचीन और वेदान्त धर्म के ज्ञाता ऋषियों के सुनते समय नाना प्रकार की कथाएँ सुनीं ६ । ७ तुम शोक में चित्त मत करो क्योंकि बुद्धिमान् लोग होनहार में दुखी नहीं होते हैं। तुमने देवता के समान दर्शन रखनेवाले नारदजी से देवताओं के गुप्त वृत्तान्त सुने ८ जो कि शास्त्रों से पवित्र हो गये थे। इस निमित्त उन्होंने क्षत्रिय धर्म से शुभ गति पाई। तुमने अपने पुत्र जिस प्रकार के देखे, वे सब उसी प्रकार से इच्छानुसार विहार करनेवाले हैं ९ यह बुद्धिमान् युधिष्ठिर सब भाई, स्त्री और सुहृद् जनों समेत आपकी सेवा में वर्तमान है १० इसको बिदा करो। यह जाकर अपने राज्य शासनादिक कर्म करे। इन लोगों को वन में रहते हुए एक महीने से कुछ ऊपर हो गया ११ हे कौरवकुल के उद्धार करनेवाले राजा धृतराष्ट्र! यह राज्यपद बहुत शत्रु रखनेवाला होकर, सदैव उपायों से

रक्षा करने के योग्य है १२ बड़े तेजस्वी व्यासजी से इस प्रकार समझाये जाने पर राजा धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर को बुलाकर कहा कि १३ हे अजातशत्रो! तुम्हारा कल्याण हो। तुम सब भाइयों समेत मेरी बात सुनो। हे राजन्! तुम्हारी कृपा से शोक हमको पीड़ा नहीं देता है १४ हे पुत्र! मैं तुम प्रियकर्मी नाथ के साथ होकर इस प्रकार रमता हूं जैसे कि हस्तिनापुर में रमता था १५ तुमसे ही पुत्र भाव का फल पाया; तुममें मेरी बड़ी प्रीति है। हे महाबाहो! मेरा क्रोध नहीं है; हे पुत्र जाओ; अब विलम्ब न करो १६ यहां आप लोगों को देखकर मेरे तप की हानि होती है क्योंकि मैंने तप से संयुक्त तुमको देखकर विश्वास प्राप्त किया १७ इसी प्रकार ये तुम्हारी दोनों माताएँ सूखे पत्ते खाकर मेरे समान व्रत करती हैं। हे पुत्र! ये दोनों बहुत कालतक नहीं जियेंगी १८ मैंने व्यासजी के तपोबल और तुम्हारे मिलाप से दूसरे लोक में वर्तमान दुर्योधनादिक पुत्रों को भी देखा १९ हे निष्पाप! मेरे जीवन का प्रयोजन प्राप्त हो गया। अब मैं उग्र तप अच्छी रीति से करूँगा। तुम मुझे आज्ञा देने योग्य हो २० अब पिण्ड, कीर्ति और यह वंश तुमसे नियत है। हे वीर बेटा! अब जाओ अथवा प्रातःकाल जाओ; विलम्ब न करो २१ हे भरतर्षभ! तुमने बहुत सी राजनीति सुनी है, इससे मैं तुम्हें उपदेश के योग्य नहीं देखता हूं। हे समर्थ! तुमने मेरी बड़ी सेवा की २२ वैशम्पायन बोले कि राजा धृतराष्ट्र का वचन सुनकर युधिष्ठिर ने कहा कि हे धर्मज्ञ! आप मुझ निरपराध को त्यागने योग्य नहीं हो २३ हे सावधानव्रत! चाहे मेरे भाइयों समेत सब साथी चले जायँ; पर मैं आपके और अपनी दोनों माताओं के साथ रहूंगा २४ गान्धारी ने कहा कि बेटा ऐसा मत करो; सुनो यह कौरवकुल और मेरे ससुर का पिण्ड तुम्हारे आधीन है २५ हे पुत्र! जाओ, इतना ही बहुत है; हम तुमसे पूजित हुए। हे बेटा! राजा ने जो तुमसे कहा है, वह पिता की आज्ञा भी तुमको करनी

चाहिये २६ वैशम्पायन बोले, कि गान्धारी से समझाये गये युधिष्ठिर ने प्रीति के जलों से पूर्ण दोनों नेत्र पोंछकर रोती हुई कुन्ती से कहा कि २७ राजा धृतराष्ट्र और यशस्विनी गान्धारी मुझको बिदा करती हैं। आपमें चित्त लगानेवाला महादुःखी मैं कैसे जाऊंगा २८ हे धर्मचारिणि! मैं तुम्हारे तप के विघ्न करने में प्रवृत्त नहीं हूं क्योंकि तप से बढ़कर कोई बात नहीं है; तप से ही मोक्ष मिलता है २६ हे मातः! पूर्व के समान अब मेरी बुद्धि भी राज्य में प्रवृत्त नहीं है और मेरा चित्त भी तप में प्रवृत्त है ३० हे कल्याणि! पूर्व के राजाओं से रहित यह सम्पूर्ण पृथ्वी मुझे आनन्दप्रद नहीं है। हमारे बान्धवों का नाश होगया, हमारा बल पराक्रम पूर्व के समान नहीं है ३१ पाञ्चालदेशी अत्यन्त नाशयुक्त हुए, कथामात्र बाक़ी है। हे कल्याणि! उनके वंश का चलानेवाला किसी को नहीं देखता हूं ३२ वे सब युद्धभूमि में द्रोणाचार्य से भस्म किये गये और बचे हुए, रात्रि को अश्वत्थामा के हाथ से मारे गये ३३ चँदेरीदेशी और मत्स्यदेशी भी मारे गये। हमने जिनको पहले नेत्रों से देखा, उनमें से केवल यादवों का समूह वासुदेवजी के भाई बान्धव होने से बचा हुआ है ३४ आपको देखकर धर्म के निमित्त नियत होना चाहता हूं; राज्य के निमित्त नहीं। हम सबको तुम कल्याणकारी दृष्टि से देखो। हम लोगों को आपका दर्शन बड़ा दुष्प्राप्य है ३५ यह सुनकर, कि राजा धृतराष्ट्र असह्य उग्र तप प्रारम्भ करेंगे, सेना के प्रधान वीर सहदेव ने ३६ अश्रुओं से व्याकुल नेत्र होकर युधिष्ठिर से कहा कि हे भरतर्षभ! मैं माताओं के त्याग में उत्साह नहीं करता हूं ३७ प्रभो! आप शीघ्र जाइये; मैं तप करूंगा; मैं यहीं तप से अपने शरीर को शुष्क करूंगा ३८ राजा धृतराष्ट्र और इन दोनों माताओं की चरणसेवा में प्रवृत्त रहूंगा। तब कुन्ती ने वीर सहदेव से मिलकर कहा कि हे पुत्र! जाओ, ऐसा मत कहो; तुम मेरी आज्ञा का पालन करो ३६ हे बेटा! तुम्हारे आगम कल्याणरूप

हों, तुम स्थिरचित्त हो ४० यहां तुम्हारे इस प्रकार रहने से हमारे तप में बाधा होगी। तुम्हारे स्नेह की फांसी में फँसकर मेरा उत्तम तप नष्ट हो जायगा ४१ हे समर्थ पुत्र! इसी हेतु से तुम जाओ, हमारी आयुर्दा थोड़ी ही बाक़ी है। हे राजेन्द्र! कुन्ती के अनेक प्रकार के ऐसे वचनों से ४२ सहदेव और मुख्य कर राजा युधिष्ठिर का चित्त स्थिर हुआ। फिर राजा धृतराष्ट्र और माताओं से आज्ञा लेकर पाण्डवों ने ४३ धृतराष्ट्र को दण्डवत् कर पूछना प्रारम्भ किया। युधिष्ठिर ने कहा, कि हे राजन्! आपका आशीर्वाद पाकर हम राजधानी को जायँगे। तुम्हारी आज्ञा पा, पापों से रहित होकर हम जायँगे ४४ महात्मा राजा की बात सुन राजर्षि धृतराष्ट्र ने कौरव युधिष्ठिर को प्रसन्न कर आज्ञा दी ४५ राजा ने बलवानों में श्रेष्ठ भीमसेन को विश्वास दिलाया और उस बुद्धिमान् पराक्रमी ने भी उनको अच्छे प्रकार दण्डवत् की ४६ कौरव धृतराष्ट्र ने अर्जुन समेत नकुल, सहदेव से भी मिलकर बहुत प्रसन्न कर उनको आज्ञा दी ४७ गान्धारी से आज्ञप्त, चरणों को दण्डवत् कर माता से सूंघे हुए मस्तकवाले पाण्डवों ने राजा धृतराष्ट्र की परिक्रमा की ४८ दूध पिलाने से रोकने में बछड़े जैसे होते हैं वैसे ही बारम्बार देखते हुए उन सबने परिक्रमा की ४९ फिर द्रौपदी आदिक कौरवीय स्त्रियां न्याय से ससुर में भक्ति नियतकर सास को प्रणाम करके चलीं। दोनों सासों से आज्ञप्त, आशीर्वाद व शिक्षाएँ पाकर वे अपने पतियों के साथ चलीं ५०। ५१ फिर रथ जोड़नेवाले सूत, बलबलाते ऊंट और हींसते हुए घोड़ों के भी शब्द हुए ५२ फिर राजा युधिष्ठिर स्त्रियों, सेना के लोगों और बान्धवों समेत वहां से हस्तिनापुर आये ५३॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि षट्त्रिंशोऽध्यायः ३६॥

सैंतीसवाँ अध्याय।

वैशम्पायन बोले, कि हे राजन्! हस्तिनापुर में पाण्डवों के दो

वर्ष बीतने पर देवर्षि नारदजी राजा युधिष्ठिर के पास आये १ वक्ताओं में श्रेष्ठ कौरवराज, वीर युधिष्ठिर ने उनको पूजकर आसन पर बैठे हुए विश्वस्थ मुनि से कहा कि २ मैं सम्मुख नियत होनेवाले आपको बहुत काल से नहीं देखता हूँ। हे वेदपाठिन्! क्या आपका कल्याण है अथवा कल्याण सम्मुख हुआ है ३ कौन देश तुमने देखे हैं, आपकी जो आज्ञा हो उसे मैं करूँ। हे श्रेष्ठ ब्राह्मण! आप हमारी परमगति हो, इससे वर्णन कीजिये ४ नारदजी बोले कि हे राजन्! मैंने तुमको बहुत दिनों में देखा है; मैं तपोवन से आया हूँ। मैंने गंगाजी समेत बहुत से तीर्थ देखे ५ युधिष्ठिर बोले कि अब गंगा के तट पर रहनेवाले मनुष्य मुझसे कहते हैं कि महात्मा धृतराष्ट्र बड़े तप में नियत हैं ६ वहाँ धृतराष्ट्र, गान्धारी, कुन्ती और सूतसञ्जय को आपने देखा होगा। वे सब बहुत प्रसन्न हैं ७ हे भगवन्! मैं सुनना चाहता हूँ कि अब मेरे ताऊ राजा धृतराष्ट्र कैसे हैं। जो आपने राजा को देखा है, तो उनका कुशलक्षेम वर्णन कीजिये ८ नारदजी बोले कि महाराज! तुम स्थिरचित्त होकर वह वृत्तान्त सुनो जैसा कि मैंने तपोवन में देखा और सुना है ९ हे कौरवनन्दन, राजा युधिष्ठिर! वनवास से आपके लौट आने पर तुम्हारे ताऊ धृतराष्ट्र कुरुक्षेत्र से हरद्वार को गये १० अग्निहोत्रयुक्त बुद्धिमान् धृतराष्ट्र गान्धारी, वधू कुन्ती, सूतसञ्जय और याजक ब्राह्मणों समेत हरद्वार में पहुँचे ११ वे तपोधन तुम्हारे ताऊ कठिन तपस्या में नियत, मुख में बीड़ा रखकर वायुभक्षी मुनि हुए हैं १२ वन में सब मुनियों से पूजित महातपस्वी उन धृतराष्ट्र ने, जिनके शरीर में अस्थिचर्म ही बाक़ी थे, छःमहीने तक व्रत किया १३ हे भरतवंशिन्! गान्धारी केवल जल का आहार करती और कुन्ती एक महीने पीछे भोजन करती है और संजय ने छठे दिन भोजनकर अपना समय व्यतीत किया १४ हे प्रभो! याजक ब्राह्मणों ने उस वन में राजा के समक्ष और परोक्ष में विधिपूर्वक अग्नि में हवन

किया १५ फिर राजा स्थान से रहित होकर वनचारी हुए। वे दोनों देवियाँ और संजय भी उसके पीछे हुए १६ हे राजन्! वह संजय सम वा असम भूमि में राजा का मार्गदर्शक और निर्दोष कुन्ती गान्धारी को मार्गदर्शक हुई १७ फिर कभी साधु बुद्धिमान् राजा धृतराष्ट्र कुछ गंगा के पास गंगाजी में स्नान करके आश्रम की ओर चले १८ वायु प्रकट हुई और दावानल नाम प्रचण्ड अग्नि उत्पन्न हुई। उसने चारों ओर से उस वन को घेरकर भस्म कर दिया १९ चारों ओर मृगों के झुंड और सर्पों के भस्म होने एवं तड़ागादिकों में शूकरों के आश्रित होने २० उस वन के जल जाने, महादुःख वर्तमान होने और आहार न करने से निर्बल तथा चेष्टा से रहित २१ राजा धृतराष्ट्र और अत्यन्त दुर्बल आपकी दोनों माताएँ वहां से हटने को समर्थ नहीं हुई। फिर विजय करनेवालों में श्रेष्ठ राजा धृतराष्ट्र ने समीप आनेवाली अग्नि को ज्ञान से जानकर २२ सूत संजय से कहा कि हे संजय! तुम वहां चले जाओ जहां तुमको अग्नि भस्म न कर सके २३ यहां अग्नि से संयुक्त होकर हम सब परमगति पावेंगे। तब वक्ताओं में श्रेष्ठ महाव्याकुल संजय ने कहा कि २४ हे राजन्! अग्नि से वृथा भस्म होकर आपकी यह मृत्यु अप्रिय होगी और अग्नि से बचने का भी कोई उपाय नहीं देखता हूं २५ अब यहां करने के योग्य काम करने में विलम्ब न करना चाहिये। संजय की यह बात सुनकर राजा ने कहा कि अपने आप घर से निकलनेवाले हम सबकी यह मृत्यु अनुपकारी नहीं है। जल, अग्नि, वायु और अनशनव्रत २६। २७ ये सब कर्म तपस्वी लोगों के लिये प्रशंसनीय होते हैं। राजा धृतराष्ट्र संजय से यह कहकर कि "हे संजय! जाओ, देर न करो" चित्त को समाधि में नियत करके २८ गान्धारी और कुन्ती समेत पूर्वाभिमुख बैठ गये। फिर उन्हें उस प्रकार देख परिक्रमाकर २९ बुद्धिमान् संजय ने कहा कि हे प्रभो! आत्मा को परमात्मा में लय करो। बुद्धिमान् ऋषि के

पुत्र राजा ने वही किया ३० इन्द्रिय समूहों को रोककर काष्ठ के समान हुए। भाग्यवती गान्धारी, आपकी माता कुन्ती ३१ और आपके ताऊ राजा धृतराष्ट्र ये तीनों दावानल अग्नि में संयुक्त हुए और सूत संजय उस दावानल से पृथक् हो गया ३२ मैंने गंगातट पर संजय को तपस्वियों में बैठा हुआ देखा। वह बुद्धिमान्, तेजस्वी, संजय यह सब वृत्तान्त वर्णन करके, उन ऋषियों से पूछकर ३३ हिमालय पर्वत को गया। हे राजन्! इस प्रकार बड़े साहसी कौरवराज धृतराष्ट्र ३४ और तुम्हारी दोनों माता—गान्धारी और कुन्ती ने मृत्यु पाई। हे भरतवंशिन्! मैंने दैवेच्छा से जलते हुए राजा ३५ और उन दोनों देवियों के शरीर देखे। फिर तपोधन ऋषि राजा धृतराष्ट्र की मृत्यु को सुनकर उस तपोवन में आये। उन्होंने उनकी गति का शोच नहीं किया। हे पुरुषोत्तम युधिष्ठिर! वहीं मैंने यह सब वृत्तान्त सुना है कि ३६।३७ इस प्रकार से राजा धृतराष्ट्र और वे दोनों देवियाँ जलकर भस्म होगईं। हे राजन्! शोच न करना चाहिये। उस राजा ने ३८ और गान्धारी समेत तुम्हारी माता कुन्ती ने अपने आप ही अग्नि संयोग पाया। वैशम्पायन बोले कि धृतराष्ट्र की स्वर्गयात्रा सुनने से सब महात्मा पाण्डवों को बड़ा शोक हुआ ३९ महाराज! राजा की यह गति सुनकर स्त्रियों और पुरवासियों के बड़े दुःख के शब्द हुए ४० अत्यन्त दुःखी और ऊंची भुजा रखनेवाले राजा युधिष्ठिर हाय धिक्कार है हमको, यह कहकर माता का स्मरण करके रोने लगे ४१ और भीमसेन आदिक सब भाई भी रोने लगे। महाराज! कुन्ती की ऐसी दशा सुनकर स्त्रियों के महलों में रोने के शब्द हुए। उन सबने इस प्रकार भस्म होनेवाले वृद्ध राजा को, जिसके कि पुत्र मारे गये थे ४२।४३ और यशस्विनी गान्धारी को शोचा। हे भरतवंशिन्! एक मुहूर्त में ही उस शब्द के दुबारा होने पर ४४ धर्मराज ने धैर्य से आंसू रोके ४५॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वणि सप्तत्रिंशोऽध्यायः ३७॥

अड़तीसवाँ अध्याय।

युधिष्ठिर बोले कि हे ब्राह्मण! हमलोगों के होते हुए भी वन में उस घोर तप में नियत महात्मा धृतराष्ट्र की अनाथ के समान इस प्रकार मृत्यु होने से १ ज्ञात होता है कि पुरुषों की गति बड़ी कठिनता से जानी जाती है। जो राजा धृतराष्ट्र उस वन की अग्नि से भस्म हुए २ उन बाहुशाली के सौ श्रीमान् पुत्र थे। साठ हज़ार हाथियों के समान पराक्रमी वे राजा वन की अग्नि से भस्म हो गये ३ पूर्वसमय में उत्तम स्त्रियों ने तालवृन्तनामक पंखों से जिसको हवा की; अब दावानल से घिरे हुए उन्हीं राजा को गृद्ध पक्षियों ने हवा की ४ जो शयन स्थान से सूत और मागधों के द्वारा जगाये जाते थे, वे राजा मुझ पापी के कर्मों से पृथ्वी पर शयन करते रहे ५ इस प्रकार पतिव्रत में नियत, पतिलोक में वर्तमान यशस्विनी असन्तान गान्धारी को नहीं शोचता हूँ ६ शोचता हूँ कुन्ती को जिसने कि पुत्रों का प्रकाशमान और वृद्धियुक्त ऐश्वर्य छोड़कर वनवास स्वीकार किया ७ हमारे इस राज्य, बल, पराक्रम और क्षत्रियधर्म को धिक्कार है जिसके कारण मृतकरूप होकर हम जीते हैं ८ हे ब्राह्मणों में श्रेष्ठतम नारदजी! निश्चय ही काल की बड़ी सूक्ष्म गति है, तभी तो कुन्ती ने राज्य त्यागकर वनवास अंगीकार किया ९ मैं यह शोचता हुआ कि युधिष्ठिर, भीमसेन और अर्जुन की माता होकर वे कैसे अनाथ के समान अग्नि में भस्म हुईं, अचेत हुआ जाता हूं १० खाण्डव वन में अर्जुन से अग्नि देवता व्यर्थ तृप्त किये गये। उस उपकार से अनजान वह कृतघ्नी है, यह मेरा मत है ११ कपटरूप ब्राह्मण होकर भिक्षा के अभिलाषी हो अग्निदेवता ने सम्मुख आ जिस स्थान पर अर्जुन की माता को भस्म किया १२ उस अग्नि को धिक्कार है और अर्जुन की प्रसिद्ध सत्यसंकल्पता को भी धिक्कार है। भगवन्! यह दूसरा बड़ा दुःख मुझे दिखाई पड़ता है १३ कि तपस्वी राजर्षि कौरव राजा धृतराष्ट्र का संयोग अग्नि से वृथा

हुआ है १४ इस पृथ्वी पर राज्य करके, महावन में मन्त्रों से पवित्र अग्नियों के वर्तमान होने पर भी उनकी इस प्रकार मृत्यु कैसे हुई १५ अग्नि से व्यर्थ युक्त होकर मेरे पिता ने मृत्यु पाई। मैं मानता हूं कि हड्डियों की माला महादुर्बल कुन्ती ने १६ बड़े भय के समय अवश्य चिल्लाकर कहा होगा कि हाय बेटा धर्मराज! और भय से इस प्रकार पुकारती वह भस्म हुई होगी कि हाय बेटा भीमसेन! रक्षा करो १७ मेरी माता चारों ओर से दावानल से घिरी हुई जल गई सहदेव उसे सब पुत्रों से अधिकतर प्यारा था १८ उस वीर सहदेव ने भी उसको नहीं निकाला। यह सुनकर पाँचों भाई परस्पर मिलकर ऐसे रोने लगे १९ जैसे कि प्रलय के समय जीवधारी रुदन करते हैं। उन रोनेवाले पुरुषोत्तमों के शब्द महल की रानी आदिक स्त्रियों के रोदन से मिलकर पृथ्वी और आकाश में व्याप्त हो गये २० ॥

इति श्रीमहाभारते आश्रमवासके पर्वण्यष्टत्रिंशोऽध्यायः ३८ ॥

उन्तालीसवाँ अध्याय।

नारदजी बोले कि हे भरतवंशिन्! राजा धृतराष्ट्र वृथा अग्नि से भस्म नहीं हुए। वहां मैंने जैसा सुना है, वैसा तुमसे कहता हूं १ हमने सुना है कि यज्ञ करके वन में प्रवेश करते समय उस वायुभक्षी बुद्धिमान् ने अग्नियों का त्याग किया २ हे भरतर्षभ! फिर उनके याजक लोग वन में अग्नियों को छोड़कर इच्छानुसार चले गये ३ निश्चय ही वही अग्नि वन में फैली और उस वन को उसने प्रज्वलित किया। वहां के तपस्वियों ने ऐसा ही कहा है ४ हे भरतश्रेष्ठ! राजा धृतराष्ट्र गंगा के सूखे वन में आप ही उस अग्नि से संयुक्त हुए हैं जैसा कि मैंने कहा है ५ हे निष्पाप, राजा युधिष्ठिर! गंगातट पर मैंने जिन मुनियों को देखा था; उन्होंने मुझसे ऐसा ही कहा था ६ हे राजन्! इस प्रकार राजा अपनी ही अग्नि से संयुक्त हुए। तुम राजा को मत शोचो; उन्होंने परमगति पाई है ७ हे राजन्! तुम्हारी

माता ने भी गुरु की सेवा से निस्सन्देह बड़ी सिद्धि प्राप्त की है ८
हे राजेन्द्र! तुम सब भाइयों समेत उनकी जलदान क्रिया अवश्य करो ९
वैशम्पायन बोले कि इसके अनन्तर पाण्डवों का धुरन्धर, नरोत्तम
राजा युधिष्ठिर अपने सगे भाई और स्त्रियों को साथ लेकर चला १०
एक वस्त्र से युक्त शरीरवाले, राजभक्त पुरवासी और देशवासी गंगाजी
के सम्मुख चले ११ फिर उन सब नरोत्तमों ने युयुत्सु को आगे
कर जल में स्नान करके उस महात्मा के निमित्त जलदान किया १२
वहां वे नरोत्तम विधिपूर्वक नाम और गोत्र से गान्धारी और कुन्ती
के शौच कर्म को करते हुए नगर से बाहर रहे १३ उस नरोत्तम ने
विधि के ज्ञाता, सत्यकर्मी ब्राह्मणों को हरद्वार में भेजा, जहां कि राजा
भस्म हुए थे १४ तब राजा युधिष्ठिर ने देने के योग्य सामान देकर
मनुष्यों को आज्ञा दी कि हरद्वार में उनका क्रिया कर्म करना। बारहवें
दिन शौच प्राप्त करनेवाले राजा युधिष्ठिर ने विधिपूर्वक धृतराष्ट्र
आदिकों के निमित्त दक्षिणा से संयुक्त श्राद्ध किये १५। १६ राजा ने
धृतराष्ट्र के नाम से सुवर्ण, चांदी, गौ और बहुमूल्य की वस्तुएँ दान
में दीं १७ तेजस्वी राजा ने गान्धारी और कुन्ती का नाम लेकर पृथक्
पृथक् बहुत से उत्तम दान दिये १८ जो मनुष्य जो जो वस्तु जितनी
चाहता था, वह उतनीही पाता था। शय्या, भोजन, मणि, रत्न, धन १९
सवारी, वस्त्र, भोग और अच्छी अलंकृत दासियां राजा ने दोनों माताओं
का नाम लेकर दान कीं २० फिर राजा युधिष्ठिर बहुत से दान देकर
हस्तिनापुर में आये २१ राजा की आज्ञा से हरद्वार को गये हुए मनुष्य
उनकी हड्डियों को इकट्ठाकर गंगाजी पर आये २२ वहां उन्होंने नाना
प्रकार की माला और सुगन्धित वस्तुओं से उनकी हड्डियों का पूजन
कर गंगा में पधराके राजा से आकर निवेदन किया। हे राजन्!
देवर्षि नारदजी भी धर्मात्मा राजा युधिष्ठिर को विश्वास देकर अपने
इष्ट स्थान को गये २३। २४ इस प्रकार बुद्धिमान् धृतराष्ट्र के पन्द्रह वर्ष

नगर में और तीन वर्ष वनवास में बीते २५ जिसके पुत्र युद्ध में मारे गये थे और जो सदैव अपने बिरादरी के और सब नातेदार आदि को दान देता था २६ जिसके ज्ञातिवालों समेत बान्धव मारे गये और जो अत्यन्त प्रसन्नचित्त न था; उस राजा युधिष्ठिर ने राज्य का सब कार्य किया २७ सावधान मनुष्य आश्रमवासपर्व के अन्त में भी ब्राह्मणों को उत्तम भोजन करावे २८॥

इति श्रीमहाभारते शतसाहस्र्यां संहितायां वैयासिक्यां आश्रमवासके पर्वण्ये-
कोनचत्वारिंशोऽध्यायः ३९॥

आश्रमवासपर्व समाप्त।



श्रीनिकुञ्जविहारिणे नमः ।

महाभारतभाषा मुशलपर्व ।

मंगलाचरणम् ।

श्लोक ॥ नव्याम्भोधरवृन्दवन्दितरुचिम्पीताम्बरालंकृतं प्रत्यग्रस्फुटपुण्डरीकनयनं सान्द्रप्रमोदास्पदम् ॥ गोपीचित्तचकोरशीतकिरणम्पापाटवीपावकं स्वाराण्मस्तकमाल्यलालितपदं वन्दामहे केशवम् १ या भाति वीणामिव वादयन्ती महाकवीनां वदनारविन्दे ॥ सा शारदा शारदचन्द्रबिम्बा ध्येयप्रभा नः प्रतिभां व्यनक्तु २ पाण्डवानां यशोवर्ष्म सकृष्णमपि निर्मलम् ॥ व्यधायि भारतं येन तं वन्दे बादरायणम् ३ विद्याविदग्रेसरभूषणेन विभूष्यते भूतलमद्य येन ॥ तं शारदालब्धवरप्रसादं वन्दे गुरुं श्रीसरयूप्रसादम् ४ विप्राग्रणीगोकुलचन्द्रपुत्रः स विज्ञकालीचरणाभिधानः ॥ कथानुगं मौशलसुष्ठुपर्वभाषानुवादं विदधाति सम्यक् ५ ॥

पहिला अध्याय ।

श्रीनारायण नरों में उत्तम नर और सरस्वती देवी को नमस्कार कर इतिहास को वर्णन करता हूं १ आदि के पर्वों में जो धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष वर्णन किये गये हैं; उनमें से सभापर्व और वनपर्व में यज्ञ, सत्यता, धैर्य, गुरुसेवा और तीर्थ सेवन आदिक सिद्ध किये; विराट् आदिक आठ पर्वों में सेवा और नीतियों का वर्णन किया और हिंसा, मिथ्या तथा कुल के विनाश का हेतु शोक होना भी

सिद्ध किया; बारहवें तेरहवें और चौदहवें पर्वों में मोक्ष के हेतु दान, विद्या और वनवासादि का वर्णनकर पन्द्रहवें पर्व में वनवास का फल वर्णन किया। अब सोलहवें पर्व में केवल संसारी सुख, ऐश्वर्यों में प्रवृत्त मनुष्य मद्य आदि के पान से उन्मत्त होकर परस्पर युद्धकर नष्ट हुए; सत्रहवें पर्व में अनिच्छा, धर्म के फल और गृह के त्याग वर्णन करेंगे और अठारहवें पर्व में परिणाम फल स्वर्ग का वर्णन करेंगे।

वैशम्पायन बोले कि छत्तीसवें वर्ष कौरवनन्दन युधिष्ठिर ने विपरीत शकुन देखे १ परस्पर युद्ध करने और कङ्कड़ बरसानेवाली वायु चली। उन पक्षियों ने—जिनका बाईं ओर को आना शुभ है—दहिने मण्डल किये २ महानदियां उलटी चलने लगीं; दिशाएँ कुहरे से ढक गईं और अंगारों की वर्षा करनेवाली उल्काएँ आकाश से पृथ्वी पर गिरीं ३ हे राजन्! धूलि और आंधी से सूर्य का मण्डल गुप्त हो गया और सदैव राहु के उदय तथा केतु ग्रहों से आकाश की शोभा विनष्ट होगई ४ सूर्य और चन्द्रमा के काले, रूखे, भस्मरङ्ग और लालवर्ण के मण्डल भयकारी दिखाई देते थे ५ हे राजेन्द्र! चित्त में भयङ्कर सन्देह उत्पन्न करनेवाले ऐसे अनेक उत्पात दिखाई देते थे ६ कुछ दिनों में कौरवराज युधिष्ठिर ने मूसल से वृष्णियों का मरण सुना ७ पाण्डव धर्मराज ने वासुदेवजी और बलदेवजी को उस बिनाश से बचे हुए सुनकर भाइयों से कहा कि अब क्या करना चाहिए ८ सब पाण्डव परस्पर मिलकर ब्राह्मणों के शाप से वृष्णियों का विनाश सुनकर पीड़ित हुए। उन वीरों ने शार्ङ्ग धनुषधारी वासुदेवजी के मरने पर विश्वास नहीं किया; क्योंकि यह बात समुद्र के सूखजाने के समान असम्भव थी ९।१० पाण्डव लोग मूसल से होनेवाले नाश को विचारकर शोक दुःख से युक्त महाव्याकुल हतसंकल्प हो बैठे ११ जनमेजय ने पूछा कि भगवन्! वासुदेवजी के रहते हुए अन्धक और भोजवंशी महारथी वृष्णियों समेत कैसे मारे गये १२ वैशम्पायन

बोले कि छत्तीसवें वर्ष वृष्णियों की बड़ी अनीति हुई । काल की प्रेरणा से, उन लोगों ने परस्पर एक दूसरे को मूसलों से मारा १३ जनमेजय ने पूछा कि किसके घोर शाप से उन वृष्णि अन्धक और भोजवंशी वीरों का विनाश हुआ ? हे श्रेष्ठ ब्राह्मण ! ब्योरे समेत मुझसे कहिए १४ वैशम्पायन बोले कि सारण आदिक वीरों ने द्वारका में आनेवाले तपोधन विश्वामित्र, कण्व और नारदजी को देखा १५ दैवदण्ड से पीड़ित उन कुमारों ने साम्ब को स्त्री के समान अलंकृतकर सबके आगे किया और ऋषियों के पास जाकर कहा कि १६ हे ऋषियो ! बड़े तेजस्वी बभ्रु की यह स्त्री सन्तान की इच्छा रखती है। कृपा कर अच्छी तरह बतलाइये कि इसके क्या उत्पन्न होगा १७ हे राजन् ! इस प्रकार के वचन सुनकर छल से निरादर किये हुए उन मुनियों ने क्रोधित हो उत्तर दिया १८ उन्होंने कहा कि यह वासुदेवजी का पुत्र साम्ब वृष्णि और अन्धकों के नाश के निमित्त बड़ा भयकारी लोहे का ऐसा मूसल उत्पन्न करेगा १९ जिससे अत्यन्त दुराचारी, निर्दय और अहंकारी तुम लोग श्रीकृष्ण और बलदेवजी के सिवाय सम्पूर्ण कुल भरे का नाश करोगे २० श्रीमान् बलदेवजी शरीर त्यागकर समुद्र को जायेंगे और जरा नाम बहेलिया पृथ्वी पर बैठे हुए महात्मा श्रीकृष्ण को घायल करेगा २१ हे राजन् ! उन दुराचारी दुर्बुद्धियों से अपमानित, क्रोध से रक्त नेत्रवाले मुनियों ने परस्पर विचारकर यह शाप दिया । फिर उन मुनियों ने ऐसा कहकर चित्त से केशवजी का स्मरण किया । चित्त से प्रार्थना की कि हमने जो शाप दिया है, इसको आप क्षमा करें २२ वंश विनाश के ज्ञाता, बुद्धिमान् श्रीकृष्णजी ने सुनते ही वृष्णियों से कहा कि यह ऐसे ही होना था २३ जगत् के स्वामी श्रीकृष्णजी यह कहकर अपने नगर में गये और उन्होंने भावी मरण को विपरीत न करना चाहा २४ फिर प्रातःकाल साम्ब ने उस मूसल को उत्पन्न किया जिससे कि वृष्णि और अन्धक कुलों

के सब मनुष्यों का नाश हुआ २५ वृष्णि और अन्धकों के नाश के अर्थ किंकर यमदूत की सूरत, भय का उत्पन्न करनेवाला, बड़ा मूसल शाप से उत्पन्न हुआ। लोगों ने वह मूसल राजा उग्रसेन के सम्मुख लाकर धरा २६ हे राजन् ! व्याकुल राजा उग्रसेन ने उस मूसल के छोटे छोटे महीन टुकड़े करवाये और बुरादे को समुद्र में डलवा दिया २७ सब लोगों ने राजा उग्रसेन, श्रीकृष्ण, बलदेवजी और महात्मा बभ्रु के वचन से नगर में मनादी करवा दी कि २८ आज से सब वृष्णि, अन्धकों के लोग और सम्पूर्ण नगरनिवासी मद्यपान न करें २९ जो कोई मनुष्य हमारी आज्ञा के विना ऐसा करेगा, वह अपने बान्धवों समेत शूली पर चढ़ाया जायगा ३० तब सब मनुष्यों ने इसे सुगमकर्मी बलदेवजी की आज्ञा जानकर राज्य के भय से नियम कर लिया ३१ ॥

इति श्रीमहाभारते शतसाहस्र्यां संहितायां मुशलपर्वणि प्रथमोऽध्यायः १ ॥

दूसरा अध्याय।

वैशम्पायन बोले कि इस प्रकार अन्धकों समेत नाना प्रकार के उपाय करनेवाले वृष्णियों के घरों में वह कराल, विकट मुण्डवाला, कृष्ण और पिङ्गल वर्ण का कालपुरुष सदैव भ्रमण करने लगा। वह वृष्णियों के घरों में प्रवेश करके कहीं दिखाई दिया, कहीं नहीं १।२ लाखों धनुर्धारियों ने उस काल पुरुष को बाणों से घायल किया परन्तु वह सब जीवों का नाश करनेवाला कालपुरुष किसी प्रकार भी घायल न हुआ ३ प्रतिदिन वृष्णि और अन्धकों को महाभयकारी, रोमांच करनेवाली, बहुत कठिन वायु प्रकट हुई; मार्गों में चूहों की बड़ी वृद्धि हुई और फूटे हुए वे ही मार्ग मृण्मयपात्रों से युक्त हुए। रात्रि को सोनेवाले पुरुषों के शिर के बाल और नख चूहे काट जाते थे ४।५ वृष्णियों के स्थानों में सारक पक्षी 'चीची', 'कूची' शब्द करते थे। बकरों ने शृगालों के समान शब्द किये ६।७ वृष्णि और अन्धकों के स्थानादिकों में काल

से प्रेरित पाण्डु, आरक्तपाद और कपोत भ्रमण करने लगे ८ गौओं के पेटों से गधे उपजे और खच्चरियों में ऊंट उत्पन्न हुए ९ इतने पर भी वृष्णि लोग पाप करते हुए लज्जित नहीं हुए। वे ब्राह्मण, पितर और देवताओं से विरुद्ध हुए १० उन्होंने गुरुओं का भी अपमान किया परन्तु श्रीकृष्ण और बलदेवजी इन कामों से पृथक् थे। स्त्रियों ने पतियों को और पतियों ने स्त्रियों को विपरीत कर्म दिखलाये ११ ज्वलित अग्नि नीली, लाल और मंजीठ रंग की किरणों को पृथक् पृथक् प्रकट करता हुआ वामभाग में वर्तमान होता था १२ उस पुरी में सदैव उदय और अस्त के समय विना शिर के मनुष्यों से घिरा हुआ सूर्य बारम्बार मनुष्यों को दिखाई पड़ा १३ हे भरतवंशिन्! बड़े शुद्ध आसनों पर सन्नद्ध भोजन की वस्तुओं के लाने पर हज़ारों कीट दिखाई पड़े १४ महात्माओं के जप करने और पुण्याहवाचन में उनके सम्मुख पुरुषों के दौड़ने की धमक सुनी जाती थी परन्तु कोई दिखाई नहीं दिया १५ उन यादवों ने बारम्बार ग्रहों से परस्पर आघातित नक्षत्रों को देखा परन्तु किसी दशा में भी अपने नक्षत्र को नहीं देखा। अपने नक्षत्र का न दीखना मृत्यु सूचक है। वृष्णि और अन्धकों के स्थानों में पाञ्चजन्य शङ्ख बजने के समय उन गधों के शब्द होने लगे कि जिनके शब्द महाभयकारी थे १६। १७ इस प्रकार समय को विपरीत देख श्रीकृष्णजी मावस के स्थानापन्न तेरस के दिन यादवों से बोले कि १८ शुक्लपक्ष में भी एक तिथि कम हुई—चतुर्दशी को ही पूर्णिमा होगई और इस दशा में भी ग्रहण हुआ ही। महाभारत का युद्ध होने पर ऐसा हुआ था। अब यह हमारे नाश के अर्थ आया है १९ समय को विचारते हुए केशी दैत्य के संहारकर्ता श्रीकृष्णजी ने ध्यान करके छत्तीसवाँ वर्ष माना २० जिसके बान्धव मारे गये, उस पुत्रशोक से दुखी और पीड़ित गान्धारी ने जो शाप दिया था; वही शाप अब वर्तमान होकर सम्मुख आया। पूर्व समय में सेनाओं के व्यूहित

होने पर भयकारी उत्पात देख जिसको कहा था, यह वही समय आ पहुँचा २१ । २२ वासुदेवजी ने इस प्रकार कहकर तीर्थयात्रा करने के लिये आज्ञा दी २३ और सब लोगों ने केशवजी की आज्ञा से मनादी की कि हे पुरुषोत्तमो ! तुमको समुद्र के पास तीर्थयात्रा करनी चाहिये २४ ॥

इति श्रीमहाभारते मुशलपर्वणि द्वितीयोऽध्यायः २ ॥

तीसरा अध्याय ।

वैशम्पायन बोले कि रात्रि के समय स्वप्न में स्त्रियों के सौभाग्य-मंगलसूत्रादिकों को चुराती और सफ़ेद दाँत निकाले, हँसती हुई काली द्वारका के चारों ओर दौड़ती थी । स्वप्न में अग्निहोत्रशाला और रहने के भवनों में भयानक गिद्धों ने वृष्णि और अन्धकों को घायल किया १ । २ भूषण, छत्र, ध्वजा और कवच ये सब भयानक राक्षसों से लूटे हुए दिखाई पड़े ३ वृष्णियों के देखते हुए अग्नि का दिया हुआ वज्रनाभि और लोहमय श्रीकृष्णजी का चक्र आकाश को चला ४ दारुक सारथी के आगे चित्त के समान शीघ्रगामी, चारों उत्तम घोड़े उस दिव्य सूर्यवर्ण के तैयार रथ को लिये हुए सागर के ऊपर होकर चले गये ५ श्रीकृष्ण और बलदेवजी से अच्छी तरह पूजित; ताल और गरुड़जी से विचित्र बड़ी बड़ी ध्वजाओं को अप्स-राओं ने ऊपर ही से खींच लिया और दिन रात यही कहा कि तीर्थ-यात्रा को जाओ ६ तब चलने के अभिलाषी वृष्णि और अन्धकवंशी नरोत्तमों ने बालबच्चों समेत तीर्थयात्रा चाही ७ अन्धक और वृष्णियों ने नाना प्रकार के भोजन और भक्षण की वस्तुएँ-मांस और पीने की मद्य आदिक वस्तुएँ तैयार कीं ८ फिर बड़े सुन्दर वे लोग तेजस्वी सेनाओं के समूह, हाथी, घोड़े और रथों की सवारी से नगर के बाहर निकले ९ बहुतसी खाने पीने की वस्तुएं साथ लिये हुए यादव लोग स्त्रियों समेत राजा की आज्ञा से प्रभासक्षेत्र में अपने निवासस्थान पर

ठहरे १० मोक्ष में पण्डित, बड़े योगी उद्धवजी समुद्र के पास यादवों को शीघ्र ही नाशवान् देख, उन वीरों को बिदा करके चले गये ११ फिर वृष्णियों के नाश को जाननेवाले श्रीकृष्णजी ने हाथ जोड़कर उस महात्मा को रोकना नहीं चाहा १२ मृत्यु के पञ्जे में फँसे हुए वृष्णि और अन्धक महारथियों ने तेज से पृथ्वी और आकाश को पूर्ण करके जानेवाले उद्धव को देखा १३ उन महात्माओं का वह भोजन जो ब्राह्मणों के निमित्त तैयार हुआ था; मद्य की गन्ध से युक्त होने के कारण बन्दरों को दिया गया १४ फिर प्रभासक्षेत्र में बड़े तेजस्वी यादवों का मद्यपान प्रारम्भ हुआ। वे सैकड़ों बाजों, नटों और नर्तकों से घिरे हुए थे १५ श्रीकृष्णजी के सम्मुख बलदेवजी, सात्यकी, गद और बभ्रु ने कृतवर्मा के साथ मद्यपान किया १६ फिर मदमत्त सात्यकी ने सभासदों के बीच कृतवर्मा को हँसकर और अपमान करके कहा कि १७ कृतवर्मा! कौन घायल हुआ! क्षत्रिय और मृतक के समान सोनेवालों को मारे? तुम्हारा वह कर्म यादव नहीं सह सकते १८ सात्यकी के इस प्रकार कहने पर रथियों में श्रेष्ठ प्रद्युम्न ने कृतवर्मा का अपमानकर उस वचन की प्रशंसा की १९ तब निन्दायुक्त दहिने हाथ से दिखाते हुए अत्यन्त क्रोधयुक्त कृतवर्मा ने उससे कहा कि २० युद्ध में टूटी भुजावाला, शरीर त्यागने के निमित्त बैठा हुआ भूरिश्रवा तुझ निर्दय वीर से कैसे गिराया गया २१ यह सुनकर वीरों के मारनेवाले श्रीकृष्णजी ने तिरछी दृष्टि से देखा २२ स्यमन्तक मणि और सत्राजित की कथा सात्यकी ने मधुसूदनजी को सुनाई २३ जिसे सुनकर रोदनकरती हुई, क्रोधयुक्त सत्यभामा श्रीकृष्णजी को क्रोधित करने उनके पास आई २४ फिर क्रोधयुक्त सात्यकी ने उठकर कहा, कि हे सुन्दरि! मैं द्रौपदी के पांचों पुत्रों, धृष्टद्युम्न और शिखण्डी के मार्ग पर—उनकी पदवी पर चलता हूं और शपथ खाता हूं कि जिस दुर्बुद्धि अश्वत्थामा के साथी पापी कृतवर्मा ने २५। २६

रात्रि को सोते हुए वीर मारे; उसकी अवस्था और शुभकीर्ति अब समाप्त हुई २७ क्रोधयुक्त सात्यकी ने इस प्रकार कहकर केशवजी के समीप सम्मुख जाकर खड्ग से कृतवर्मा का शिर काटडाला २८ तब श्रीकृष्णजी चारों ओर के अन्य मनुष्यों को भी मारनेवाले सात्यकी को रोकने के लिये दौड़े २९ महाराज ! फिर समय की विपरीतता से प्रेरित सब भोज और अन्धकवंशियों ने इकट्ठे हो सात्यकी को घेर लिया ३० समय की गति के जानकार महातेजस्वी श्रीकृष्णजी शीघ्रता से दौड़नेवाले, क्रोधयुक्त यादवों को देखकर क्रोधित नहीं हुए ३१ मदिरा से मतवाले मृत्यु के वशीभूत उन लोगों ने उच्छिष्ट पात्रों से सात्यकी को घायल किया ३२ उसके घायल होने पर क्रोध युक्त और सात्यकी के छुड़ाने के अभिलाषी प्रद्युम्न उनके मध्य में आये ३३ वह सात्यकी भोज और अन्धकों से घिर गया। भुजपराक्रम से शोभायमान वे दोनों वीर ३४ श्रीकृष्णजी के देखते हुए शत्रुओं की अधिकता से मारे गये। यदुनन्दन केशवजी ने सात्यकी समेत अपने पुत्र को मृतक देखकर ३५ क्रोध से एक साथ ही पटेलों को हाथ में लिया। उनके इकट्ठे मिलने से भयानक वज्र के समान वह लोहे का मूसल हुआ। श्रीकृष्णजी ने उसी से उन सब आगे आनेवालों को मारा। तदनन्तर काल से प्रेरित अन्धक, भोज, शिनी और वृष्णिवंशियों ने ३६। ३७ युद्ध में परस्पर मूसलों से मारा। हे राजन् ! उनमें से जिस किसी क्रोधयुक्त ने पटेले को लिया, वह वज्ररूप दिखाई पड़ा। हे समर्थ, राजा जनमेजय ! वहां तृण भी मूसलरूप दीखा ३८। ३९ यह ब्रह्मशाप से ही ऐसा हो गया था। जिस तृणको फेंकते थे, वह अबध्यों को भी मारता था ४० हे भरतवंशिन् ! तब वह मूसल वज्ररूप देखने में आया। पुत्रने पिता को और पिताने पुत्रको मारा ४१ मदिरा के मद से अचेत परस्पर युद्ध करनेवाले वे कुकुर और अन्धकवंशी चारों ओर दौड़े और ऐसे गिरे जैसे कि पतंग अग्नि में

गिरते हैं। वहां किसी घायल ने भी भागने की बुद्धि नहीं की ४२ उस स्थानपर मधुसूदनजी ने जिस मूसल को देखा; उसे ही पकड़कर नियत हुए ४३ माधवजी साम्ब, चारुदेष्ण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध को मरा हुआ देखकर क्रोधयुक्त हुए ४४ पृथ्वी पर गिरे हुए गद को देखकर अत्यन्त क्रोधयुक्त शार्ङ्गधनुषधारी ने बचेहुओं का भी नाश कर दिया ४५ शत्रुओं के पुर जीतनेवाले, महातेजस्वी बभ्रु और दारुक ने उन मारनेवाले श्रीकृष्णजी से ४६ कहा, कि हे भगवन् ! तुमने बहुत से मनुष्य मारे अब बलदेवजी की खोज करें और जहां वे हों, वहीं चलें ४७ ॥

इति श्रीमहाभारते मुशलपर्वणि तृतीयोऽध्यायः ३ ॥

चौथा अध्याय ।

वैशम्पायन बोले, कि इसके पीछे शीघ्रगामी दारुक, केशव और बभ्रु तीनों बलदेवजी की खोज में निकले। उन्होंने अतुल पराक्रमी बलदेवजी को एक वृक्ष के नीचे एकान्त में ध्यानमग्न देखा १ श्रीकृष्णजी ने महानुभाव बलदेवजी को पाकर दारुक को आज्ञा दी, कि तुम कौरवों के पास जाकर यादवों के इस बड़े विनाश का वृत्तान्त अर्जुन से सुनाओ २ ब्रह्मशाप से यादवों को मरा हुआ सुनकर अर्जुन शीघ्रता से यहां आवेगा। इस प्रकार आज्ञा पाकर बुद्धिमान् दारुक रथ की सवारी से कुरुदेशों को गया ३ दारुक के चले जाने पर केशवजी ने बभ्रु से कहा, कि तुम शीघ्रता से स्त्रियों की रक्षा को जाओ। चोर मनुष्य धन के लोभ से कहीं उनको न मारें ४ केशवजी की आज्ञा से, मदोन्मत्त बिरादरी के मरने से पीड़ित बभ्रु वहां से चला तो लुब्धक के लोह मुद्गर में संयुक्त, ब्रह्मशाप से उत्पन्न, मूसल ने अकस्मात् केशवजी के सम्मुख विश्राम लेनेवाले अकेले बभ्रु को मारा ५ तब बड़े तेजस्वी श्रीकृष्ण ने बभ्रु को मरा हुआ देखकर बड़े भाई से कहा, कि हे बलदेवजी ! मैं जबतक स्त्रियां अपनी बिरादरी-

वालों को सौंप न आऊं तबतक तुम यहीं बैठे बैठे मेरी बाट देखना ६ फिर जनार्दनजीने द्वारका में प्रवेशकर अपने पिता से कहा कि आप अर्जुन के आने तक हमारी सब स्त्रियों की रक्षा करें ७ वन में बलदेवजी मेरी बाट देखते हैं; अब मैं उनसे मिलूंगा। मैंने प्रथम राजा और कौरवों का तथा अब यह यादवों का नाश देखा है ८ अब मैं यादवों के विना इस यादवपुरी को देखने में भी समर्थ नहीं हूं। मैं बलदेवजी के साथ वन में जाकर तप करूंगा ९ श्रीकृष्णजी ऐसा कहकर पिता के चरणों को शिर से स्पर्श करके शीघ्र ही चले गये। इसके पीछे स्त्रियां और बालकों के उस नगरी में बड़े शब्द हुए १० केशवजी ने शोकयुक्त रोनेवाली स्त्रियों के शब्द सुनकर, वहां से फिर लौटकर कहा कि अर्जुन इस पुरी में आवेगा। वह नरोत्तम तुम को दुःखों से छुटावेगा ११ यह कह, केशवजीने वन में जाकर एकान्त में अकेले बैठे हुए बलदेवजी को देखा फिर योग से संयुक्त बलदेवजी के मुख से निकलनेवाले बड़े भारी श्वेत सर्प को देखा १२ अपने शरीर को छोड़कर रक्तमुख, सहस्र शिरधारी, पर्वतस्वरूप, महानुभाव शेषनागजी समुद्र की ओर गये १३ उनको देखकर समुद्र ने अभ्युत्थानपूर्वक स्वागत किया और दिव्य, नाग, पवित्र नदियां, कर्कोटक, वासुकी, तक्षक, पृथुश्रव, वरुण, कुञ्जर १४ मिश्री, शंख, कुमुद, पुण्डरीक, महात्मा धृतराष्ट्र, नागह्राद, क्राथ, बड़ा तेजस्वी शितिकण्ठ, चक्रमद, अतिखण्ड १५ नागों में श्रेष्ठ दुर्मुख, अम्बरीष और स्वयं राजा वरुणने भी उनकी अगवानी की; कुशलक्षेम पूछकर उनको प्रसन्न किया। उन सबने अर्घ्य पाद्यआदिक क्रियाओं से उनका पूजन किया १६ फिर भाई के चले जाने पर सब गतियों के ज्ञाता दिव्यदृष्टिवाले महातेजस्वी निर्जन वन में घूमते और चिन्ता करते हुए वासुदेवजी पृथ्वी पर बैठ गये १७ जब गान्धारी ने कहा था तभी श्रीकृष्णजी ने विचार लिया था और उच्छिष्ट खीर को शरीर में

मलने पर जो वचन दुर्वासा ऋषि ने कहा था, उसको भी स्मरण किया १८ फिर अन्धक, वृष्णि और कौरवों के नाश को शोचते हुए उन महानुभावने परमधाम में जाने का अपना समय मान इन्द्रियों का निरोध किया १६ सब अर्थ और तत्त्व के जाननेवाले देवता श्रीकृष्ण ने भी त्रिलोकी के पालनार्थ दुर्वासा ऋषि के वचन की रक्षा के लिये अपने शरीर को त्यागने की शुद्धता चाही २० वाणी और मनको रोककर श्रीकृष्ण जी महायोग को प्राप्तकर सोगये। तब भयंकर शिकार करने की इच्छा से 'जरा' लुब्धक उस स्थान पर आया २१ मृग की शंका कर उस लुब्धक ने योग से संयुक्त सोनेवाले केशवजी के पैर के तलुये को बाण से घायल किया और उसे पकड़ने की अभिलाषा से बड़ी शीघ्रता से वहां गया २२ वहां उस लुब्धक ने योग से संयुक्त पीताम्बरधारी, अनेक भुजाएँ रखनेवाले पुरुष को देखा; तब भयभीत 'जरा' व्याधने अपने को अपराधी मानकर उनके दोनों चरणों को पकड़ लिया २३ उन महात्माजी ने उसको विश्वास कराया कि तुम अपने स्वभाव से पृथ्वी और आकाश को पूर्ण कर ऊपर के लोकों को जाओ। तुमने स्वर्ग प्राप्त किया। इन्द्र, अश्विनीकुमार, ग्यारह रुद्र, द्वादश सूर्य, अष्टवसु, विश्वेदेवा २४ उत्तम अप्सराओं समेत सिद्ध, मुनि, गन्धर्व उनको आगे से लेने को आये। हे राजन्! फिर षडैश्वर्य के स्वामी, बड़े तेजस्वी, अन्तर्यामी, उत्पत्ति और प्रलय के आश्रय स्थान २५ योगाचारी, अचिन्त्य प्रभाववाले श्रीकृष्णजी ने अपने प्रकाश से पृथ्वी और आकाश को व्याप्त कर अपना लोक पाया। हे राजन्! देवता, ऋषि और चरणों से युक्त श्रीकृष्णजी २६ झुके हुए गन्धर्वराज, श्रेष्ठ अप्सराओं और साध्योंसे पूजित देवताओं ने भी उस ईश्वरकी स्तुति की। श्रेष्ठमुनियों ने ऋग्वेद की ऋचाओं से स्तुति की और प्रशंसा करनेवाले गन्धर्व भी उनके सम्मुख हुए तथा इन्द्र ने प्रीति से उनको प्रसन्न किया २७॥

इति श्रीमहाभारते मुशलपर्वणि चतुर्थोऽध्यायः ४ ॥

पाँचवाँ अध्याय।

वैशम्पायन बोले कि दारुकने कौरवों से मिलकर महारथी पाण्डवों से मूसल के द्वारा वृष्णियों के नाश हो जाने का वृत्तान्त वर्णन किया १ भोज, अन्धक और कुकुरों समेत मरनेवाले वृष्णियों को सुनकर शोक से दुःखी पाण्डव भयभीत हुए। फिर केशवजी का प्यारा मित्र अर्जुन मामा के देखने को चला और कहा कि यह इस प्रकार नहीं है २। ३ हे जनमेजय! उस वीर अर्जुन ने दारुक के साथ द्वारका में जाकर अपने मामाको विधवा स्त्री के समान देखा ४ पहले लोक-नाथ से सनाथ, पर अब अनाथ स्त्रियां अर्जुन को देखकर पुकारीं ५ वासुदेवजी की सोलह हज़ार स्त्रियों ने अर्जुन को देखकर बड़ी पुकार मचाई ६ अश्रुपातों से पूर्णनेत्र अर्जुन श्रीकृष्ण और पुत्रों से रहित स्त्रियों को देखते ही उन्हें देखने में समर्थ नहीं हुआ ७ बुद्धिमान् अर्जुन ने वैतरणी नदी के समान भयानक द्वारका रूपी नदी को देखा। उसमें वृष्णि और अन्धकरूपी जल था; घोड़ेरूपी मत्स्य, रथरूपी घिर्नई, महलरूपी तीर्थ और बड़े ह्रद थे ८ उसमें रत्नरूप शैवाल, वज्र से बने हुए, परकोटारूपी माला, मार्गरूप झिरना और भँवर थे; चौराहेरूपी तालाब, श्रीकृष्ण और बलदेवजी बड़े ग्राह तथा कबन्धरूपी मगर थे। वह नदी बाजे और रथों के शब्दों से शब्दायमान थी ९। १० इस प्रकार से उत्तम उस द्वारकापुरी को अर्जुन ने वृष्णियों से रहित ऐसी शोभाहीन और आनन्द विहीन देखा जैसे कि शिशिर ऋतु में कमलिनी अशोभित होती है ११ उन स्त्रियों के करुणा शब्द सुनकर और द्वारका की दशा देख अर्जुन ज़ोर से विलाप कर अश्रुपातों समेत पृथ्वी पर गिर पड़े १२ इसके अनन्तर सत्राजित की पुत्री सत्यभामा और रुक्मिणीजी समीप आकर रोने लगीं १३। १४ फिर पाण्डव अर्जुन गोविन्दजी की स्तुति और कीर्तन कर स्त्रियों को दिलासा दे मामाजी को देखने गये १५॥

इति श्रीमहाभारते मुशलपर्वणि पञ्चमोऽध्यायः ५॥

छठा अध्याय।

वैशम्पायन बोले कि अर्जुन ने महात्मा वसुदेवजी को पुत्र शोक से दुखित, शयन करते हुए देखा १ अश्रु से पूर्ण नेत्र, बड़ी छाती और भुजाओंवाले बड़े पीड़ित अर्जुन भी दुखी वसुदेवजी के चरण पकड़े २ शत्रुनाशक, महाबाहु वसुदेवजी ने अपनी भगिनी के पुत्र का मस्तक सूंघना चाहा परन्तु सूंघने में समर्थ न हुए ३ सब पुत्र, भाई, पोते, भानजे और मित्रों को स्मरण कर रोते हुए महाबाहु वृद्ध वसुदेवजी ने भुजाओं से अर्जुन को लपेट कर विलाप किया ४ वसुदेवजी बोले कि हे अर्जुन! जिन्हों ने राजाओं और सैकड़ों दैत्यों को जीता; उनको अब यहां फिर नहीं देखता हूं और कठिनता से मरनेवाला मैं जीता हूं ५ हे अर्जुन! तुम्हारे बड़े प्यारे शिष्य प्रद्युम्न और सात्यकी के अन्याय से सब वृष्णि मारे गये ६ तुम बातचीत में भी जिनकी प्रशंसा किया करते थे; वे वृष्णि वीरों के अतिरथी प्रद्युम्न और सात्यकी मारे गये ७ हे श्रेष्ठ कौरव! वे दोनों सदैव श्रीकृष्ण के प्रियकारी और बड़े प्रधान थे ८ हे अर्जुन! मैं सात्यकी, कृतवर्मा, अक्रूर और प्रद्युम्न की निन्दा नहीं करता हूं। इसमें केवल ब्रह्मशाप ही मुख्य कारण था ९ क्योंकि जिस जगत् के प्रभु ने पराक्रम के बल से अहंकारी शिशुपाल, केशी और कंस को मारा १० निषादों के राजा एकलव्य, कलिङ्ग देशों के राजा, मगध, गान्धार, काशी और मरुभूमि के राजाओं को मारा ११ उसी प्रकार पूर्वीय, दक्षिणीय और पहाड़ी राजाओं को भी मारा; उन मधुसूदन ने वंश के लड़कों के अपराध से इस वंशभरे के नाश का विचार नहीं किया १२ उस प्रभु विष्णु ने अपने बिरादरीवालों के नाश को जाना परन्तु उस मेरे पुत्र ने सदैव उसका विचार नहीं किया १३। १४ हे परन्तप! गान्धारी और ऋषियों के वचन को उस जगत्पति ने मिथ्या करना नहीं चाहा १५ हे परन्तप! तुम स्वयं जानते हो, कि अश्वत्थामा के अस्त्र से मृतक तुम्हारा पौत्र भी उसी

के तेज से जीता है १६ उस तुम्हारे मित्र ने अपने सजातियों की रक्षा करना न चाहा। फिर इन पुत्र, पौत्र, भाई और मित्रों को १७ पृथ्वी पर मृतक देखकर मुझ से कहा कि अब इस कुल का नाश वर्तमान हुआ १८ सो इस द्वारकापुरी में अर्जुन आवेगा; उससे वृष्णियों के इस बड़े नाश का वृत्तान्त तुमको कहना चाहिए १९ हे प्रभो! महातेजस्वी अर्जुन यादवों का नाश सुनकर निस्सन्देह शीघ्र ही आवेगा। मुझे ही अर्जुन जानो और जो अर्जुन है, सो मैं हूं। वह जो आपसे कहै, उसको उसी प्रकार करना आपको योग्य है। हे भरतर्षभ, अर्जुन! श्रीकृष्ण के ऐसे वचन जानो २०।२१ पाण्डव अर्जुन समय पर आकर स्त्री बालकों समेत आपका क्रियाकर्म करेगा २२ यहां से अर्जुन के चले जाने पर परकोटा और अट्टालिकाओं समेत इस नगर को शीघ्र ही समुद्र डुबा देगा २३ मैं सच कहता हूं कि किसी पवित्र देश में बुद्धिमान् बलदेवजी समेत नियम में प्रवृत्त होकर शरीर त्यागूंगा २४ बुद्धि से परे पराक्रमी केशवजी मुझसे ऐसा कहकर और बालकों समेत मुझे छोड़कर किसी दिशा को चले गये २५ सो मैं उन दोनों तेरे भाइयों को और बिरादरी के भयकारी नाश को शोचता हुआ शोकग्रस्त होकर भोजन नहीं करता हूं २६ हे पाण्डव, अर्जुन! मैं न तो भोजन ही करूंगा और न जीता रहूंगा। तुम प्रारब्ध से आ गये हो; अब तुम श्रीकृष्ण की कही हुई सब बातें पूर्ण करो २७ हे अर्जुनरूप, श्रीकृष्ण! यह राज्य, स्त्री और रत्नादिक सब तुम्हारे हैं। मैं तो अब अपने प्यारे प्राणों को त्यागूंगा २८॥

इति श्रीमहाभारते मुशलपर्वणि षष्ठोऽध्यायः ६॥

सातवाँ अध्याय।

वैशम्पायन बोले कि हे परन्तप! मामा के ये वचन सुनकर महादुखी अर्जुन ने दुखीचित्त वसुदेवजी से कहा कि १ हे मामाजी! मैं यहां किसी दशा में भी श्रीकृष्ण और बान्धवों से रहित पृथ्वी को

देखने में भी समर्थ नहीं हूं २ राजा युधिष्ठिर, पाण्डव भीमसेन, सहदेव, नकुल, मैं और द्रौपदी हम छहों का एक मन है ३ हे कालविदांवर! निश्चय ही राजा युधिष्ठिर के भी राज्य त्यागने का समय वर्तमान है। उसे भी अब मौजूद ही समझो ४ हे शत्रुओं को जीतनेवाले! मैं सब प्रकार से वृष्णियों की स्त्रियों, बालकों और वृद्धाओं को साथ लेकर इन्द्रप्रस्थ में पहुँचाऊंगा ५ फिर अर्जुन ने दारुक से कहा कि मैं वृष्णि वीरों के मन्त्रियों को देखना चाहता हूं; विलम्ब मत करो ६ शूर अर्जुन उन महारथियों को शोचता हुआ यादवों की सुधर्मा नाम की सभा में पहुँचा। वहां सब मन्त्री और ब्राह्मण आसनों पर बैठे हुए अर्जुन को मध्यवर्ती करके सम्मुख हुए ७। ८ अत्यन्त दुखी अर्जुन ने, उन दुखीचित्त सब सावधान लोगों से कहा कि ९ मैं आप वृष्णि और अन्धकों के बालबच्चों को इन्द्रप्रस्थ लेजाऊंगा। इस सब नगर को समुद्र डुबा देगा १० अब तुम नाना प्रकार के रत्नों समेत सवारियां तैयार करो। यह वज्रनाभ इन्द्रप्रस्थ में आप लोगों का राजा होगा ११ हम सब सातवें दिन सूर्य के उदय होने पर नगर से बाहर निवास करेंगे। अब शीघ्र तैयारी करो, विलम्ब न करो १२ सुगमकर्मी अर्जुन के वचन सुनकर उन सबने शीघ्र ही तैयारी की क्योंकि वे सभी अपनी सिद्धि के इच्छुक थे १३ बड़े शोक और मोह से पूर्ण अर्जुन उस रात्रि को केशवजी के स्थान पर रहे १४ फिर प्रातःकाल शूर के पुत्र प्रतापी महातेजस्वी वसुदेवजी ने आत्मा को परमात्मा में लीन कर उत्तमगति पाई १५ फिर कठिन रोने का बड़ा शब्द वसुदेवजी के महल में हुआ १६ शिर के बाल खुले; भूषण, माला आदिक त्यागनेवाली; हाथों से छाती पीटनेवाली सब स्त्रियों ने करुणापूर्वक महाविलाप किया १७ स्त्रियों में श्रेष्ठ देवकी, भद्रा, रोहिणी और मदिरा अपने पति वसुदेव की चिता के पास आईं १८ हे भरतवंशिन्! अर्जुन ने वसुदेवजी को बड़े बहुमूल्य विमान में बहुत से मनुष्यों और गाजे बाजे के साथ

निकाला १६ दुःख और शोक से महापीड़ित द्वारकावासियों और पुरवासियों के अनेक यूथ उनके साथ चले २० फिर उस सवारी से आगे अश्वमेध सम्बन्धी उनका छत्र, ज्वलन्त अग्नियां और याचक ब्राह्मण चले। अच्छी अलंकृत वे देवियां हज़ारों विधवाओं समेत उस वीर के पीछे चलीं २१।२२ उन्होंने उस महात्मा के प्रिय स्थान पर जाकर स्थान का निर्णय करके उस महात्मा का पितृयज्ञ किया २३ पतिलोक को चाहनेवाली वे चारों स्त्रियां उस अग्नि की चिता में बैठकर उस वीर वसुदेव के साथ सती हुईं। पाण्डव अर्जुन ने चारों स्त्रियों समेत वसुदेवजी का चन्दन आदि अनेक सुगन्धित वस्तुओं से दाह किया २४।२५ इसके पीछे बढ़ी हुई अग्नि, सामग ब्राह्मण और रोनेवाली स्त्रियों के शब्द हुए २६ फिर वृष्णि और अन्धकों के वज्र-प्रमुख सब कुमारों और स्त्रियों ने उन महात्मा को जलदान किया २७ हे भरतर्षभ! तब अर्जुन उस कर्म को कराकर जहां वृष्णि लोग मारे गये थे वहां गये २८ वहां युद्ध में उनको गिरा हुआ देखकर अर्जुन अत्यन्त दुखी हुआ। समय और प्रधानता के अनुसार विधिपूर्वक उनके भी क्रिया कर्म किये जो कि ब्रह्मशाप के कारण पटेलों से उत्पन्न मूसलों से मारे गये थे २९।३० फिर अर्जुन ने वासुदेव और बल-देवजी के शरीरों को खोजकर सत्य और ठीक कर्म करनेवाले आप्त-पुरुषों के द्वारा उनका दाह कराया ३१ पाण्डव अर्जुन विधिपूर्वक उनकी क्रिया और कर्म करके सातवें दिन बड़ी शीघ्रता से रथ में सवार होकर चला ३२।३३ फिर रोदन और शोक से युक्त वृष्णि-वीरों की स्त्रियां घोड़े, बैल और खच्चरों से जुते हुए रथों की सवारियों में महात्मा अर्जुन के पीछे चलीं। अन्धक और वृष्णियों के सेवक, टहलुये, सवार, रथी, सब पुरवासी और देशवासी; वीरों से रहित वृद्ध, बालक और स्त्रियों को चारों ओर से घेरकर अर्जुन की आज्ञा से चले ३४।३५ हाथी के सवार पर्वताकार हाथियों की सवारी से, हाथी

के चरणरक्षक और शस्त्रधारी मनुष्यों समेत चले। अर्जुन के साथी, अन्धक और वृष्णियों के सब पुत्र, ब्राह्मण, क्षत्रिय, बड़े धनी वैश्य शूद्र ३६।३७ और बुद्धिमान् वासुदेवजी की सोलह हज़ार रानियां अपने पोते वज्रनाभ को आगे कर चलीं ३८ भोज, अन्धक और वृष्णियों की असंख्य अनाथ स्त्रियां द्वारका से बाहर निकलीं ३६ शत्रुओं के पुरों का जीतनेवाला, रथियों में श्रेष्ठ अर्जुन समुद्र के समान बड़े धन से युक्त स्त्रियों के समूहों को ले चला ४० तब उन मनुष्यों के निकल जाने पर समुद्र ने सब रत्नों से पूर्ण द्वारका को डुबो दिया ४१ पुरुषोत्तम अर्जुन ने पृथ्वी के जिस जिस भाग को त्यागा उस उस स्थान को समुद्र ने जल में छिपालिया ४२ द्वारकावासी लोग यह अपूर्व चमत्कार देखकर होनहार को अद्भुत मान शीघ्रता से चल दिये ४३ अर्जुन क्रीड़ा के योग्य वन, पर्वत और नदियों पर निवास कर वृष्णियों की स्त्रियों को ले आये ४४ धनसमूहोंवाले बुद्धिमान् अर्जुन ने पञ्चनद में गौ, पशु और धान्यों से पूर्ण देश में अपना निवास किया ४५ हे भरतवंशिन्! इसके अनन्तर अकेले अर्जुन के साथ उन विधवा स्त्रियों को देखकर चोरों को बड़ा लालच हुआ ४६ उन पापी, लोभ से हतबुद्धि अशुभदर्शन भीलों ने अपने मन्त्रियों से सलाह की कि ४७ यह धनुषधारी अकेला अर्जुन हमको उल्लंघनकर अनाथ, वृद्ध और बालकों को लिये जाता है। ये सब वीर पराक्रम-हीन हैं ४८ फिर हाथ में यष्टिरूप शस्त्र धारण करनेवाले हज़ारों चोर वृष्णियों की स्त्री आदिकों की ओर दौड़े ४६ और प्रत्येक मनुष्य को सिंहनादों से भयभीत कर समय की विपरीतता से प्रेरित चोर मारने को सम्मुख आये ५० तब वह अर्जुन अपने साथियों समेत अकस्मात् लौटा और उसने हँसकर उनसे कहा कि ५१ हे धर्म के न जानने-वालो! जो अपना जीवन चाहते हो, तो चलेजाओ; नहीं तो मेरे बाणों से घायल और टूटेअंग होकर शोच करोगे ५२ उस वीर से इस

प्रकार कहे और बारम्बार रोके जाने पर भी वे अज्ञानी उसके वचन का तिरस्कार कर मनुष्यों के सम्मुख दौड़े ५३ तब अर्जुन ने विपरीत दशा से रहित दिव्य धनुष को चढ़ाना प्रारम्भ किया; पर अनेक उपायों से किसी प्रकार भी वह तैयार न हुआ और कठिन भय होने पर शस्त्रों का स्मरण किया तो उनको भी स्मरण न करसका ५४। ५५ भय से उत्पन्न, उस बड़ी व्याकुलता को और युद्ध में उस प्रकार के अपने भुजबल को देखकर, दिव्य महाअस्त्रों के भूलजाने से अर्जुन लज्जित हुआ ५६ हाथी, घोड़े और रथ की सवारी से लड़नेवाले वृष्णियों के शूरवीर उस नाश होनेवाली स्त्रियों को बचाने में समर्थ नहीं हुए ५७ अधिक स्त्रियों के जहां तहां दौड़ने पर अर्जुन ने उनकी रक्षा में बड़े बड़े उपाय किये ५८ फिर सब शूरवीरों के आगे ही वे उत्तम स्त्रियां चारों ओर खींची गईं और बहुतसी स्वेच्छा से अपने आप चली गईं ५९ फिर व्याकुलतापूर्वक पाण्डव अर्जुन ने वृष्णियों के नौकरों की सहायता से गाण्डीवधनुष से बाण छोड़कर चोरों को मारा ६० हे राजन्! उसके वे बाण एक क्षणभर में ही चुक गये। पूर्वसमय में रुधिर के पीनेवाले वे अविनाशी बाण अब नाशवान् हो गये ६१ उस इन्द्र के पुत्र ने अपने बाणों को नाशवान् देख शोक और दुःख से व्यथित हो धनुष की कोटियों से चोरों को मारा ६२ हे जनमेजय! फिर वे म्लेच्छ अर्जुन के ही आगे से चारों ओर को देखते हुए वृष्णि और अन्धकों की स्त्रियों को लेकर चले गये ६३ अर्जुन ने चित्त से उस होनहार को शोचा और महाशोकयुक्त होकर बारम्बार श्वासाएँ लीं ६४ हे राजन्! अस्त्रों की विस्मरणता, भुजबल की न्यूनता, धनुष की अनाकर्षणता और बाणों की समाप्ति से ६५ होनहार को प्रबल जान अर्जुन उदास होकर लौटा और कहने लगा कि सब नाशवान् है ६६ फिर बड़ा बुद्धिमान् अर्जुन बची हुई उन स्त्रियों को; जिनके कि बहुत से रत्न नाश होगये थे; अपने साथ लेकर कुरुक्षेत्र में उतरा ६७ इस प्रकार अर्जुन ने लुटने से बची हुई

वृष्णियों की स्त्रियों को लाकर जहां तहां स्थानों में ठहराया । फिर उन्होंने कृतवर्मा के लड़के को मार्तिकावत नगर का राजा किया और बची हुई भोजराज की स्त्रियां उसे सौंपीं ६८ । ६९ अर्जुन ने वीरों से रहित उन सब स्त्रियों और बालक, वृद्धोंको लाकर इन्द्रप्रस्थमें ठहराया ७० धर्मात्मा ने सात्यकी के प्यारे पुत्र को; जिसके अग्रभाग में वृद्ध और बालक थे; सरस्वती के तट पर ठहराया ७१ रुक्मिणी, गान्धारी, शैब्या, हेमवती, देवी जाम्बवती, ये सभी अग्नि में प्रवेश कर गईं ७२ फिर उस शत्रुहन्ता ने वज्र को इन्द्रप्रस्थ का राजा किया । वज्र से रुकी हुई अक्रूर की स्त्रियां वनवासिनी हुईं ७३ हे राजन् ! इसी प्रकार श्रीकृष्ण की सत्यभामा आदिक प्यारी स्त्रियां और अन्यान्य स्त्रियां तपस्या का निश्चय कर वन में चली गईं ७४ वहां जाकर फल मूलादिक भोजन करनेवाली वे स्त्रियां हरि के ध्यान में संलग्न हो हिमालय की परिक्रमा करके कलाप ग्राम में पहुँचीं ७५ जो द्वारकावासी मनुष्य अर्जुन के यहां गये, उनको अर्जुन ने योग्यता के समान भागकर वज्र के सुपुर्द किया ७६ अश्रु से पूर्ण नेत्र अर्जुन ने समयानुसार सब काम करके कृष्ण द्वैपायन व्यासजी को आश्रम में बैठे हुए देखा ७७ ॥

इति श्रीमहाभारते शतसाहस्र्यां संहितायां वैयासिक्यां मुशलपर्वणि सप्तमोऽध्यायः ७ ॥

आठवाँ अध्याय ।

वैशम्पायन बोले कि हे राजन् ! सत्यवक्ता ऋषि के आश्रम में प्रवेश करते हुए अर्जुन ने व्यास मुनि को एकान्त में बैठे हुए देखा १ अर्जुन ने धर्मज्ञ महाव्रत के सम्मुख जाकर 'मैं अर्जुन हूं' कहकर दण्डवत् की २ व्यास मुनि ने कहा कि तेरा आना शुभ, मंगलकारी हो और बड़े प्रसन्न मन से कहा कि बैठो ३ व्यासजी ने अर्जुन को उदास, बारम्बार श्वास लेनेवाला और व्याकुल देखकर कहा कि ४ हे अर्जुन ! तू बाल, नख और वस्त्र से निचोड़े हुए जल अथवा मुख के उच्छिष्ट

जल से छिड़का गया है या रजस्वला स्त्री से तूने संभोग किया है अथवा ब्राह्मण मारा है या युद्ध में पराजित हुआ है, जिससे कि तुम तेजहीन विदित होते हो । परन्तु मैं तुमको पराजित नहीं जानता हूं । हे भरतर्षभ ! यह क्या बात है ? हे अर्जुन ! जो मेरे सुनाने के योग्य हो तो मुझसे शीघ्र कहो ५ । ६ अर्जुन ने कहा कि मेघवर्ण, शोभायमान दिव्य कमललोचन श्रीकृष्णजी बलदेवजी समेत अपने शरीर को त्यागकर स्वर्ग को गये ७ फिर प्रभासक्षेत्र में ब्रह्मशाप से उत्पन्न, नाशक और रोमाञ्च करनेवाले मूसल की उत्पत्ति के द्वारा वृष्णि वीरों का नाश हुआ ८ हे ब्राह्मणवर्य ! जो वे भोज, वृष्णि और अन्धक शूरवीर महात्मा, बड़े पराक्रमी और सिंह के समान अहंकारी थे; उन्होंने युद्ध में परस्पर एक दूसरे को मारा ९ परिघ की समान भुजाओंवाले; गदा परिघ और शक्तियों के सहनेवाले वे सब लोग पटेलों से मारे गये । इस समय की विपरीतता को देखो । वे पांच लाख शूरवीर परस्पर सम्मुख होकर कालवश हुए १० । ११ मैं अब बारम्बार चिन्ता करता हुआ बड़े पराक्रमी यादवों और यशस्वी श्रीकृष्णजी के नाश को नहीं सहसकता १२ जिस प्रकार समुद्र की शुष्कता, पर्वत का चलना, आकाश का गिरना और अग्नि का शीतल होना असम्भव है, उसी प्रकार १३ मैं शार्ङ्गधनुषधारी श्रीकृष्ण के नाश को भी श्रद्धा के अयोग्य मानता हूं। मैं इस लोक में श्रीकृष्ण से जुदा रहना नहीं चाहता १४ हे तपोधन ! इससे अधिकतम जो दूसरा दुःख है उसको सुनो कि जिसके कारण बारम्बार चिन्ता करने पर मेरा हृदय फटा जाता है १५ हे ब्राह्मणवर्य ! पञ्चनद देश में रहनेवाले हज़ारों आभीरों ने मेरे देखते हुए समीप आकर वृष्णियों को हरण कर लिया १६ मैं वहां धनुष के चढ़ाने में भी असमर्थ होगया । पूर्वसमय में मेरी भुजाओं का जैसा भुज बल था; वह उस समय पर नहीं हुआ । हे महामुने ! मेरे नानाप्रकार के अस्त्र भी स्मरण न हुए और मेरे बाण क्षणमात्र में चारों ओर नष्ट

होगये १७ । १८ पुरीरूप शरीरों में नियत, अप्रमेयात्मा, शंख, चक्र, गदाधारी, चतुर्भुज, श्याम दल के समान नेत्रोंवाला, पीताम्बरधारी १९ जो महातेजस्वी पुरुष मेरे रथ के आगे शत्रुओं की सेना को भस्म करता जाता था, मैं उस अविनाशी को नहीं देखता हूं २० जिसने पहले ही अपने तेज से शत्रुओं की सेनाओं को भस्म किया और तब मैंने उनको अपने गाण्डीव के छोड़े हुए बाणों से नाश किया २१ हे बड़े साधु ! उसको न देख मैं व्याकुल होकर घूमता हुआ शान्ति नहीं पाता हूं २२ मैं विना वीर श्रीकृष्ण के अपना भी जीवन नहीं चाहता हूं। परमधाम में विष्णु का जाना सुनकर मेरी दिशाएँ भी मोहित हो गईं २३ हे बड़े साधु ! आप मुझे कल्याणकारी उपदेश करने योग्य हैं क्योंकि मैं बल-पराक्रम से अपने सजातीय भाई-बन्धुओं से रहित और अस्त्रादिकों से खाली होकर व्याकुल हूं २४ व्यासजी बोले कि हे कौरव्य ! ब्रह्मशाप से भस्मीभूत, वृष्णि और अन्धक महारथी लोगों का नाश हुआ। उनको शोचना तुम्हें योग्य नहीं है २५ वह उसी प्रकार भवितव्यता थी क्योंकि उन महात्माओं का वह प्रारब्ध भी हीन होगया कि शाप को दूर करने में समर्थ श्रीकृष्णजी ने भी ध्यान नहीं दिया २६ गोविन्दजी तीनों लोकों के सम्पूर्ण जड़ चैतन्यों को भी विपरीत दशा में कर सकते थे। फिर उन महात्मा को शाप दूर करना कौन बड़ी बात थी ? जो चक्र-गदाधारी, पुराणपुरुष, चतुर्भुज वासुदेवजी प्रीति से तुम्हारे रथ के आगे चलते थे २७।२८ उन बड़े नेत्रधारी श्रीकृष्णजी ने पृथ्वी का भार उतार, शरीर को त्यागकर अपना परमधाम पाया २९ हे पुरुषोत्तम, महाबाहु अर्जुन ! तुमने भी भीमसेन, नकुल और सहदेव के साथ देवताओं का बड़ा कार्य किया ३० हे कौरवों में श्रेष्ठ ! मैं तुमको कृत्यकृत्य और अच्छा सिद्ध मानता हूं। हे प्रभो ! तुम्हारा इस संसार का त्यागना समय के अनुसार कल्याणकारी है ३१ हे भरतवंशिन् ! इस ऐश्वर्य के समय में मनुष्यों की बुद्धि तीक्ष्ण और अग्रशोची होती

है और नाश के समय पर नष्ट होती है । यह सब काल को ही मूलरूप रखनेवाला है, फिर काल ही अपने आप इन संसार के बीजरूप पञ्च-तत्त्वों को अपने में लय करता है ३२।३३ वही काल पराक्रमी होकर फिर निर्बल होता है । वही इस लोक में ईश्वर होकर दूसरों का भी आज्ञावर्ती होता है अर्थात् विजय भी काल से ही होती है ३४ अब वे अस्त्र कृतकर्मी होकर जहां से आये थे, वहीं चले गये । जब समय होगा तब फिर तुम्हारे हाथ में आवेंगे ३५ हे भरतवंशिन्! आप लोगों को भी मुख्य गति मिलने का यही समय है । हे अर्जुन ! मैं इसी में आप सब लोगों का परम कल्याण मानता हूं ३६ वैशम्पायन बोले कि बड़े तेजस्वी व्यासजी के वचन को जानकर उनसे आज्ञा ले अर्जुन हस्तिनापुर नगर को चले ३७ वीर अर्जुन ने पुरी में प्रवेश-कर युधिष्ठिर के पास जा अन्धक और वृष्णियों का जैसा वृत्तान्त था, सब यथार्थ वर्णन किया ३८ ॥

इति श्रीमहाभारते शतसाहस्र्यां संहितायां मुशलपर्वण्यष्टमोऽध्यायः ८ ॥

इति मुशलपर्व समाप्त ।



श्रीनिकुञ्जविहारिणे नमः।

महाभारतभाषा महाप्रस्थानपर्व।

मंगलाचरणम्।

श्लोक॥ नव्याम्भोधरवृन्दवन्दितरुचिम्पीताम्बरालंकृतं प्रत्यग्रस्फुटपुण्डरीकनयनं सान्द्रप्रमोदास्पदम्॥ गोपीचित्तचकोरशीतकिरणम्पापाटवीपावकं स्वाराणमस्तकमाल्यलालितपदं वन्दामहे केशवम् १ या भाति वीणामिव वादयन्ती महाकवीनां वदनारविन्दे॥ सा शारदा शारदचन्द्रबिम्बा ध्येयप्रभा नः प्रतिभां व्यनक्तु २ पाण्डवानां यशोवर्ष्म सकृष्णमपि निर्मलम्॥ व्यधायि भारतं येन तं वन्दे बादरायणम् ३ विद्याविदग्रेसरभूषणेन विभूष्यते भूतलमद्य येन॥ तं शारदालब्धवरप्रसादं वन्दे गुरुं श्रीसरयूप्रसादम् ४ विप्राग्रणीगोकुलचन्द्रपुत्रः स विज्ञकालीचरणाभिधानः॥ तथैव प्रास्थानिकरम्यपर्व भाषानुवादं विदधाति सम्यक् ५॥

पहिला अध्याय।

श्रीनारायणजी, नरोत्तम नर और सरस्वती देवी को नमस्कार कर इतिहास वर्णन करता हूं। कर्मों से कृतकृत्य, महाअसह्य दुःखों में फँसे हुए पुरुषों को महाप्रस्थानप्रभृति उपायों से शरीर त्यागना योग्य है; इसी को प्रकट करते हुए पर्व का प्रारम्भ करते हैं। इसमें स्वर्ग प्राप्ति के हेतुओं के गुण और स्वर्ग की रुकावट के दोषों का वर्णन करेंगे। जनमेजय ने पूछा कि इस प्रकार से अन्धक और वृष्णियों के घराने में

मूसल सम्बन्धी युद्ध को सुनकर और उस प्रकार श्रीकृष्ण के स्वर्ग जाने पर पाण्डवों ने क्या किया १ वैशम्पायन बोले कि कौरवराज युधिष्ठिर ने इस प्रकार वृष्णियों का अत्यन्त नाश सुन स्वर्ग जाने का मनोरथ कर घर से निकलने में विचार, करके अर्जुन से कहा कि हे अर्जुन! काल ही सब जीवों को अपने में लय करता है। मैं कालरूपी फांसी को स्वीकार करता हूं। तुम भी इसमें विचार करने योग्य हो २।३ इस प्रकार से आज्ञप्त और 'काल काल' कहते हुए अर्जुन ने बुद्धिमान् बड़े भाई के वचन को अंगीकार किया। इसी प्रकार भीमसेन, नकुल और सहदेव ने अर्जुन के विचार को मन से जानकर स्वीकार कर लिया ४।५ धर्म की इच्छा से राज्य को त्यागनेवाले युधिष्ठिर ने युयुत्सु को बुलाकर सब राज्य उसको सौंपा ६ फिर दुःख से पीड़ित राजा युधिष्ठिर ने अपने राज्य पर परीक्षित का अभिषेक कराके सुभद्रा से कहा कि यह तुम्हारा पौत्र कौरवराज होगा और नाश होने से बचा हुआ वज्रनाभ यादवों का राजा किया गया ७।८ हस्तिनापुर में राजा परीक्षित और इन्द्रप्रस्थ में यादवों का राजा वज्रनाभ तुमसे रक्षा करने के योग्य है। देखो, अधर्म में कभी चित्त न करना। इस प्रकार उसे समझाकर निरालस्य धर्मात्मा युधिष्ठिर ने भाइयों समेत उन बुद्धिमान् वासुदेवजी, बलदेवजी, वृद्ध मामा और सब यादवों को जलदान कर विधि के अनुसार उनके श्राद्ध किये ९।११ उपाय करनेवाले युधिष्ठिर ने हरि के नाम से व्यास, नारद, तपोधन मार्कण्डेय, भारद्वाज और याज्ञवल्क्य को उत्तम स्वादयुक्त भोजन कराके शार्ङ्ग धनुषधारी का कीर्तन कर रत्न, वस्त्र, ग्राम, घोड़े और रथ ब्राह्मणों को दिये १२।१३ उस समय हजारों दासियाँ और दास भी ब्राह्मणों को दान किये। हे भरतवंशियों में श्रेष्ठ, जनमेजय! फिर पुरवासियों के अग्रवर्ती गुरु कृपाचार्यजी की पूजा करके १४ उनके शिष्य परीक्षित को उन्हें सौंपा। राजर्षि युधिष्ठिर ने सब राज्य के अधिकारी, सेवक और प्रजा के लोगों

को बुलाकर १५ अपनी इच्छा प्रकाशित की । उनके वचन सुनकर अत्यन्त व्याकुलचित्त पुरवासियों और देशवासियों ने उस वचन को स्वीकार न किया । उन्होंने राजा से कहा कि आपको ऐसा न करना चाहिए। पर धर्म और समय के ज्ञाता राजा युधिष्ठिर ने उस प्रकार न माना और पुरवासी तथा देशवासी मनुष्यों को सलाहकार बनाकर १६।१८ चलने का विचार किया । उस समय सब भाइयों ने भी साथ चलना अङ्गीकार किया। तब धर्मपुत्र राजा युधिष्ठिर ने १६ भूषण और पोशाकें उतारकर बल्कल वस्त्र धारण किये। हे भरतवंशियों में श्रेष्ठ! वे नरोत्तम राज्य त्यागने के समय विधिपूर्वक इष्टियज्ञ करके २० । २१ सब अग्नियों को जल में छोड़ चल दिये। फिर सब स्त्रियां प्रस्थान करनेवाले नरोत्तमों को, जिनमें छठी द्रौपदी थी, देखकर ऐसे विह्वल हो रोने लगीं २२ जैसे कि पूर्वसमय में, द्यूतकर्म में हारे हुओं को देखकर रोई थीं। चलने में सब भाइयों को प्रसन्नता हुई २३ वृष्णियों का नाश देखकर और युधिष्ठिर का सम्मत जानकर—पाँचों भाई छठी द्रौपदी और सातवें बड़े साधु कुत्ते २४ समेत राजा युधिष्ठिर हस्तिनापुर से निकले। सब पुरवासी और स्त्रियां दूर तक उनके पीछे पीछे गईं २५ उस समय कोई मनुष्य भी राजा युधिष्ठिर से यह कहने में समर्थ नहीं हुआ कि आप लौटिये । फिर सब नगरनिवासी लौट गये २६ कृपाचार्य आदिक युयुत्सु के पास रहे। हे कौरव ! सर्प की पुत्री उलूपी गंगा में प्रवेश कर गई, चित्राङ्गदा मणिपुर नगर को गई और बची हुई अन्य माताएँ परीक्षित के पास ही रहीं २७।२८ हे कौरव ! फिर उपवास करनेवाले पाण्डव यशस्विनी द्रौपदी सहित पूर्व की ओर को चले २६ योग से संयुक्त और धर्म संन्यास प्राप्त करने की इच्छा से महात्मा बहुत से देशों को देखते हुए नदी और सागरों पर गये ३० आगे आगे युधिष्ठिर, पीछे भीमसेन और इनके पीछे अर्जुन, नकुल और सहदेव चले ३१ सबसे पीछे कमलदल के समान नेत्रोंवाली स्त्रियों में उत्तम

श्यामा सुन्दरी द्रौपदी चलीं ३२ हे भरतवंशियों में बड़े साधु, जनमेजय ! एक कुत्ता वन जानेवाले पाण्डवों के पीछे चला । वे वीर इस क्रम से लोहती सागर को गये ३३ महाराज अर्जुन ने रत्नों के लोभ से दिव्य धनुष गाण्डीव और अक्षय तूणीरों को नहीं त्यागा। वहां उन्होंने प्रत्यक्ष पुरुषरूप से पर्वत के समान आगे मार्ग को रोके, खड़े हुए अग्नि को देखा ३४। ३५ अग्नि देवता ने पाण्डवों से कहा कि हे वीर पाण्डवो ! मैं अग्नि हूं ३६ हे महाबाहु युधिष्ठिर ! हे परन्तप भीमसेन ! हे वीर अर्जुन, नकुल और सहदेव ! तुम मेरे वचन को जानो ३७ हे उत्तम कौरव ! मैं अग्नि हूं। मैंने अर्जुन और नारायण के प्रभाव से खाण्डव वन को भस्म किया ३८ यह तुम्हारा भाई अर्जुन अपना श्रेष्ठ आयुध गाण्डीव छोड़कर वन को जाय। इससे अब कोई प्रयोजन नहीं है ३९ जो रत्नों का चक्र महात्मा श्रीकृष्णजी के पास था, वह भी स्वर्ग को गया। फिर काल पाकर दूसरे अवतार में वह उनके हाथ आवेगा ४० मैं पूर्वसमय में यह उत्तम गाण्डीव धनुष अर्जुन के लिये वरुण से ले आया था। इसे आप मुझे वरुण को देने के लिये दीजिये ४१ उन सब भाइयों ने अर्जुन को प्रेरणा की। तब उसने वह धनुष और दोनों अक्षय तूणीर जल में डाल दिये ४२ हे भरतर्षभ ! फिर अग्नि देवता वहीं अन्तर्द्धान हो गये और वे वीर पाण्डव दक्षिण की ओर चले ४३ इसके अनन्तर वे पाण्डव समुद्र के उत्तरीय तट से दक्षिण और पश्चिम के कोण नैर्ऋत दिशा को चले ४४ पश्चिम दिशा को लौटनेवाले पाण्डवों ने सागर से डूबी हुई द्वारका को भी देखा ४५ पृथ्वी की परिक्रमा करने के अभिलाषी, योगधर्मधारी, भरतवंशियों में बड़े साधु पाण्डव लोग उत्तर दिशा को लौटकर चल दिये ४६ ॥

इति श्रीमहाभारते महाप्रस्थानपर्वणि प्रथमोऽध्यायः १ ॥

दूसरा अध्याय।

वैशम्पायन बोले कि फिर सावधान चित्त, योग से संयुक्त पाण्डवों

ने उत्तर दिशा में हिमालय पर्वत को देखा १ उसको भी उल्लंघन करके उन्होंने बालू के समुद्र को देखा और पर्वतों में श्रेष्ठ, बड़े मेरु पर्वत को भी देखा २ उन शीघ्रगामी, योगधर्म रखनेवालों के मध्य में, ध्यान से चित्त हटानेवाली द्रौपदी पृथ्वी पर गिर पड़ी ३ महाबली भीमसेन ने गिरी हुई द्रौपदी को देख, विचार कर धर्मराज से कहा कि हे परन्तप! इस पत्नी से कभी कोई अधर्म नहीं हुआ। फिर यह द्रौपदी किस कारण से पृथ्वी पर गिर पड़ी ४। ५ युधिष्ठिर बोले कि हे पुरुषों में बड़े साधु भीमसेन! इसकी प्रीति अधिकता से अर्जुन में थी; अब यह उसी के फल को भोगती है ६ वैशम्पायन बोले कि भरतवंशियों में बड़े साधु, बुद्धिमान्, धर्मात्मा युधिष्ठिर इस प्रकार कहकर उसको विना देखे ही चित्त को समाधि में नियत करके चल दिये ७ फिर बुद्धिमान् सहदेव पृथ्वी पर गिरा। भीमसेन ने उसको भी गिरा हुआ देखकर राजा से पूछा कि ८ हम सबकी सेवा करनेवाला यह सहदेव अहंकार से रहित है। यह पृथ्वी पर क्यों गिरा ९ युधिष्ठिर बोले कि इसने अपने समान किसी को भी बुद्धिमान् नहीं माना। यह राजकुमार उसी अपने दोष से पृथ्वी पर गिरा है १० वैशम्पायन बोले कि कुन्ती के पुत्र युधिष्ठिर यह कह उसको भी छोड़कर भाइयों और कुत्ते समेत चल दिये ११ द्रौपदी और सहदेव के गिरने से पीड़ित बान्धवों का प्यारा शूर नकुल भी गिर पड़ा १२ सुन्दर दर्शनवाले, वीर नकुल के गिरने पर भीमसेन ने फिर राजा से कहा कि १३ धर्म में पूर्ण, गुरु का आज्ञाकारी, संसार भरे में अनुपम स्वरूपवान् नकुल भी पृथ्वी पर गिर पड़ा १४ भीमसेन से इस प्रकार सुनकर बुद्धिमानों में श्रेष्ठ, धर्मात्मा युधिष्ठिर ने नकुल के विषय में उत्तर दिया कि १५ इसको निश्चय था कि स्वरूप में मेरे समान कोई नहीं है; मैं ही अकेला रूप में सबसे अधिक हूं, यह इसके चित्त में था १६ इसी से नकुल गिर पड़ा। हे भीमसेन! तुम आओ। हे वीर! जिसका जो कर्म है, उसको वह

अवश्य भोगता है १७ उन तीनों को गिरा हुआ देख शत्रुओं के वीरों का मारनेवाला पाण्डव अर्जुन गिर पड़ा। इन्द्र के समान तेजस्वी, अजेय अर्जुन के गिरने और मरने पर भीमसेन ने राजा से कहा कि १८। १९ में स्वतन्त्रता की दशा में भी महात्मा अर्जुन का कोई मिथ्या कर्म नहीं स्मरण करता। फिर यह किस कर्म के फल से पृथ्वी पर गिरा २० युधिष्ठिर बोले—इसने कहा था कि मैं एक ही दिन में शत्रुओं का नाश करूंगा, पर इसने किया नहीं, इससे अपने को शूरवीर माननेवाला यह अर्जुन पृथ्वी पर गिरा २१ अर्जुन ने सब धनुषधारियों का जैसा अपमान किया, वैसा ऐश्वर्य चाहनेवाले मनुष्य को करना योग्य नहीं है २२ वैशम्पायन बोले कि राजा यह कहकर आगे चले, तो भीमसेन गिरा। गिरे हुए भीमसेन ने धर्मराज से कहा कि २३ हे राजन्! देखो, मैं आपका प्यारा होकर भी गिर पड़ा। मेरे गिरने का कारण यदि आप जानते हों, तो कहिये २४ युधिष्ठिर बोले कि भीमसेन! तुमने नियत परिमाण से अधिक भोजन किया और दूसरे को ध्यान में न लाकर अपने बल की तुम प्रशंसा करते रहे, इससे पृथ्वी पर गिरे हो २५ महाबाहु युधिष्ठिर ऐसा कहकर उसको भी विना देखे चल दिये। वह कुत्ता भी उनके पीछे गया जिसका कि मैंने बारम्बार उल्लेख किया है २६॥

इति श्रीमहाभारते महाप्रस्थानपर्वणि द्वितीयोऽध्यायः २॥

तीसरा अध्याय।

वैशम्पायन बोले कि इसके पीछे इन्द्र देवता अपने रथ के शब्द से पृथ्वी और आकाश को शब्दायमान करते हुए सम्मुख आये और युधिष्ठिर से बोले कि सवार हो जाओ १ भाइयों के गिरने के शोक से दुःखी युधिष्ठिर ने इन्द्र से कहा कि २ हे देवेश्वर! यहां पर मेरे सब भाई गिरे हैं, वे भी मेरे साथ जायँ। मैं अपने भाइयों के विना स्वर्ग जाना नहीं चाहता ३ हे इन्द्र! वह सुख के योग्य सुकुमार राजपुत्री

द्रौपदी भी हमारे साथ जाय । आप हमारी इस प्रार्थना को अंगीकार कीजिये ४ इन्द्र ने कहा कि तुम स्वर्ग में अपने सब भाइयों को देखोगे । वे तुमसे भी पहले द्रौपदी समेत स्वर्ग को गये हैं । हे भरतर्षभ ! तुम शोच मत करो ५ हे श्रेष्ठ ! तुम्हारे सब भाई मनुष्य शरीर को त्यागकर स्वर्ग को गये और तुम इसी शरीर से सदेह स्वर्ग को जाओगे ६ युधिष्ठिर बोले कि हे भूत-भविष्य के ईश्वर ! यह कुत्ता सदैव से मेरा भक्त है, यह भी मेरे साथ जाय । इस समय मेरी बुद्धि दया से पूर्ण है ७ इन्द्र बोले कि राजन् ! अब तुमने मेरी समानता, अमरपदवी, बड़ी लक्ष्मी, बड़ी सिद्धि और स्वर्ग के सुखों को प्राप्त किया । तुम कुत्ते का त्याग करो—इसमें निर्दयता नहीं है ८ युधिष्ठिर ने कहा कि हे श्रेष्ठ देवता, इन्द्र ! श्रेष्ठ पुरुष से नीच कर्म होना असम्भव है । चाहे उस लक्ष्मी की प्राप्ति मुझको भले ही न हो जिसके कारण भक्त जन को त्यागना पड़े ९ इन्द्र बोले कि स्वर्ग में कुत्ते पालनेवालों को स्थान नहीं है; क्योंकि 'क्रोधवशा' देवता उस अपवित्र मनुष्य के इष्टापूर्त्त यज्ञ, बावड़ी और कूपादिकों को नष्ट कर देते हैं । हे धर्मराज ! इसी से विचारपूर्वक कर्म करो; कुत्ते को त्यागो, इसमें निर्दयता नहीं है १० युधिष्ठिर ने उत्तर दिया कि हे महेन्द्र ! भक्त का त्यागना बड़ा अधर्म कहा है । वह लोक में ब्रह्महत्या के समान है । इसी से अब अपने सुख की चाह से मैं किसी दशा में भी इस कुत्ते का त्याग न करूंगा ११ मैं अपने प्राणों के नाश हो जाने पर भी भयभीत, भक्त, रक्षास्थान का प्रार्थी शरणागत, पीड़ित, घायल और प्राण की रक्षा चाहनेवाला—इतने लोगों का मैं कदापि त्याग न करूंगा । यह मेरा पुराना व्रत है १२ इन्द्र बोले कि 'क्रोधवशा' देवता कुत्ते की देखी हुई इन वस्तुओं को हर लेते हैं—किया हुआ दान, विस्तृत यज्ञ और होम इन सबको हर लेते हैं, इसलिये इस कुत्ते को त्यागो । कुत्ते के त्यागने से तुम देवलोक पाओगे १३ हे वीर ! तुमने भाइयों और द्रौपदी को भी

त्याग करके अपने कर्म से लोक को पाया। इस कुत्ते को क्यों नहीं त्यागते हो? तुमने जब सर्वस्व त्याग दिया है, तब यह कैसा मोह करते हो १४ युधिष्ठिर बोले कि लोकों में मर्यादा है कि मृतक मनुष्यों से सन्धि और विग्रह नहीं है। उनका जीवित करना मेरी शक्ति से बाहर था। इसी से उनको त्याग दिया। मैंने जीवित लोगों को नहीं त्यागा है १५ शरणागत को भयभीत करना, स्त्री को मारना, ब्राह्मणों का धन हर लेना और मित्र से शत्रुता करना—ये चारों और भक्त का त्यागना एक समान है। यह मेरा मत है १६ वैशम्पायन बोले कि प्रीतियुक्त धर्मस्वरूप भगवान् ने धर्मराज के वचन सुनकर प्रशंसायुक्त मधुर वचनों के द्वारा उनसे कहा कि १७ हे भरतवंशी राजेन्द्र! तुम पूर्वजों की रीति, बुद्धि और सब जीवों में नियत दया से कुलीन हो १८ हे पुत्र! इससे प्रथम द्वैत वन में मैंने परीक्षा ली थी, जहां जल की खोज में तुम्हारे भाइयों को मृतक रूप किया था। वहां तुमने अपनी दोनों माताओं की समानता चाहकर अपने भाई भीमसेन और अर्जुन को त्याग नकुल का जीवन मांगा था १९।२० इस कुत्ते को भक्त जानकर तुमने देवरथ को त्याग दिया। हे राजन्! इसी से स्वर्ग में तुम्हारे समान कोई नहीं है २१ हे भरतवंशिन्! इस हेतु से ही तुमने अपने इसी शरीर से अविनाशी लोक प्राप्त किये। हे श्रेष्ठ! तुमने दिव्य और उत्तम गति पाई २२ वैशम्पायन बोले कि इसके पीछे सिद्धि, स्वेच्छाचारी, विहार करनेवाले, रजोगुण रहित, पवित्र, पवित्रभाषी, उत्तम कर्म और बुद्धिवाले, धर्म, इन्द्र, मरुद्गण, अश्विनीकुमार और देवर्षिलोग युधिष्ठिर को रथ में बिठलाकर अपने विमानों की सवारी से चले गये २३।२४ कौरववंश भर का उद्धार करनेवाले राजा युधिष्ठिर उस रथ में सवार हो अपने तेज से पृथ्वी और आकाश को पूर्ण करके ऊपर की ओर चले २५ फिर सब सृष्टि के ज्ञाता, महातपस्वी, ब्रह्मवादी और देवलोक में विराजमान नारदजी ने बड़े उच्चस्वर से कहा कि २६

सब राजर्षियों को मैं जानता हूं; परन्तु यह युधिष्ठिर उन सबकी कीर्ति को भी ढककर सर्वोत्तम पद पर नियत है २७ युधिष्ठिर के सिवाय ऐसे किसी दूसरे राजा का सदेह स्वर्ग में आना नहीं सुना है जो अपने तेज, शुभकीर्ति और गुरुसेवादिरू रीतियों से लोकों को व्याप्त-कर आया हो २८ धर्मात्मा राजा युधिष्ठिर ने नारदजी का वचन सुनकर देवताओं और अपने पक्षवाले राजाओं के आगे कहा कि २९ मेरे भाइयों का स्थान चाहे शुभ अथवा पापरूप ही क्यों न हो परन्तु मैं उसी को पाना चाहताहूं, दूसरे को नहीं चाहता ३० देव-राज इन्द्र ने राजा का वचन सुनकर उसे उत्तर दिया, ३१ हे राजेन्द्र! शुभ कर्मों से विजय होनेवाले इस स्थान पर निवास करो। क्या तुम अब भी मनुष्यभाव की प्रीति को काम में लाते हो ३२ हे कुरुनन्दन! तुमने ऐसी परमसिद्धि पाई है, जैसी किसी दूसरे मनुष्य ने कभी कहीं नहीं पाई। तुम्हारे भाइयों ने वह स्थान नहीं पाया ३३ हे राजन्! अब भी तुमको मानुषी प्रीति स्पर्श करती है। यह स्वर्ग है, यहां देवर्षियों और स्वर्गवासी सिद्धों को देखो ३४ बुद्धिमान् युधिष्ठिर ने इस प्रकार कहनेवाले देवेश्वर इन्द्र से फिर कहा कि ३५ हे दैत्यसंहारिन्! मैं अपने भाइयों के विना यहां रहने का उत्साह नहीं करता। मैं वहीं जाना चाहता हूं जहां मेरे भाई गये ३६ जहां पर बृहतीपुष्प के समान श्यामा, बुद्धिमती और स्त्रियों में श्रेष्ठ द्रौपदी गई है; मैं वहीं जाऊंगा ३७॥

इति श्रीमहाभारते शतसाहस्रयां संहितायां वैयासिक्यां महाप्रस्थानपर्वणि तृतीयोऽध्यायः ३॥

महाप्रस्थानपर्व समाप्त।



श्रीनिकुञ्जविहारिणे नमः ।

महाभारतभाषा स्वर्गारोहणपर्व ।

मंगलाचरणम् ।

श्लोक ॥ नव्याम्भोधरवृन्दवन्दितरुचिम्पीताम्बरालंकृतं प्रत्यग्रस्फुटपुण्डरीकनयनं सान्द्रप्रमोदास्पदम् ॥ गोपीचित्तचकोरशीतकिरणम्पापाटवीपावकं स्वाराण्मस्तकमाल्यलालितपदं वन्दामहे केशवम् १ या भाति वीणामिव वादयन्ती महाकवीनां वदनारविन्दे ॥ सा शारदा शारदचन्द्रबिम्बा ध्येयप्रभा नः प्रतिभां व्यनक्तु २ पाण्डवानां यशोवर्ष्म सकृष्णमपि निर्मलम् ॥ व्यधायि भारतं येन तं वन्दे बादरायणम् ३ विद्याविदग्रेसरभूषणेन विभूष्यते भूतलमद्य येन ॥ तं शारदालब्धवरप्रसादं वन्दे गुरुं श्रीसरयूप्रसादम् ४ विप्राग्रणीगोकुलचन्द्रपुत्रः सविज्ञकालीचरणाभिधानः ॥ तथैव स्वारोहणरम्यपर्वभाषानुवादं विदधाति सम्यक् ५ ॥

पहिला अध्याय ।

श्रीनारायण, नरोत्तम नर और सरस्वती देवी को नमस्कार कर इतिहास वर्णन करता हूं। पहिले पर्व में युधिष्ठिर के दृष्टान्त से धर्म के फलरूप त्याग, दया आदिक गुणों का वर्णन किया; अब उनका उत्तम फल प्रकट करने के लिये स्वर्गारोहण पर्व का प्रारम्भ करते हैं। जनमेजय ने पूछा, कि मेरे पूर्व पितामह पाण्डव और धृतराष्ट्र के पुत्रों ने स्वर्ग को—जिसमें फल की उत्तमता से मानों तीनों भवन प्राप्त होते

हैं—पाकर किन किन स्थानों में निवास किया १ मैं सब वृत्तान्त सुना चाहता हूं क्योंकि आप अपूर्व कर्मी व्यास महर्षि से आज्ञा दिए हुए और सर्वज्ञ हो २ वैशम्पायन बोले कि तुम्हारे पूर्व पितामह युधिष्ठिर आदिक ने स्वर्गभवन में जो कहा उसको सुनो ३ धर्मराज ने स्वर्गभवन में दुर्योधन को स्वर्ग्यलक्ष्मी से सेवित और आसन पर बैठा हुआ देखा ४ वह सूर्य के समान प्रकाशित वीरों की शोभा से संयुक्त, देवता और पवित्रकर्मी साध्य लोगों के साथ था ५ दुर्योधन को और उसके पास लक्ष्मी को भी देखकर अशान्तचित्त युधिष्ठिर अकस्मात् लौट पड़े। आशय यह है कि स्वर्ग में भी क्रोध का त्यागना कठिन है। इस से संस्कारों की अत्यन्त प्रबलता बतलाई ६ युधिष्ठिर उच्चस्वर से यह कहते हुए लौटे कि मैं इस लोभी दुर्योधन के साथ लोकों को नहीं चाहता हूं ७ इसी के कारण प्रथम महावन में बड़े दुःख पा हम लोगों ने हठ करके सब पृथ्वी के मनुष्य—मित्र, नातेदार आदि को युद्धभूमि में मारा ८ यह धर्मचारिणी, निर्दोष हमारी पत्नी पाञ्चाली द्रौपदी गुरुजनों के सम्मुख सभा में चारों ओर से खींची गई ९ हे देवताओ! मैं दुर्योधन को देखना भी नहीं चाहता। मैं वहीं जाना चाहता हूं, जहां पर मेरे भाई हैं १० तब हँसते हुए नारदजी ने युधिष्ठिर से कहा कि ऐसा न कहना चाहिए। हे राजेन्द्र! इस स्वर्गभवन में शत्रुता आदिक भी दूर होजाती हैं ११ हे महाबाहु, युधिष्ठिर! तुम राजा दुर्योधन के विषय में, किसी दशा में भी ऐसा मत कहो। अब तुम मेरी बात सुनो। राजा दुर्योधन की इन स्वर्गीय देवता और राजर्षियों में सन्मानपूर्वक प्रतिष्ठा है १२। १३ युद्ध में इसने अपने शरीर को होम कर वीरलोक पाया है। यद्यपि देवताओं के समान तुम सब लोगों को सदैव इस दुर्योधन से दुःख मिला था १४ तथापि इसने क्षत्रियधर्म से इस स्थान को पाया है। यह राजा बड़े भय में भी नहीं डरा १५ हे पुत्र! जो तुमको द्यूत से दुःख हुआ, उसको चित्त में

न रखना चाहिये और द्रौपदी के भी दुःखों को भूल जाओ १६ अपने बिरादरीवालों से तथा दूसरों से भी जो दुःख युद्धों में अथवा अन्य स्थानों में हुए हैं, उनको स्मरण करना तुमको योग्य नहीं १७ हे राजन्! तुम न्याय के अनुसार राजा दुर्योधन से मिलो। यह स्वर्ग है, यहां शत्रुता नहीं होती १८ नारदजी से इस प्रकार आज्ञा पा बुद्धिमान् कुरुराज युधिष्ठिर ने भाइयों को पूछा और कहा कि १६ सब संसार तथा मित्रों के शत्रु, पापी और अधर्मी जिस दुर्योधन के २० कारण पृथ्वी के सब लोग घोड़े, मनुष्य और हाथियों समेत नष्ट हो गये और शत्रुता का बदला लेने के अभिलाषी हम लोग क्रोध से भस्म हुए २१ उसके तो ये सनातन वीरलोक हैं; बतलाइये कि वीर, महात्मा, बड़े व्रतधारी, लोक में विख्यात, शूर और सत्यवक्ता मेरे भाइयों के कौन से लोक हैं। मैं उन लोकों को देखना चाहता हूं। हे नारदजी! सत्यसंकल्प भाई कर्ण २२।२३ धृष्टद्युम्न, सात्यकी, धृष्टद्युम्न के पुत्र और जिन राजाओं ने क्षत्रियधर्म के द्वारा शस्त्रों से मरण पाया २४ वे सब राजा कहां हैं? हे ब्रह्मन्! मैं उनको नहीं देखता हूं। विराट्, द्रुपद, धृष्टकेतु आदिक २५ पाञ्चालदेशी, शिखण्डी, द्रौपदी के सब पुत्र, अजेय अभिमन्यु प्रभृति सबको देखना चाहता हूं २६॥

इति श्रीमहाभारते स्वर्गारोहणपर्वणि प्रथमोऽध्यायः १॥

दूसरा अध्याय।

युधिष्ठिर बोले कि हे देवताओ! मैं यहां पर बड़े तेजस्वी कर्ण और युधामन्यु तथा उत्तमोजा को नहीं देखता हूं। जिन महारथियों ने शरीरों को रणरूपी अग्नि में हवन कर दिया और जो राजा एवं राजकुमार युद्ध में मेरे निमित्त मारे गये १।२ वे सब शार्दूल के समान पराक्रमी महारथी कहां हैं? क्या उन बड़े साधु पुरुषों से भी यह लोक विजय किया गया है ३ जो उन सब महारथियोंने इन लोकों को पाया हो, तो हे देवताओ! मुझको भी उन महात्माओं के ही साथ

नियत जानो ४ यदि उन राजाओं ने यह अविनाशी शुभलोक नहीं पाया है, तो मैं भी उन राजा, भाई और सजातीय लोगों से अलग यहां न रहूंगा ५ जलदान के विषय में माता की आज्ञा थी, कि तुम कर्ण का जलदान करो। उसको सुनकर उस समय मैंने दुःख माना ६ हे देवताओ! मैं बारम्बार इसलिये पछताता हूं कि उस बड़े बुद्धिमान् कर्ण के दोनों चरणों को माता के चरणों के समान देखकर ७ उस शत्रुओं की सेनाओं के दुःखदाता के पास नहीं गया। यदि वह हमारा साथी होता तो स्वयं इन्द्र भी हम लोगों को जीतने में समर्थ न होते ८ मैं जहां तहां नियत उस सूर्य के पुत्र को देखना चाहता हूं, जिसको पहिले मैंने नहीं जाना था। वह अर्जुन के हाथ से मारा गया ९ प्राणों से भी अधिक प्यारे, भयकारी, पराक्रमी भीमसेन को, इन्द्र के समान अर्जुन को और अश्विनीकुमार के समान दोनों नकुल-सहदेव को १० तथा धर्मचारिणी द्रौपदी को देखना चाहता हूं। यहां रहने की इच्छा मैं नहीं करता। यह सब मैं आपसे सत्य सत्य कहता हूं ११ हे श्रेष्ठ देवताओ! भाइयों से बिछुड़े हुए मुझको स्वर्ग से क्या प्रयोजन है? जहां पर वे सब हैं, वही स्थान मेरा स्वर्ग है। मैं इस स्वर्ग को स्वर्ग नहीं मानता हूं १२ देवता बोले कि हे पुत्र! यदि उस स्थान में ही तुम्हारी श्रद्धा है, तो चले जाओ; विलम्ब मत करो। हम देवराज की आज्ञा से तुम्हारा हितकारी कर्म करनेवाले हैं १३ वैशम्पायन बोले कि हे परन्तप! फिर देवताओं ने देवदूत को आज्ञा दी कि तुम युधिष्ठिर को इनके भाई आदिक दिखाओ १४ हे श्रेष्ठ! फिर राजा युधिष्ठिर और देवदूत दोनों साथ होकर वहां चले जहां वे पुरुषोत्तम थे १५ आगे देवदूत और पीछे राजा होकर महाअशुभ, दुर्गम्य, पापों के उत्पत्तिस्थान १६ अन्धकार से पूर्ण, भयकारी, बाल के समान रूप शिवार—घासवाले, पापों की गन्धियों से युक्त, मांस-रुधिर की कीचवाले १७ डांस-उत्पातक-मल्लूक-मक्खी और मच्छरों से व्याप्त

इधर उधर चारों ओर मृतकों से घिरे हुए १८ अस्थि-केशों से युक्त, कृमिकीटों से पूर्ण अत्यन्त प्रकाशमान अग्नि से चारों ओर घिरे हुए १९ लोहे के समान तीच्ण नोकवाले, काक गृध्र आदिक के भ्रमण स्थान, विन्ध्याचल पर्वत के समान, सूचीमुख, प्रेतों से संयुक्त २० रुधिर-मज्जा से युक्त, टूटे भुज-हाथ-उदर-चरणवाले जहां तहां पड़े हुए प्रेतों से संयुक्त मार्ग में होकर चले २१ मार्ग में बहुत विचार करते हुए धर्मात्मा राजा युधिष्ठिर मृतकों की दुर्गन्धि से संयुक्त, अकल्याणरूप और रोमांच करनेवाले मार्ग में होकर चले २२ उन्होंने उष्ण जल से पूर्ण, अत्यन्त दुर्गम्य नदी को भी देखा; पैने छुरों से संयुक्त, असिपत्र-वाले वृक्षों के जंगल को भी देखा २३ श्वेत और सूक्ष्म गरम बालू तथा लोहे की शिलाओं को पृथक् पृथक् देखा और चारों ओर गरमतेल से भरे हुए लोहे के कढ़ावों को देखा २४ फिर युधिष्ठिर ने पापों के दण्ड-स्थान दुःख से स्पर्श होनेवाले और पैने कण्टकोंवाले उस कूटशाल्म-लिक वृक्ष को भी देखा २५ उस दुर्गन्धि को देखकर धर्मराज ने देवदूत से पूछा कि हमको ऐसे मार्ग में और कितना चलना पड़ेगा २६ वे मेरे भाई कहां हैं, उनको मुझे बताओ। मैं जानना चाहता हूं कि देवताओं का यह कौन सा देश है २७ देवदूत कहने लगा कि तुम्हारा जाना केवल इसी स्थान तक है २८ हे राजेन्द्र! अब मुझको लौटना उचित है। मुझको देवताओं ने इतनी ही आज्ञा दी है कि यदि आप श्रमित हो जायँ तो लौट आना योग्य है २९ हे भरतवंशिन्! उस दुर्गन्धि से अचेत और व्याकुल राजा युधिष्ठिर लौटे ३० दुःख और शोक से घायल धर्मात्मा लौटे। लौटते समय उस स्थान में कहनेवालों के ये दुःखपूर्ण वचन सुने कि ३१ हे पवित्र कुलवाले, धर्मपुत्र, राजर्षि पाण्डव! हमारे ऊपर अनुग्रह करने के लिये एक मुहूर्त भर ठहरो ३२ हे अजेय तात! आपके आने पर, आपकी सुगन्धि से संयुक्त होकर जो पवित्र वायु चलती है, उससे हमको सुख होता है ३३ हे राजाओं

में बड़े साधु, पुरुषोत्तम युधिष्ठिर ! हम तुमको देखकर बहुत काल तक सुख पावेंगे ३४ हे महाबाहु, भरतवंशी कौरव ! एक मुहूर्त भर यहां निवास करो । तुम्हारे नियत होने पर दुःख दूर हो जाने से यहां की वेदना हमको पीड़ा नहीं देती ३५ हे राजन् ! तब धर्मराज ने उस स्थान पर चारों ओर से दुखिया लोगों के इस प्रकार के अनेक कष्टयुक्त वचन सुने ३६ दयालु युधिष्ठिर उन दुखियों के दुःखित वचन सुनकर खड़े होगये और कहा कि बड़ा खेद है ३७ उस पाण्डव ने पहिले बारम्बार सुने हुए निर्बल दुखियों के वचनों को नहीं जाना ३८ उन वचनों को न जानते हुए धर्मपुत्र युधिष्ठिर ने कहा कि आप कौन हैं और यहां क्यों रहते हैं ३९ राजा के वचन को सुनकर उन सबने चारों ओर से उत्तर दिया कि "मैं कर्ण हूं, मैं भीमसेन हूं, मैं अर्जुन हूं ४० मैं नकुल हूं, मैं सहदेव हूं, मैं धृष्टद्युम्न हूं, मैं द्रौपदी हूं और हम द्रौपदी के पुत्र हैं" । वे सब इस रीति से पुकारे ४१ हे राजन् ! तब राजा युधिष्ठिर ने उस देश के वचनों को सुनकर विचारा कि यह क्या दैवकर्म है ४२ सुन्दरी द्रौपदी, द्रौपदी के पुत्र और कर्ण आदिक महात्माओं से वह कौन सा पाप हो गया है ४३ जो ये इस पाप की दुर्गन्धिवाले, बड़े भयकारी देश में हैं। मैं इन सब पवित्रकर्मी पुरुषों के पाप कर्म को नहीं जानता ४४ धृतराष्ट्र का महापापात्मा पुत्र राजा दुर्योधन अपने साथियों समेत कौन सा कर्म करके उस प्रकार ४५ महेन्द्र के समान लक्ष्मीसंयुक्त और बड़ा पूजित है । अब यह किस कर्म का फल है, जो ये नरक में वर्तमान हुए ४६ ये सब धर्मज्ञ, शूर, सच्चे, शास्त्रों के अनुसार कर्मकर्ता, सन्त, यज्ञों के करनेवाले और बड़ी दक्षिणा देनेवाले थे ४७ क्या मैं सोता हूं, जागता हूं और अचेत हूं। बड़ा आश्चर्यकारी यह चित्त का विभ्रम है अथवा मेरे चित्त की ही भ्रान्ति है ४८ दुःख और शोक से पूर्ण, सन्देह से व्याकुल चित्त, राजा युधिष्ठिर ने इस रीति से अनेक प्रकार का विचार किया ४९

और बड़े क्रोधित होकर देवताओं समेत धर्म की निन्दा की ५० बड़ी कठिन दुर्गन्धि से दुःखी राजा ने देवदूत से कहा कि तुम जिनके आज्ञावर्ती हो, उनके पास जाओ ५१ मैं वहां न जाऊंगा; यहीं नियत हूं। हे देवदूत! तुम जाकर उनसे कहो कि ये मेरे भाई मेरे समीप रहने से सुखी हैं ५२ बुद्धिमान् युधिष्ठिर की आज्ञा से देवदूत देवराज इन्द्र के समीप गया ५३ उसने वहां जाकर जैसा जैसा धर्मराज ने कहा था और जो जो उसके चित्त की इच्छाएँ थीं, सब इन्द्र से कहीं ५४ ॥

इति श्रीमहाभारते स्वर्गारोहणपर्वणि द्वितीयोऽध्यायः २ ॥

तीसरा अध्याय।

वैशम्पायन बोले कि हे कौरव! वहां एक मुहूर्त तक धर्मराज युधिष्ठिर के नियत होने पर इन्द्रप्रमुख सब देवता उस स्थान पर आ पहुँचे १ स्वरूपवान् धर्म देवता भी राजा के देखने को वहां आये जहां पर कौरवराज युधिष्ठिर थे २ हे राजन्! उन पवित्र कुल और कर्मवाले, प्रकाशरूप शरीरधारी देवताओं के आने पर अन्धकार दूर हो गया ३ पापियों के दण्ड का स्थान, वैतरणी नदी और कूटशाल्मली वृक्ष समेत दिखाई न दिया। चारों ओर से भयानक, गर्म तेल से भरे हुए लोहे के कढ़ाव और भयकारी शिलाएँ भी दृष्टि से गुप्त होगईं ४। ५ हे भरतवंशिन्! देवताओं के सम्मुख नियत, अत्यन्त शीतस्पर्श से सुखदायक, पवित्र सुगन्धियों से भरी सुखदायक वायु चली। इन्द्रसमेत मरुद्गण, अष्ट वसु, अश्विनीकुमार ६। ७ साध्यगण, ग्यारह रुद्र, द्वादश सूर्य, अन्यान्य देवता, सिद्ध और महर्षि सब वहां आये जहां बड़े तेजस्वी, धर्म के पुत्र राजा युधिष्ठिर थे। इसके पीछे बड़ी शोभा से युक्त देवराज इन्द्र ने ८। ९ विश्वासयुक्त युधिष्ठिर से कहा कि हे महाबाहु युधिष्ठिर! तुम्हारे लोक अविनाशी हैं १० हे पुरुषोत्तम! आओ, आओ। इतने ही से कृतकृत्यता प्राप्त की। हे प्रभो! तुमने सिद्धि प्राप्त की; हे महाबाहो! इसी

से तुम्हारे लोक भी अविनाशी हैं ११ तुमको क्रोध न करना चाहिये। हे तात! सब राजा लोगों को अवश्य नरक देखने के योग्य है १२ हे पुरुषोत्तम! शुभ और अशुभ कर्मों के दो ढेर हैं। जो प्रथम उत्तम फलों को भोगता है, वह पीछे नरक को भोगता है १३ और जो पहले ही नरक भोगनेवाला है, वह पीछे स्वर्ग पाता है। जो बहुत पापकर्मी होता है, वह पहिले स्वर्ग को भोगता है १४ हे राजन्! इसी से तुम्हारी शुभ कामना से मैंने तुमको नरक में प्रवेश कराया; तुमने अश्वत्थामा के विषय में द्रोणाचार्य से छलसंयुक्त बात की १५ हे राजन्! तुम्हारे इतने छल करने से ही तुमको नरक दिखलाया गया। जैसा तुमने मिथ्या नरक देखा, वैसे ही भीमसेन, अर्जुन, नकुल, सहदेव १६ और कृष्णाद्रौपदी भी नरक में आई। हे नरोत्तम! आओ, वे भी पापों से छूटे १७ तुम्हारी ओर के जो राजा युद्ध में मारे गये, वे सब स्वर्ग में गये। हे पुरुषोत्तम! अब उनको भी देखो १८ बड़े धनुर्धारी, सब शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ कर्ण ने भी बड़ी सिद्धि पाई है। उसी के लिये तुम बड़े दुःखी होते थे १९ हे महाबाहु, प्रभु नरोत्तम! उस सूर्य के पुत्र पुरुषोत्तम को अपने स्थान पर देखो और शोक दूर करो। भाइयों को और अपने पक्षवाले अन्य राजाओं को भी अपने अपने स्थान पर वर्तमान देखो। तुम्हारे चित्त का ताप दूर हो २०।२१ हे कौरव! प्रथम दुःख भोगकर अब विशोक और नीरोग हो मेरे साथ विहार करो २२ हे महाबाहु, तात, राजा युधिष्ठिर! अपने तप से पवित्र, कर्मफलों से युक्त, दान आदिकों के उत्तम फलों को प्राप्त करो २३ अब स्वर्ग में देवता, गन्धर्व और दिव्य अप्सराएँ, कल्याणरूप, दिव्य पोशाक और भूषणधारी तुम्हारे आज्ञावर्ती हों २४ हे महाबाहो! तुम आपही खड्गबल के द्वारा वृद्धियुक्त और राजसूय यज्ञ से विजय किये हुए लोकों और अपने तप के बड़े फल को प्राप्त करो। हे राजा युधिष्ठिर! हरिश्चन्द्र के लोकों के समान तुम्हारे लोक और अन्य राजाओं

के भी लोक पृथक् पृथक् हैं, जिनमें तुम विहार करोगे २५। २६ तुम उनमें विहार करोगे, जिनमें राजर्षि मान्धाता, राजा भगीरथ और दशरथ के पुत्र भरत हैं २७ हे राजेन्द्र, युधिष्ठिर! यह देवताओं की पवित्र नदी, तीनों लोकों की पवित्र करनेवाली आकाशगंगा है; तुम इसमें स्नान करके जाओगे २८ इसमें स्नान करते ही तुम्हारा मनुष्यत्व दूर होगा; शोक, व्याकुलता और शत्रुता तुमसे अलग हो जावेगी २६ कौरवेन्द्र युधिष्ठिर से देवराज के इस प्रकार कहने पर प्रत्यक्ष स्वरूपधारी धर्म ने अपने पुत्र से कहा कि ३० हे बड़े ज्ञानी, पुत्र, राजा युधिष्ठिर! तुम्हारी भक्ति, सत्यवक्तृत्व, सन्तोष और जितेन्द्रियपन से मैं प्रसन्न हूं ३१ हे राजन्! मैंने तुम्हारी यह तीसरी परीक्षा ली है। हे क्षत्रिय! तुम राजा होने के कारण अपने स्वभाव से हटाने को असम्भव हो ३२ मैंने प्रथम द्वैत वन में युग्म अरणी काष्ठ के विषय में याचना के द्वारा तुम्हारी परीक्षा ली; तुमने उसको भी पूरा किया ३३ हे भरतवंशिन्! फिर वहां तुम्हारे भाइयों और द्रौपदी के मृतक हो जाने पर श्वानरूप प्राप्त कर मैंने तुम्हारी परीक्षा ली ३४ अब यह तीसरी परीक्षा है, जो तुम भाइयों के लिये यहां नियत होना चाहते हो। हे महाभाग! तुम अत्यन्त पवित्र, निष्पाप और सुखी हो ३५ हे राजन्! तुम्हारे भाई नरक के योग्य नहीं हैं। देवराज इन्द्र ने यह माया प्रकट की है ३६ हे तात! सब राजाओं से नरक अवश्य देखने के योग्य है; इसी से तुमने दो मुहूर्त तक यह बड़ा दुःख पाया ३७ हे पुरुषोत्तम! नकुल, सहदेव, भीमसेन और सत्यवक्ता शूर कर्ण, बहुत काल पर्यन्त नरक के योग्य नहीं हैं ३८ हे युधिष्ठिर! राजपुत्री द्रौपदी भी नरक के योग्य नहीं है। हे भरतर्षभ! आओ, आओ; तीनों लोकों में वर्तमान इस आकाशगंगा को देखो ३६ हे जनमेजय! इस प्रकार से कहे गये तुम्हारे पूर्व पितामह राजर्षि धर्मराज सब देवताओं के साथ होकर चले। फिर ऋषियों से स्तूयमान राजा ने पवित्र करनेवाली

देवताओं की पवित्र नदी गंगाजी में ग़ोता लगाकर मनुष्यशरीर का त्याग किया । उस जल में ग़ोता लगाकर धर्मराज युधिष्ठिर प्रकाशरूप शरीर पा शत्रुता और शोक से निवृत्त हुए ४० । ४२ फिर देवताओं से घिरे हुए, महर्षियों से स्तुतियुक्त, बुद्धिमान् युधिष्ठिर धर्म के साथ वहां गये ४३ जहां पर क्रोध से रहित, पुरुषोत्तम, शूर पाण्डव और धृतराष्ट्र के पुत्र अपने अपने स्थान पर नियत थे ४४ ॥

इति श्रीमहाभारते स्वर्गारोहणपर्वणि युधिष्ठिरतनुत्यागे तृतीयोऽध्यायः ३ ॥

चौथा अध्याय ।

वैशम्पायन बोले कि इसके पीछे देवता, ऋषि और मरुद्गणों से स्तूयमान राजा युधिष्ठिर श्रेष्ठ कौरवों के पास गये १ वहां उन गोविन्दजी को भी देखा, जो कि ब्रह्माजी से उपासना आदि के योग्य शरीर धारण किये हुए थे और पूर्व देखे हुए उस शरीर से दिखाई देते थे २ वे अपने शरीर से प्रकाशमान, दिव्य अस्त्र और भयानक पुरुष रूपधारी चक्र आदि दिव्य आयुधों से सेवित ३ तथा बड़े तेजस्वी वीर अर्जुन से युक्त थे । युधिष्ठिर ने उस प्रकार रूपधारी मधुसूदनजी को देखा ४ देवताओं से पूजित उन दोनों पुरुषोत्तमों ने युधिष्ठिर को देखकर विधिपूर्वक पूजन करके सम्मेलन किया ५ फिर कौरवनन्दन ने दूसरे स्थान पर शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ द्वादश सूर्य के समान कर्ण को देखा ६ अन्य स्थान पर मरुद्गणों से युक्त, मूर्तिमान् वायु देवता की गोदी में, दिव्य मूर्तिधारी बड़ी शोभा से युक्त परम सिद्धि को प्राप्त समर्थ भीमसेन को देखा ७ । ८ फिर उन्होंने अश्विनीकुमारों के स्थान पर अपने तेजों से प्रकाशमान नकुल और सहदेव को देखा ९ (उत्पल) कमल की मालावाली, सूर्य के समान तेजस्विनी, अपने तेज से स्वर्ग को व्याप्त किये द्रौपदी को भी देखा १० राजा युधिष्ठिर ने अकस्मात् सब वृत्तान्त पूछना चाहा तो देवताओं के राजा इन्द्र ने सब वृत्तान्त वर्णन किया कि ११ हे युधिष्ठिर ! यह अयोनिजा, लोक की प्यारी,

पवित्र, गन्धवती द्रौपदी स्वर्ग की लक्ष्मी है। इसने तुम्हारे लिये मनुष्य शरीर धारण किया था १२ शिवजी ने आपके सुसंग के अर्थ इसे उत्पन्न किया था। यह राजा द्रुपद के घराने में उत्पन्न होकर आपके भोग में प्राप्त हुई १३ हे राजन्! यह आपके और द्रौपदी के बड़े तेजस्वी पुत्र अग्नि के समान प्रकाशमान, पांचो महाभाग गन्धर्व हैं १४ अब गन्धर्वों के राजा बुद्धिमान् धृतराष्ट्र को देखो; इन्हें तुम अपने पिता का बड़ा भाई जानो १५ यह सौर्य, कुन्ती का पुत्र, अग्नि के समान तेजस्वी, राधेय नाम से प्रसिद्ध बड़ा श्रेष्ठ तुम्हारा बड़ा भाई है १६ यह कर्ण विमान की सवारी में चलता है, इस पुरुषोत्तम को देखो। हे राजेन्द्र! साध्यगण, विश्वेदेवा और मरुत् नाम देवताओं के समूहों में बड़े पराक्रमी सात्यकी आदि वीर, महारथी भोज, अन्धक और वृष्णियों को देखो १७। १८ सुभद्रा के पुत्र, अजेय, बड़े धनुर्धारी, चन्द्रमा के समान तेजस्वी अभिमन्यु को चन्द्रमा के साथ में देखो १९ कुन्ती और माद्री से मिलनेवाला यह तुम्हारा पिता पाण्डु सदैव विमान में सवार होकर मेरे पास आता है २० शन्तनु के पुत्र राजा भीष्मपितामह को वसुओं के साथ में देखो। इस गुरु द्रोणाचार्य को बृहस्पति के समीप देखो २१ हे पाण्डव! ये अन्यान्य राजा और तुम्हारे शूरवीर यक्ष पवित्र पुरुष और गन्धर्वों के साथ विमान की सवारियों में जाते हैं २२ कितने ही राजाओं नें गुह्यकों की गति पाई है। उन्हों ने शरीर त्याग करके पवित्र वाणी, कर्म और बुद्धि के द्वारा स्वर्ग को विजय किया २३ ॥

इति श्रीमहाभारते स्वर्गारोहणपर्वणि चतुर्थोऽध्यायः ४ ॥

पाँचवाँ अध्याय।

पिछले अध्याय में वर्णन हुआ कि किसने किस देवता के अंश से अवतार लिया और शरीर त्यागने पर किस देवता की समीपता पाई। वहां सन्देह होता है कि जिस प्रकार टहनी से उत्पन्न वृक्ष अपने मूल से पृथक् नियत होते हैं, उसी प्रकार वे अंश भी पृथक् होकर रहे

अथवा अपने अपने मूलमें लय होंगे। प्रथम सन्देहयुक्त यह बात है कि जो शरीर कर्म से उत्पन्न है, उसका नाश ब्रह्मज्ञान के विना होना असंभव है। उस दशामें वे हम लोगों के समान ही नियत रहेंगे। दूसरे सन्देह में सिद्ध हुआ है कि उन्होंने नर अवतार में जो कर्म किये, उनका नाश होना सम्भव है। इस संशय से जनमेजय ने पूछा कि महात्मा भीष्म, द्रोणाचार्य, राजा धृतराष्ट्र, विराट, द्रुपद, शंख, उत्तर १ धृष्टकेतु, जयत्सेन, राजा सत्यजित्, दुर्योधन के पुत्र, शकुनी २ कर्ण के पराक्रमी पुत्र; राजा जयद्रथ और अन्यान्य घटोत्कच आदिक जिनका वर्णन नहीं हुआ ३ और दूसरे प्रकाशमान मूर्तिवाले वीर राजा जिनका वर्णन हुआ, वे स्वर्ग में गये। बतलाइये कि वे कितने समयतक स्वर्गवासी रहे ४ हे ब्राह्मणवर्य ! आश्चर्य है कि वहां इन महात्माओं का प्राचीन स्थान है। इन नरोत्तमों ने कर्मफल समाप्त होने पर कौन गति पाई अर्थात् कर्मफल समाप्त होने पर अपने योग से एकत्व, सायुज्यता या सनातन ब्रह्म को पाया अथवा पृथ्वी पर जन्म पाया ५ हे श्रेष्ठ, द्विजवर्य ! मैं इसको सुनना चाहता हूँ क्योंकि तुम अत्यन्त प्रकाशित अपने तपके द्वारा सब वृत्तान्त जानते हो ६ हे राजन् ! महात्मा व्यासजी से आज्ञा लेकर उस ब्रह्मर्षिने वर्णन करना प्रारम्भ किया ७ वैशम्पायन बोले कि हे राजन् ! कर्म फल समाप्त होने पर अपने मूल में सबका प्रवेश होजाना सम्भव नहीं—कोई अपने मूलको पाते हैं, कोई नहीं। जो सब उस में लय होजायँ तो संसार कैसे नियत रहसकता है और शास्त्र व्यर्थ होजायँ। इस से कोई पुरुष ही मूल में लय होता है, सब नहीं होसकते। तुमने यह अच्छा प्रश्न किया ८ हे भरतर्षभ, राजा जनमेजय ! देवताओं के इस गुप्त रहस्य को सुनो। प्राचीन मुनि पराशरजी के पुत्र, बड़े व्रतधारी, अत्यन्त बुद्धिमान्, सर्वज्ञ और सर्व कर्मफलों के भोगों के ज्ञाता महातेजस्वी दिव्य चक्षुवाले व्यासजी ने इसका वर्णन किया है ९। १० महातेजस्वी बड़े

पराक्रमी भीष्मजी वसुओं में लीन होगये । हे भरतवंशिन् ! आठ ही वसु दिखाई देते हैं—नवां कोई नहीं है ११ आंगिरावंशियों में श्रेष्ठ बृहस्पतिजी में द्रोणाचार्यजी लीन हो गये, हार्दिक्य का पुत्र कृतवर्मा मरुद्गणों में प्रवेश कर गया १२ प्रद्युम्न सनत्कुमारजी में प्रविष्ट हो गया । धृतराष्ट्र ने बड़ी कठिनाई से प्राप्त होने योग्य कुबेर के लोकों को पाया १३ और यशस्विनी गान्धारी भी धृतराष्ट्र के साथ वहां गई । राजा पाण्डु अपनी दोनों स्त्रियों समेत महेन्द्रलोक को गया १४ भूरिश्रवा, शल, राजा भूरि, कंस, उग्रसेन, वसुदेव १५ । १६ अपने भाई शंख समेत उत्तर ये सब नरोत्तम विश्वेदेवाओं में प्रवेश कर गये १७ चन्द्रमा का बड़ा तेजस्वी पुत्र प्रतापी वर्चा था; वही अभिमन्यु के नाम से नरोत्तम अर्जुन का पुत्र हुआ १८ वह महारथी, धर्मात्मा, क्षात्रियधर्म से युद्ध में असादृश्य और अनन्य कर्म करके चन्द्रमा में विलीन हो गया १९ हे पुरुषोत्तम ! कर्ण का भी सूर्य में लय होगया; शकुनी ने द्वापर को और धृष्टद्युम्न ने अग्नि को प्राप्त किया २० धृतराष्ट्र के सभी पुत्र बल में प्रमत्तरूप राक्षस थे । उन्होंने शस्त्रों से पवित्र हो स्वर्ग पाया २१ विदुर और राजा युधिष्ठिर धर्म में लय हो गये; भगवान् अनन्त देवता बलदेवजी रसातल में प्रवेश कर गये २२ जिसने ब्रह्माजी की आज्ञा से योग सामर्थ्य के द्वारा पृथ्वी को धारण किया और जो देवताओं का भी देवता सनातन नारायण है, उसके अंशरूप वासुदेवजी कर्म के अन्त होने पर उसी में प्रवेश कर गये । हे जनमेजय ! वासुदेवजी की सोलह हज़ार स्त्रियाँ २३ । २४ काल की प्रेरणा से सरस्वती नदी में डूब गईं । वहाँ शरीर त्यागकर स्वर्ग में पहुँच अप्सरारूप होकर वे वासुदेवजी के पास गईं । उस बड़े युद्ध में जो वीर महारथी २५ । २६ घटोत्कच आदिक मारे गये; उन्होंने देवता और यक्षों को सेवन किया । हे राजन् ! दुर्योधन के सब साथी राक्षस थे २७ उन्होंने भी क्रम से आगे लिखे हुए उत्तम लोक पाये । वे पुरु-

षोत्तम महेन्द्र के लोक, बुद्धिमान् कुबेर के भवन २८ और वरुणजी के लोकों में चले गये। हे भूपते ! यह सब ब्योरेवार वृत्तान्त मैंने तुमसे कहा। यह सब कौरव और पाण्डवों का चरित्र है। आशय यह कि ये सब क्रमपूर्वक उत्तमगति पाकर अन्त में ब्रह्माजी के साथ मुक्त होते हैं। इसी हेतु से देवभाव मिलने के निमित्त यज्ञ, दान, तप आदिक अवश्य करने चाहिए। इन ऊपर लिखे हुए शूरवीर लोगों के विशेष जो अन्य शूरवीर हैं, वे स्वर्ग में जाकर भी फिर इसी पृथ्वी पर गिरकर आते हैं २९ सूत के पुत्र बोले कि हे श्रेष्ठ ब्राह्मणो ! राजा जनमेजय यज्ञकर्मों के मध्यवर्ती समयों में इस इतिहास को सुनकर अत्यन्त आश्चर्ययुक्त हुआ ३० फिर याजक ने उसके उस कर्म को समाप्त किया। आस्तीक भी सर्पों को छुड़ाकर बहुत प्रसन्न हुआ ३१ तब राजा ने सब ब्राह्मणों को दक्षिणाओं से प्रसन्न किया। राजा से पूजित ब्राह्मण भी प्रसन्न होकर अपने अपने घरों को चले गये। राजा जनमेजय उन ब्राह्मणों को बिदा करके तक्षक शिला से हस्तिनापुर को आया ३२।३३ राजा जनमेजय के सर्पयज्ञ में व्यासजी की आज्ञा से वैशम्पायन का वर्णन किया हुआ और अपना जाना हुआ यह सब इतिहास मैंने तुमसे वर्णन किया ३४ यह इतिहास बड़ा पवित्र, उद्धार करनेवाला और महाश्रेष्ठ है। यह सत्यवक्ता, सर्वज्ञ, धर्मज्ञान सम्बन्धी सब रीतियों के ज्ञाता, सत्पुरुष, इन्द्रियों के जालों से निकलकर योगसामर्थ्य से सर्व दर्शन में सिद्ध, तप से शुद्धचित्त व्यास मुनि का बनाया हुआ है ३५।३६ ऐश्वर्यवान्, सांख्ययोग के कर्ता, सब तन्त्रों से शुद्ध, लोक में महात्मा पाण्डव और बड़े तेजस्वी दूसरे क्षत्रियों की कीर्ति को फैलानेवाले व्यासजी ने दिव्यदृष्टि से देखकर इस इतिहास को बनाया ३७।३८ जो बुद्धिमान् सदैव हर एक पर्व में इसको सुनावेगा, वह निष्पाप स्वर्ग को विजय करनेवाला मनुष्य ब्रह्मभाव के योग्य होगा ३९ जो सावधान मनुष्य इस सब वेद को आदि से अन्त तक

मूलसमेत सुनता है, उसके ब्रह्महत्या आदिक करोड़ों पाप नष्ट हो जाते हैं। जो मनुष्य श्राद्ध में समीप बैठकर श्राद्ध के ब्राह्मणों को इस इतिहास का चतुर्थांश सुनावे, उसकी श्राद्धसम्बन्धी खाने पीने की वस्तुएँ अक्षय और अविनाशी होकर पितरों के पास पहुँचती हैं ४०। ४१ जो पुरुष दिन में इन्द्रियों से, अथवा मन से पाप करता है; वह सायंकाल की सन्ध्या में इस महाभारत के पढ़ने से उस पाप से छूटता है ४२ स्त्रियों समेत ब्राह्मण रात्रि में जो पाप करता है, वह प्रातःकाल की सन्ध्या में इस महाभारत को पढ़कर पाप से शुद्ध होता है ४३ अर्थ एवं आशय की गुरुता और वृद्धि के कारण से यह भारत कहा जाता है, जो इस महाभारत अथवा साठ लाख महाभारत के मूल को जानता है, वह सब पापों से छूट जाता है ४४ हे भरतवंशिन्! श्रेष्ठ धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का विषय जो इसमें है, वह दूसरे अष्टादश पुराणों में भी है और जो इसमें नहीं है, वह कहीं भी नहीं है। इसी की छाया से सब पुराण बने हैं ४५ यह इतिहास मोक्ष के चाहनेवाले ब्राह्मण, क्षत्रिय और गर्भवती स्त्री से सुनने के योग्य है ४६ स्वर्ग का अभिलाषी स्वर्ग को, विजयाभिलाषी विजय को और गर्भवती स्त्री पुत्र अथवा सौभाग्यवती कन्या को पाती है ४७ इस भारत की नित्य सिद्धि की केवल मोक्षरूप प्रभु व्यासजी ने धर्म प्रवृत्त करने की इच्छा से बड़ी चतुरता से रचना की है ४८ व्यासजी ने चारों वेद के विशेष अर्थ से संयुक्त साठ लाख संहिता को बनाया; उसमें से तीस लाख तो देवलोक में है ४९ पन्द्रह लाख पितृलोक में और चौदह लाख यक्षलोक में है। इस नरलोक में एक लाख वर्णन की है ५० यह संहिता नारदजी ने देवताओं को, असित देवल ऋषि ने पितरों को, शुकदेवजी ने राक्षस और यक्षों को तथा वैशंपायन ने मनुष्यों को सुनाई। इन चारों पुरुषोत्तमों ने व्यासजी से पढ़कर उन स्थानों पर प्रकट की। ब्राह्मण को आगे कर जो मनुष्य इस पवित्र और वेद के समान बड़े अर्थवाले इतिहास को

सुनता है, वह पुरुष इस लोक में सब अभीष्ट सिद्धि और पदार्थों को पाकर शुभ कीर्तिमान् हो परम सिद्धि पाता है। इसमें मुझको किसी प्रकार का भी सन्देह नहीं है। चौथाई पुस्तक अथवा चौथाई श्लोक के पढ़नेवाले को भी वह फल मिलता है या व्यासजी में बड़ी श्रद्धा भक्ति करके जो मनुष्य इसको सुनाता है, उसको भी वही फल मिलता है ५१। ५४ यह सन्ध्या में भारत के पाठ की विधि वर्णन की। अब भारत के साररूप चार श्लोकों का अर्थ कहते हैं। हज़ारों माता-पिता, सैकड़ों पुत्र-स्त्री, बहुत से जन्मों में प्राप्त किये जो कि हो गये, होते हैं और आगे होंगे ५५ उसी के हज़ारों स्थल और भय के सैकड़ों स्थान प्रतिदिन अज्ञानियों में हुआ करते हैं; पण्डितों में नहीं। ऊपर को भुजा उठाकर मैं पुकारता हूं पर कोई मेरी बात नहीं सुनता है कि अर्थ और धर्म ये दोनों काम से उत्पन्न होते हैं। वह धर्म के निमित्त अभ्यास नहीं किया जाता ५६। ५७ मनुष्य को उचित है कि इच्छा, भय और लोभ से कभी धर्म को न छोड़े और जीवन के निमित्त भी धर्म को न छोड़े। धर्म अविनाशी है और सुख दुःख आदिक नाशवान् हैं। जीवात्मा तो अविनाशी है पर उसका हेतु अविद्या नाशवान् है ५८ जो पुरुष प्रातःकाल उठकर चार श्लोकों की इस भारतसावित्री का पाठ करे, वह भारत का फल पाकर परब्रह्म को पाता है ५६ जैसे भगवान् समुद्र और हिमालय पर्वत दोनों रत्नाकर प्रसिद्ध हैं वैसे ही यह महाभारत भी विख्यात है ६० जो अच्छा सावधान इस भारत इतिहास का पाठ करे वह निस्सन्देह परम सिद्धि पावे ६१ व्यासजी के ओष्ठों से निकली हुई, पवित्र, उद्धार करनेवाली, पापघ्नी, कल्याणरूप, अप्रमेय भारत कथा को जो समझता है, उसको पुष्करादिक तीर्थों के जल में मन्त्रपूर्वक स्नान करने से क्या प्रयोजन है ६२ ॥

इति श्रीमहाभारते स्वर्गारोहणपर्वणि पञ्चमोऽध्यायः ५ ॥

छठा अध्याय।

जनमेजय ने पूछा कि भगवन्! ज्ञानियों को किस विधि से भारत का सुनना योग्य है, इसका फल क्या है और उसकी पारणा में कौन सा देवता पूजने के योग्य है १ भगवन्! प्रत्येक पर्व समाप्त होने पर क्या देना योग्य है? वक्ता से कौन सा प्रश्न करना योग्य है, उसको भी मुझसे कहिये २ वैशम्पायन बोले कि महाराज जनमेजय! इस विधि को सुनो और महाभारत सुनने के फल को भी श्रवण करो ३ हे राजन्! स्वर्ग के देवता क्रीड़ा करने को पृथ्वी पर गये और इस कार्य को करके फिर स्वर्ग में आये ४ सूर्य के पुत्र दोनों अश्विनीकुमार, देवता, लोकपाल, महर्षि, गुह्यक, गन्धर्व, नाग, विद्याधर ५ सिद्ध, धर्म, मुनियों समेत शरीर प्राप्त करनेवाले ब्रह्माजी, पर्वत, सागर, नदी, अप्सराओं के समूह ६ ग्रह, संवत्सर, अयन, ऋतु, स्थावर-जंगम सब जगत्, असुर ७ ये सब भारत में नियत दिखाई देते हैं। हे भरतर्षभ! उन सबके अवतार को सुनकर, नाम और कर्म के कहने से ८ मनुष्य घोर पाप करके भी उसके द्वारा शीघ्र पाप से निवृत्त होता है। इस इतिहास को विधिपूर्वक क्रम से सुनकर ९ नियमवान् शरीर से पवित्र हो पारायण करके उनका श्राद्ध करना उचित है १० हे भरतवंशिन्! सामर्थ्य और भक्ति के अनुसार नानाप्रकार के रत्न और महादान ब्राह्मणों को देने योग्य हैं ११ गौ, कांस्य–दोहनपात्र, अच्छी अलंकृत सब अभीष्ट गुणयुक्त कन्या, नाना प्रकार की खाने पीने की वस्तुएँ १२ विचित्र स्थान, पृथ्वी, वस्त्र, सुवर्ण, घोड़े, मदोन्मत्त हाथी और अनेक प्रकार की सवारियाँ देनी चाहिये १३ पलँग, पालकी, अच्छे अलंकृत रथ और घर के उत्तम वस्त्र, पृथ्वी से उत्पन्न रत्नआदिक १४ ये सब वस्तुएँ, अपना शरीर, स्त्री और पुत्र आदिक पर्यन्त ब्राह्मणों को देने चाहिये। क्रमपूर्वक बड़ी श्रद्धा से दिये गये विषय की सब विधि सुनो। भारत का पारगामी १५ शुद्धचित्त, प्रसन्नमुख,

सामर्थ्य के अनुसार सेवा करनेवाला, सन्देह से रहित, सत्य और सत्यवक्तृत्व में प्रवृत्त, जितेन्द्रिय, बाह्याभ्यन्तरीय पवित्रता से युक्त १६ श्रद्धावान् और क्रोधजित् होकर जिस प्रकार से सिद्ध होता है; उसको श्रवण करो। पवित्र, सुन्दर मधुरभाषी, आचारवान्, श्वेत वस्त्रधारी, इन्द्रियों का दमन करनेवाला १७ संस्कारी, सर्वशास्त्रज्ञ, श्रद्धावान्, पराये गुणों में दोष न लगानेवाला, स्वरूपवान्, ऐश्वर्ययुक्त, शिक्षित, सत्यवक्ता १८ कथा कहनेवाला ब्राह्मण, कथा के काम में दान और प्रतिष्ठा से कृपालु होता है। स्थिरचित्त और अच्छे प्रकार से आसन पर बैठा हुआ अच्छा सावधान वक्ता ब्राह्मण कथा कहे। विलम्ब से रहित, मन शीघ्रता रहित, धीरमूर्ति १६ और जिसके उच्चारण में अक्षर तथा पद स्पष्ट विदित हों, स्वरभाव तथा तिरेसठ वर्णों से युक्त, आठों स्थानों से कथित हो २० ऐसा वक्ता श्रीनारायण, नरोत्तम और सरस्वती देवी को नमस्कार करके इतिहास वर्णन करे २१ हे भरतवंशी राजा जनमेजय! ऐसे वक्ता से भारत की कथा सुननेवाला नियम में नियत, कानों को पवित्र करता हुआ फल पाता है २२ जो मनुष्य प्रथम पारणा करके ब्राह्मणों को उनकी अभीष्ट वस्तुओं से तृप्त करे, वह अग्निष्टोम यज्ञ का फल पाकर २३ अप्सराओं के समूहों सहित बड़ा उत्तम दिव्य विमान पाता है और आनन्दपूर्वक देवताओं के साथ विहार करता है २४ दूसरी पारणा करके अतिरात्र यज्ञ का फल पाकर सब रत्नों से जटित दिव्य विमान पर सवार होता है २५ दिव्य माला तथा पोशाकवाला, दिव्य सुगन्धियों से अलंकृत और दिव्य बाजूबन्द धारण कर वह पुरुष सदैव देवलोक में पूजित होता है २६ तीसरी पारणा पाकर द्वादशाह यज्ञ का फल पाता है। वह देवता के समान प्रकाशमान होकर अयुत वर्षों तक स्वर्ग में निवास करता है २७ चौथी पारणा में वाजपेय यज्ञ का और पाँचवीं पारणा में द्विगुणित यज्ञ का फल पाता है और उदित सूर्य के समान, देदीप्त अग्नि के सदृश

विमान में देवताओं के साथ सवार हो स्वर्ग में जाता है। वहां स्वर्ग के इन्द्रभवनों में अयुत वर्षों तक आनन्द करता है २८। २६ छठीं पारणा में दूना और सातवीं में तिगुना फल है। कैलासशिखर के समान वैडूर्यमणि की बेदीवाले ३० बहुत प्रकार से चलायमान, मणि-मूंगों से अलंकृत, स्वेच्छाचारी, अप्सराओं से संयुक्त विमान में सवार होकर ३१ दूसरे सूर्य के समान सब लोकों में घूमता है। आठवीं पारणा में राजसूय यज्ञ का फल पाता है ३२ उदय होनेवाले चन्द्रमा के समान प्रकाशमान सुन्दर विमान पर सवार होता है जो कि चित्त के समान शीघ्रगामी और चन्द्रमा की किरणों के समान प्रकाशित घोड़ों से युक्त ३३ तथा चन्द्रमुखी उत्तम स्त्रियों से भी सेवित होता है। श्रेष्ठ स्त्रियों के क्रोड़ में सुख से सोया हुआ वह पुरुष स्त्रियों की मेखला और नूपुरों के शब्दों से जागता है। हे भरतवंशिन्! नवीं पारणा में यज्ञों के राजा अश्वमेध का फल पाता है ३४। ३५ सुवर्ण स्तंभों से संयुक्त, वैडूर्य मणि से बनी हुई बेदीवाले, सब ओर दिव्य स्वर्णमय जाली-झरोखों से युक्त, अप्सराओं और स्वर्गचारी गन्धर्वों के समूहों से सेवित, विमान पर सवार होकर बड़ी शोभा से प्रकाशमान ३६। ३७ दिव्य माला और पोशाक धारण करनेवाला, दिव्य चन्दन से अलंकृत, दूसरे देवता के समान स्वर्ग में आनन्द करता है ३८ दशवीं पारणा पाकर ब्राह्मणों को नमस्कार करके, क्षुद्रघंटिकाओं के जाल से शब्दायमान, ध्वजा पताका आदि से शोभित ३९ रत्नों की बेदीवाले, वैडूर्य मणियों के बन्दनवारों से संयुक्त, स्वर्णमय जालों से चारों ओर व्याप्त, मूंगे और उत्तम पन्नों से बने हुए छज्जों से शोभित द्वारवाले ४० गानविद्या में कुशल, गन्धर्व और अप्सराओं से शोभायमान शुभकर्मियों के विमानों को सुख से पाता है ४१ अग्निवर्ण जाम्बूनद सुवर्ण से अलंकृत, मुकुट से शोभित, दिव्य चन्दन से लिप्ताङ्ग, दिव्य मालाओं से शोभित ४२ देवताओं की क्रियाओं के कारण बड़ी शोभा और दिव्य भोगों से युक्त वह

पुरुष दिव्य लोकों में घूमता है। वह पुरुष इसी प्रकार गन्धर्बों के साथ इक्कीस हज़ार वर्ष तक स्वर्गलोक में पूजित होता है ४३। ४४ और क्रीड़ा के योग्य अमरावती में इन्द्र के ही साथ विहार करता है। दिव्य विमानों की सवारी पाकर, नाना देशों की दिव्य स्त्रियों से व्याप्त हो देवताओं के समान निवास करता है। हे राजन्! फिर सूर्यलोक, चन्द्रलोक ४५। ४६ और शिवलोक में निवास करके विष्णुजी की सायुज्यता पाता है। महाराज! यह इसी प्रकार है, इसमें किसी प्रकार का विचार न करना चाहिए। मेरे गुरु का कथन है कि श्रद्धालु मनुष्य का ऐश्वर्यवान् होना सम्भव है और कथा कहनेवाले को वे सब पदार्थ देने चाहिए जिनको वह मन से चाहता है ४७। ४८ हाथी, घोड़ा, रथ, मुख्यकर दूसरी अनेक सवारियां, कुण्डल, कंकण, यज्ञोपवीत ४९ विचित्र पोशाक, अधिकतर चन्दन आदिक सुगन्धित वस्तुएँ देना योग्य है। जो उसको इस रीति से देवता के समान पूजता है, वह विष्णुलोक पाता है ५० हे राजन्! अब मैं वे वस्तुएँ बतलाता हूं, जो कथा की भेंट में वेदपाठी ब्राह्मणों को देने के योग्य हैं ५१ स्वर्गवासी क्षत्रियों की ज्ञाति, सत्यता, वृद्धता, धर्म और चलन को जानकर उनके नाम से ब्राह्मणों को देना उचित है। कथा के प्रारम्भ में प्रथम ब्राह्मणों से स्वस्तिवाचन कराके पर्व समाप्त होने पर अपनी सामर्थ्य के अनुसार ब्राह्मणों का पूजन करे ५२। ५३ हे राजन्! प्रथम पोशाक और सुगन्धित वस्तुओं से अलंकृत पौराणिक को विधिपूर्वक श्रेष्ठ तस्मई और मिष्टान्न भोजन करावे ५४ फिर मूलफलयुक्त तस्मई घी और शक्कर के साथ आस्तिक्य ब्राह्मण को खिलावे और (गुड़ौदन) भोजन की वस्तुएँ दान करे ५५ सभापर्व में अपूप और मोदक से युक्त (हविष्य) भोजन की वस्तु ब्राह्मणों को खिलावे ५६ वनपर्व के समाप्त होने पर मूल फलों से ब्राह्मणों को तृप्त करे और इसको समाप्त करके जलकुम्भों का दान करे ५७ उत्तम उत्तम

भोजन की वस्तुएँ वन के मूल फल और सब अभीष्ट गुणों से युक्त भोज्य पदार्थ वेदपाठी ब्राह्मणों को दे ५८ विराट्पर्व की समाप्ति में नाना प्रकार के वस्त्रों का दान दे। हे भरतर्षभ! उद्योगपर्व के समाप्त होने पर अभीष्ट गुणों से युक्त ५९ भोजन चन्दन और पुष्पमालाओं से अलंकृत वेदपाठी ब्राह्मणों को खिलावे और हे राजेन्द्र! भीष्मपर्व के अन्त में अनुपम सवारी का दान करके ६० सब गुणों से युक्त, श्रेष्ठ रीति से बनाई हुई भोजन की वस्तुएँ देना चाहिए। हे राजन्! द्रोणपर्व की समाप्ति में वेदपाठी ब्राह्मणों के लिये अच्छा भोजन ६१ पलँग, धनुष और उत्तम खड्ग देने योग्य हैं। सावधानचित्त मनुष्य कर्णपर्व के समाप्त होने पर सब उपकारी अभीष्ट वस्तुओं सहित ६२ अच्छी रीति से बना हुआ भोजन वेदपाठी ब्राह्मणों को दे। हे राजेन्द्र! शल्यपर्व समाप्त होने पर लड्डू, गुड़ौदन ६३ अपूप और सब खाने पीने की वस्तुएँ देवे। गदापर्व समाप्त होने पर मूंगयुक्त अन्न का दान करे ६४ स्त्रीपर्व की समाप्ति में ब्राह्मणों को रत्नों से तृप्त करे ६५ ऐषिकपर्व के आरम्भ में घृतौदन का दान करे, सर्वगुणयुक्त श्रेष्ठ रीति से बनाई हुई भोजन की वस्तुएँ देवे। शान्तिपर्व समाप्त होने पर ब्राह्मणों को (हविष्) घृतयुक्त वस्तुओं का भोजन करावे ६६ अश्वमेधपर्व को समाप्त करके सब अभीष्ट वस्तुओं से युक्त भोजन दे। आश्रमवासपर्व समाप्त होने पर भी ब्राह्मणों को हविष् भोजन करावे ६७ मुशलपर्व की समाप्ति में सर्वगुणयुक्त गन्धमाला और चन्दन आदि से प्रसन्न करे। महाप्रास्थानिकपर्व में सब अभीष्ट गुणयुक्त भोजन देवे ६८ और स्वर्गारोहणपर्व समाप्त होने पर ब्राह्मणों को हविष्यान्न भोजन करावे। हरिवंश की समाप्ति में हजार ब्राह्मणों को भोजन करावे ६९ और निष्क समेत एक गौ भी ब्राह्मण को दे। हे राजन्! यह कहा हुआ दान दरिद्री को भी आधापर्धा करना योग्य है ७० सावधान श्रोता प्रत्येक पर्व के समाप्त होने पर सुवर्ण

सहित पुस्तक कथा कहनेवाले को भेंट करे ७१ हे भरतवंशियों में श्रेष्ठ, राजा जनमेजय! हरिवंशपर्व के प्रत्येक पारण में विधिपूर्वक तस्मई के भोजन करावे। शास्त्र में सावधान, रेशमी अथवा सन की श्वेत पोशाक से अलंकृत, मालाधारी, अच्छा अलंकृत पुरुष शुभ देश में बैठकर सब पर्वों को समाप्त करके फिर नियम सहित न्याय के अनुसार गन्धमालाओं से संहिता की पुस्तकों की पृथक् पृथक् पूजा करे ७२ भक्षण की वस्तु मांस आदिक और पीने की वस्तु आदि अनेक प्रकार के शुभ मनोरथों से तृप्त करके सुवर्ण की दक्षिणा देवे ७३ यह मनुष्य अतिरात्र यज्ञ का फल पाता है, जो कि सब देवता और नर नारायण का कीर्तन करे; फिर गन्ध और मालाओं से उत्तम ब्राह्मणों को अच्छे प्रकार अलंकृत करके नाना प्रकार की अभीष्ट वस्तुओं सहित विविध दानों से तृप्त करे ७४।७५ हे भरतर्षभ! इस प्रकार शुद्ध तथा स्पष्ट अक्षरों और पदों का उच्चारण करनेवाला वक्ता ब्राह्मण भी हर एक पर्व में उसी प्रकार का फल पावेगा ७६ हे राजन्! जब वह ज्ञानी ब्राह्मण भविष्य समय से सम्बन्ध रखनेवाली इस भारत कथा को सुनावे तब श्रेष्ठ ब्राह्मणों के भोजन करने पर विधिपूर्वक दान देना योग्य है ७७ फिर वक्ता को अच्छी रीति से अलंकृत कर भोजन कराके, उसके प्रसन्न होने पर शुभ और उत्तम प्रीति होती है। ब्राह्मणों के प्रसन्न होने से सब देवता प्रसन्न हो जाते हैं ७८ हे भरतर्षभ! इसी कारण साधुओं की ओर से न्याय और पृथक् पृथक् विधि के अनुसार सब अभीष्ट वस्तुओं द्वारा ब्राह्मणों को तृप्त करना योग्य है ७९ हे श्रेष्ठ! यह विधि मैंने तुमसे कही। श्रद्धावान् से ही कर्म होना सम्भव है ८० हे नृपश्रेष्ठ, जनमेजय! परम कल्याण चाहने और सदैव उपाय करनेवाले मनुष्य को यह भारत श्रवण करना और पारण में उपाय करना चाहिये ८१ सदैव भारत को सुने और भारत का ही पाठ करे। जिसके स्थान में महाभारत